BED-08

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

पर्यावरणीय शिक्षा
Environmental Education

BED-08

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

पर्यावरणीय शिक्षा
Environmental Education

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक एवं सदस्य

संयोजक

डॉ. दामीना चौधरी

सह आचार्य, शिक्षा

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय. कोटा (राज.)

सदस्य

1. प्रो. पी. के. साहू
   शिक्षा विभाग
   इलाहाबाद विश्वविद्यालय (उप्र.)
2. प्रो. आर. पी. श्रीवास्तव (से.नि.)
   जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
3. प्रो. आर. जे. सिंह
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ प्र.)
4. प्रो. डी. एन. सनसनवाल
   देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
5. प्रो. एस. बी. मेनन
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
6. प्रो. स्नेह. एम. जोशी
   एम. एस. विश्वविद्यालय, बड़ौदा
7. प्रो. सोहनवीर सिंह चौधरी
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
8. डॉ. एम. एल. गुप्ता
   सह आचार्य शिक्षा (से. नि.)
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
9. डॉ. अनिल शुक्ला
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उप्र.)

संपादन एवं पाठ लेखन

संपादक

डॉ. एल. के. दाधीच

पर्यावरण विशेषज्ञ

प्राचार्य डॉ. राजकीय कन्या महाविद्यालय, झालावाड़

पाठ लेखक

- डॉ. एच. एम. सक्सेना
  कोटा
- श्रीमती नीलकमल राठौर
  झालावाड़
- शुचिता जैन
  कोटा
- डॉ. एम जेड. ए. खान
  कोटा
- डॉ. एल. सी. अग्रवाल
  कोटा
- डॉ. नीरजा श्रीवास्तव
  कोटा
- डॉ. जितेन्द्र वर्मा
  झालावाड़
- डॉ. के. के. शर्मा
  कोटा
- डॉ. संजीव भानावत
  जयपुर
- डॉ. बाबूलाल शर्मा
  कोटा
- डॉ. किशी लालवानी
  कोटा
- डॉ. सी.एस. चाचा
  कोटा
- डॉ. लीलेश गुप्ता
  कोटा
- डॉ. एम. पी. गुप्ता
  कोटा
- डॉ. मोहम्मद अख्तर खान
  कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. (डॉ) नरेश दाधीच	**प्रो. (डॉ.) एम. के. घडोलिया**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन : अप्रेल 2012 ISBN - 13/978–85–8496–336–6

सर्वाधिकार सुरक्षित : इस सामग्री के किसी भी अंश की वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में 'मिमियाग्राफी' (चक्रमुद्रण) के द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

कुलसचिव, व. म. खु. विश्वविद्यालय, कोटा द्वारा वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के लिये मुद्रित एवं प्रकाशित।

BED–08

पर्यावरणीय शिक्षा

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

अनुक्रमणिका

	इकाई	पृष्ठ संख्या
1.	पर्यावरण की अवधारणा Concept of Environment)	8
2.	पारिस्थितिकी संकल्पना, पारिस्थितिकी तंत्र अवधारणा विभिन्न घटक एवं परस्पर संबंध (Concept of Ecology, Ecosystem, Components of Ecosystem and interdependence)	21
3.	मानव का पर्यावरण से संबंध (Relationship of Man and Environment)	45
4.	पर्यावरण : पारिवारिक एवं व्यक्तिगत दायित्व (Personal and family responsibility about the Environment)	55
5.	आधुनिक सभ्यता की समस्याएं : जनसंख्या विस्फोट (Problems of modern civilization Population Explosion)	65
6.	पर्यावरण प्रदूषण (Environmental Pollution)	80
7.	प्राकृतिक संसाधनों का विलोपन – वन एवं वन्य जीवों के विलोपन के कारण एवं संरक्षण के उपाय (Deletion of Natural Resources : Causes and Measures for Conservation of Forest and Wild life)	106
8.	जल, ऊर्जा एवं मृदा प्रबंधन (Water, Energy and Soil Management)	124
9.	पर्यावरण शिक्षा – अर्थ, उद्देश्य, महत्व एवं दर्शन (Meaning, Objectives, importance and philosophy of Environment education)	133
10.	पर्यावरण का विस्तार, विविध विषयी क्षेत्र तथा अन्य विद्यालयी विषयों से अंर्तसंबंध (Scope of Environment Education - Multidisciplinary approach correlation with other school subjects)	142

11.	पर्यावरणीय शिक्षा एक विषय के रूप में, विभिन्न स्तर पर इसका पाठ्यक्रम (Environment Education as a Subject, it's Curriculum at different level)	149
12.	पर्यावरण शिक्षा के उपागम (Approaches of Environement education)	155
13.	पर्यावरण शिक्षा की शिक्षण विधियां (Teaching Methods of Environement education)	168
14.	पर्यावरण शिक्षा में फिल्मों, श्रव्य–दृश्य साधनों तथा बहु आयामी संप्रेषण का योगदान (Role of films, Audio visual Aids and Multimedia communications in Environment education	183
15.	विभिन्न संगठनों, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, विश्व प्रकृति निधि, वृक्ष मित्र गैर सरकारी संगठन तथा अन्य सरकारी संस्थाओं का योगदान (Role of different agencies UNEP, WWF, Friends of trees, NGO and other government organizations	192
16.	पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने हेतु विश्वस्तरीय प्रयासों की आवश्यकता (The need for global outlook to solve Environment Problems)	200

इकाई–1

CONCEPT OF ENVIRONMENT

पर्यावरण की अवधारणा

इकाई की रूपरेखा:–

1.1 उद्देश्य

1.2 पर्यावरण – अर्थ एवं परिभाषा

1.3 पर्यावरण के घटक

बोध प्रश्न – 1

1.4 पर्यावरण के लक्षण

1.5 भूमण्डलीय पर्यावरण अथवा जैवमण्डल

बोध प्रश्न – 2

1.6 पर्यावरण की समग्रता

1.7 पर्यावरण एवं मानव जीवन

बोध प्रश्न – 3

1.8 पर्यावरण का विषय क्षेत्र

1.9 महत्व एवं जन–जागृति की आवश्यकता

बोध प्रश्न – 4

1.10 पर्यावरण संरक्षण के अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास

1.11 भारत में पर्यावरण जन–जागृति

बोध प्रश्न – 5

1.12 सारांश

1.13 स्व मूल्यांकन प्रश्न

1.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.1 उद्देश्य :–

(1) इस इकाई की समाप्ति पर शिक्षार्थी पर्यावरण के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(2) शिक्षार्थी पर्यावरण का अर्थ जान सकेंगे और उसे परिभाषित कर सकेंगे।

(3) शिक्षार्थी पर्यावरण के घटक कौनसे हैं यह समझ सकेंगे।

(4) शिक्षार्थी पर्यावरण के भौतिक व जैविक घटकों में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।

(5) शिक्षार्थी पर्यावरण के विभिन्न लक्षणों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(6) शिक्षार्थी भूमण्डलीय पर्यावरण अथवा जैव मण्डल के बारे में जान सकेंगे।

(7) शिक्षार्थी पर्यावरण की समग्रता को समझ सकेंगे तथा पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने की आवश्यकता को जान पाएंगे।

(8) शिक्षार्थी पर्यावरण के विषय क्षेत्र के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(9) शिक्षार्थी पर्यावरण संरक्षण के राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों के बारे में जान सकेंगे।

1.2 पर्यावरण–अर्थ एवं परिभाषा

'पर्यावरण' पद (Term) दो शब्दों परि एवं आवरण से मिलकर बना है। इसका शाब्दिक अर्थ है परि यानि चारों तरफ एवं आवरण मतलब घेरा अर्थात् प्रकृति में जो भी हमारे चारों तरफ है, जैसे– पेड–पौधे, प्राणी, जल, वायु मिट्टी आदि सभी पर्यावरण के अंग हैं एवं ये सब मिलकर पर्यावरण बनाते हैं अर्थात् पर्यावरण भौतिक परिस्थितियों (जैसे प्रकाश, जल, वायु मृदा, आदि) का सम्मिश्रण है, जो जीवों को घेरे रहता है। किसी भी जीव के पर्यावरण में वे सभी भौतिक एवं जैवीय परिस्थितियाँ सम्मिलित होती हैं जो उसकी जीवन क्रियाओं को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करती हैं।

पर्यावरण को केवल भूमण्डल की वस्तुएँ जैसे वायु पहाड़, नदियाँ, वनस्पति, जन्तु आदि ही नहीं, वरन् ब्रह्माण्ड के अन्य ग्रह तथा उपग्रह भी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। इस प्रकार पर्यावरण का क्षेत्र बहुत ही व्यापक है। यूरोपीय देशों में घटित होने वाली दुर्घटना का प्रभाव एशिया तथा अफ्रीका के सुदूर स्थित देशों में भी सम्भव है। इसी प्रकार मंगल ग्रह अथवा चन्द्रमा उपग्रह पर होने वाली घटना का प्रभाव पृथ्वी पर अवश्यम्भावी है। इस प्रकार पृथ्वी के सन्दर्भ में पर्यावरण एक वृहद् इकाई के रूप में क्रियाशील होता है। यही कारण है कि इसको समृद्ध तथा अप्रदूषित रखने का दायित्व विश्व के सभी देशों का है। इस प्रकार पर्यावरण का व्यापक अर्थ है – जो तत्व हमें चारों ओर से घेरे हुए हैं, वही हमारा पर्यावरण है। इस घेरे में प्राकृतिक, भौतिक तथा सामाजिक प्रकार के तत्व सम्मिलित होते हैं।

पर्यावरण की परिभाषा:–

1. वेबस्टर (Webster) के लोकप्रिय अंग्रेजी शब्दकोष के अनुसार —— all the condition circumstances etc.surrounding, and affecting the development of an organism अर्थात् – वे सभी दशाएँ, परिस्थितियाँ, आदि जो एक जीव को घेरे रहती हैं तथा जो उसके विकास को प्रभावित करती हैं, पर्यावरण कहलाती हैं। दूसरे शब्दों में पर्यावरण से आशय उन घेरे रहने वाली परिस्थितियों, प्रभावों और शक्तियों से है, जो सामाजिक और सांस्कृतिक दशाओं के समूह द्वारा व्यक्ति और समुदाय के जीवन व विकास को प्रमावित करती हैं।
2. पर्यावरणविद् फिटिंग के अनुसार, "सजीवों का पारिस्थितिकीय योग ही पर्यावरण है।"
3. हर्सकोविट्स का मानना है कि, "पर्यावरण समूर्ण बाह्य परिस्थितियों और उनका जीवनधारियों पर पडने वाला प्रभाव है।"

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि पर्यावरण सजीवों के जीवन और विकास को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने वाली दशाओं का योग है।

1.3 पर्यावरण के घटक:–

किसी प्रदेश विशेष में पाए जाने वाले पेड–पौधे और जीव–जन्तु उस प्रदेश के भौतिक (Physical or Abiotic) पर्यावरण पर आश्रित होते हैं। इस प्रकार पर्यावरण के दो मुख्य घटक हैं – एक भौतिक (Abiotic) तथा दूसरे जैविक (Biotic) स्थल जल और वायु भौतिक घटक हैं, जबकि पेड–पौधे और छोटे–बडे सभी जीव–जन्तु जैविक घटकों के अन्तर्गत आते हैं। भौतिक घटक तथा जैविक घटक एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं (चित्र–1)।

प्राकृतिक पर्यावरण के भौतिक एवं जैविक घटक निम्नलिखित सारिणी में दिए गए हैं :

सारिणी

पर्यावरण के घटक

भौतिक	जैविक
1. जल	1. वनस्पति
2. मृदा	2. जन्तु
3. वायु	3. मानव
4. स्थलाकृति	
5. सौर ऊर्जा	
6. तापक्रम	
7. गुरूत्व	
8. अग्नि	

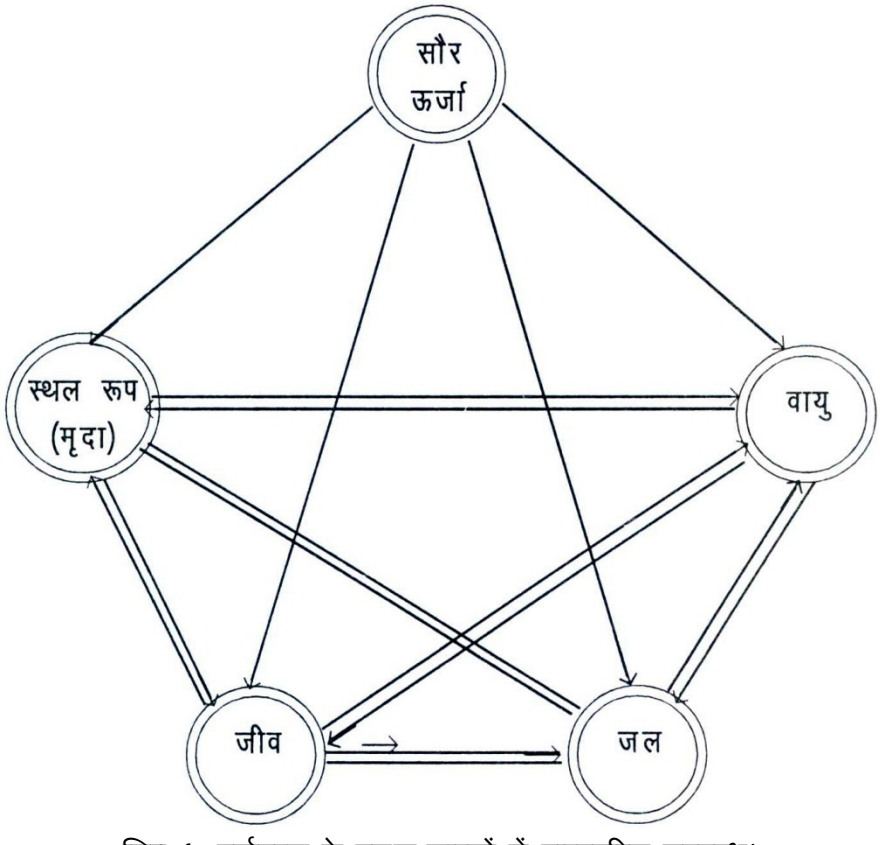

चित्र–1: पर्यावरण के प्रमुख कारकों में पारस्परिक सम्बन्ध।

अभी तक आपने पर्यावरण के अर्थ, परिभाषा एवं घटकों के बारे में पढ़ा है। अब आप निम्न प्रश्नों के उत्तर दे सकते है।

बोध प्रश्न-1

1. पर्यावरण से क्या अभिप्राय है?
2. वेबस्टर के अँग्रेजी शब्दकोष के अनुसार पर्यावरण की क्या परिभाषा है?
3. पर्यावरण के दो मुख्य घटक कौनसे हैं?
4. पर्यावरण के भौतिक घटकों मे सम्मिलित तत्वों के नाम लिखो?
5. पर्यावरण के जैविक घटकों मे सम्मिलित तत्वों के नाम लिखो?

1.4 पर्यावरण के लक्षण:–

पर्यावरण के प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं :

1. जीवों के चारों ओर की वस्तुएँ पर्यावरण बनाती हैं :
   विभिन्न स्थानों पर पेड–पौधे एवं जीव–जन्तुओं का पाया जाना क्षेत्र विशेष की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। सजीव शब्द (Vaccum) में नहीं रहते हैं, वे स्थल पर, पानी में या हवा में पाए जाते हैं। उनके आस–पास पाए जाने वाली प्रत्येक चीज उनका पर्यावरण बनाती है।
2. पर्यावरण की अपेक्षा आवास स्थान (Habitat) विशिष्टतम होता है :
   विशेष क्षेत्र या स्थान जहाँ सजीव रहते हैं उसे आवास स्थान (Habitat) कहते हैं। सम्पूर्ण पर्यावरण की अपेक्षा आवास स्थान विशिष्टतम होता है।
3. पर्यावरण में जीवों का परस्पर सहवास अनिवार्य लक्षण है:
   प्रकृति में कोई भी जीव अकेला जीवन व्यतीत नहीं करता है। पृथ्वी पर विविध जीव इतने अधिक संख्या में हैं कि किसी भी स्थान पर निवास करने वाले किसी भी जीव का, दूसरे अनेक जीवों के साथ सहवासित होना एक अनिवार्यता होती है। पर्यावरण तथा जीव एक–दूसरे से जुडे हुए हैं। पर्यावरण से पृथक किसी जीव की कल्पना भी असम्भव है। समस्त प्राणी भोजन के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में हरे पादपों पर निर्भर करते हैं। अनेक पादप भी प्राणियों पर निर्भर करते हैं। उदाहरणार्थ – वे पादप जिन्हें परागण (Pollination) के लिए कीटों (Insects) की आश्यकता होती है। अत: प्रकृति में कोई भी जीव जन्तु सहवासी जीवों की उपेक्षा कर जीवित नहीं रह सकता है।
4. भौतिक अथवा जैविक घटक पर्यावरण के महत्वपूर्ण भाग हैं :
   भौतिक घटकों के बिना जीवन सम्भव नहीं है। अत: जैव मण्डल में भौतिक घटक, जैसे – जल, मृदा, वायु स्थलाकृति, सौर उर्जा, तापक्रम आदि आवश्यक तत्व हैं।
5. पर्यावरण एक खुला तन्त्र है :
   पर्यावरण एक खुला तन्त्र है जिसमें परस्पर विभिन्न पदार्थो का विनिमय होता ही रहता है।
6. सजीव पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति अनुकूलता उत्पन्न करते हैं
   पर्यावरण का सजीवों के जीवन में बड़ा महत्व होता है। अपना व्यक्तित्व बनाए रखने के लिए उनमें विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति सतत् सामंजस्य (Adjustment) आवश्यक होता है।

1.5 भूमण्डलीय पर्यावरण अथवा जैवमण्डल:–

पृथ्वी के चारों ओर के उस क्षेत्र को जिसमे जीवन सम्भव है, जैव मण्डल (Biosphere) कहते हैं। इसे ही भूमण्डलीय पर्यावरण (Global Environment) कहते हैं। यह भूमण्डलीय पर्यावरण निम्नलिखित तीन उपखण्डों का बना होता है.

1. जलमण्डल
2. थलमण्डल
3. वायुमण्डल

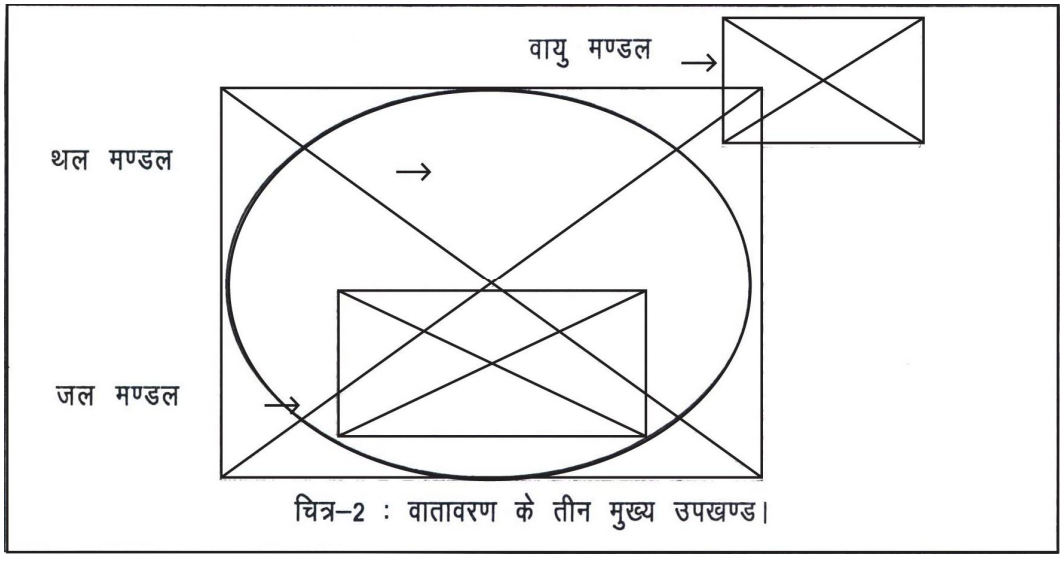

चित्र–2 : वातावरण के तीन मुख्य उपखण्ड।

जलमण्डल में पृथ्वी पर पाए जाने वाले महासागर, झीलें, नदियाँ आदि सम्मिलित किए जाते हैं। थलमण्डल में महाद्वीपों के चट्टानी पदार्थ सम्मिलित हैं। वायुमण्डल गैसीय आवरण है जो जल व थलमण्डल को चारों ओर से ढके हुए है। भूमण्डल पर पाए जाने वाले सजीवों को जलमण्डल जल, थल मण्डल खनिज पदार्थ एवं वायुमण्डल ऑक्सीजन, नाईट्रोजनएकार्बन–डाइ–ऑक्साइड आदि गैसें उपलब्ध कराता है।

अभी तक आपने पर्यावरण के लक्षण एवं भूमण्डलीय पर्यावरण अथवा जैव मण्डल के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त की है।

अब आप निम्न प्रश्नों के उत्तर दे सकते हैं :

बोध प्रश्न-2

1. पर्यावरण के मुख्य लक्षण कौन-कौन से हैं?
2. पर्यावरण तथा आवास स्थान मे क्या अंतर है?
3. क्या पर्यावरण मे जीवों का परस्पर सहवास अनिवार्य लक्षण है?
4. जैव मण्डल किसे कहते हैं?
5. भूमण्डलीय पर्यावरण के तीन उपखंडों के नाम बताइये?

1.6 पर्यावरण की समग्रता :–

इस पृथ्वी पर समस्त जीव पारस्परिक सम्बंध से तथा योजनाबद्ध रूप से पर्यावरण से जुड़े हुए हैं। हर जाति, प्रजाति का पर्यावरण में अपना महत्त्व है एवं किसी भी जीव का पर्यावरण से अलग जीवन सम्बंध नहीं है। ये सभी जीव पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होते हैं एवं परस्पर अन्योन्य क्रिया के कारण पर्यावरण को भी प्रभावित करते हैं। सामान्य शब्दों में अजैविक और जैविक घटक पर्यावरण से अलग नहीं हैं तथा पर्यावरण इन घटकों से अलग नहीं हैं। इसी सम्बन्ध को पर्यावरण की समग्रता कहा जाता है। दूसरे शब्दों में पर्यावरण में प्रत्येक वस्तु प्रत्येक दूसरी वस्तु को प्रभावित करती है। वास्तव में मनुष्य जीवन उपयोगी साधनों की उपलब्धता पर्यावरण से ही है। पर्यावरण, मानव–जीवन तथा परिस्थितिकी आपस में एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं।

अगर इन तीनों में से एक पर प्राकृतिक अथवा कृत्रिम कुप्रभाव पड़े तो स्वत: ही दूसरे पर इसका प्रभाव आंका जा सकता है। जहाँ पर मानव जीवन का प्रश्न है उसमें जीवन उपयोगी तत्व जैसे हवा, मृदा, जल, उर्जा सभी पर्यावरण से प्राप्त होते है।

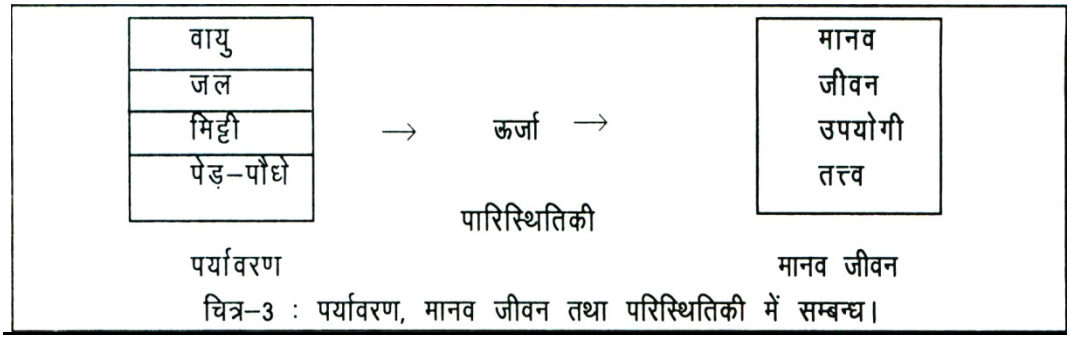

चित्र–3 : पर्यावरण, मानव जीवन तथा परिस्थितिकी में सम्बन्ध।

1.7 पर्यावरण एवं मानव जीवन :–

पृथ्वी पर लगभग 10 लाख वर्ष पूर्व आज का मानव प्राणी व्यक्तित्व में आया। पृथ्वी की जलवायु में जीवन के विकास की परम्परा करोडों वर्षो से चली आ रही है एवं मानव के व्यक्तित्व के बाद विकास में बहुत प्रगति हुई है। मानव भी अन्य जीवों की तरह पर्यावरण का अंग है परन्तु मानव में अन्य जीवों की तुलना में अपने चारों तरफ के पर्यावरण को प्रभावित तथा कुछ अर्थो में उसे नियंत्रित कर पाने की पर्याप्त क्षमता है।

प्राचीन समय में मानव पर्यावरण के साथ अंगीभूत था। उसने प्रकृति के साथ अपना समन्वय बैठाकर स्वयं को उसके अनुसार समायोजित कर लिया तथा उसमें परिवर्तन की चेष्टा नहीं की। परन्तु बीसवीं सदी के आते–आते मानव ने भौतिक, आर्थिक व जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अप्रत्याशित गति से विकास क्रिया। जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई क्योंकि चिकित्सा के प्रसार से बीमारियों पर काफी हद तक नियंत्रण पा लिया। खाद्यान आवश्यकताओं के लिए जंगलों को काट–काट कर कृषि कार्य शुरू किए गए। खेती भी उन्हीं फसलों की की जाने लगी जिनसे अधिक आर्थिक लाभ हो व जिसे मानव पसन्द करता था। इसी शताब्दी में विज्ञान तथा प्रौद्योगिक क्षेत्र में तो एक क्रांति ही आ गई जिससे पर्यावरण में अनियंत्रित प्रदूषण फैलता गया। औद्योगिक विकास ने सुख–सुविधा व भौतिक विलास की सभी सुविधाएँ तो उपलब्ध कराई किन्तु मनुष्य की

शारीरिक परिश्रम करने की प्रवृत्ति कम हो गई तथा प्रदूषण की गर्त ने स्वास्थ्य को प्रभावित किया।

वर्तमान में यह लगता है कि विकास के साथ ही विनाश की प्रक्रिया जुडी हुई है। प्रगति का मूल्य हमने पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न करके चुकाया है। पर्यावरण प्रदूषण दिन–प्रतिदिन बढता जा रहा है। जल प्रदूषण एवं वायु प्रदूषण, वनों का विनाश, घटते वन्य जीव, विकिरण के जैवीय दुष्प्रभाव, कृषि रसायनों द्वारा प्रदूषण, अस्थिर पारिस्थितिक तन्त्र, जनसंख्या में असामान्य वृद्धि इसी विकास का परिणाम है। यह सभी व्यक्तिगत तथा सामाजिक पर्यावरण को न समझ पाने तथा मानव एवं पर्यावरण की परस्पर क्रिया–प्रतिक्रिया के तालमेल के अभाव के कारण हुआ है।

अत: आवश्यकता पुन: परिस्थितिक संतुलन बनाने की है। पर्यावरण से स्वतंत्र होने के प्रयास में मनुष्य पर्यावरण पर अधिकाधिक निर्भर होता चला गया है। पर्यावरण को पुन: अनुकूल बनाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों के उचित उपयोग, प्रदूषण को नियंत्रित करने की तथा जनसंख्या व विकास को पर्यावरण के साथ संतुलित करने की अहम् जरूरत है।

अभी तक आपने पर्यावरण की समग्रता तथा पर्यावरण एवं मानव जीवन के बारे में पढ़ा है।

अब आप निम्न प्रश्नों के उत्तर दे सकते हैं :

बोध प्रश्न–3

1. पर्यावरण की समग्रता से आप क्या समझते हैं?
2. मानव जीवन उपयोगी तत्व, जैसे–हवा, मिट्टी, जल, उर्जा आदि कहाँ से प्राप्त करता है?
3. मानव विकास के साथ ही पर्यावरण विनाश की प्रक्रिया जुडी हुई है। क्या आप उक्त कथन से सहमत हैं? यदि हाँ तो क्यों?

1.8 पर्यावरण का विषय क्षेत्र :–

पर्यावरण अध्ययन एक विस्तृत व बहुआयामी विषय है। इसमें जैवमण्डल के तीनों परिमण्डलों जलमण्डल, स्थलमण्डल एवं वायुमण्डल के संघटन एवं संरचना का अध्ययन सम्मिलित है।

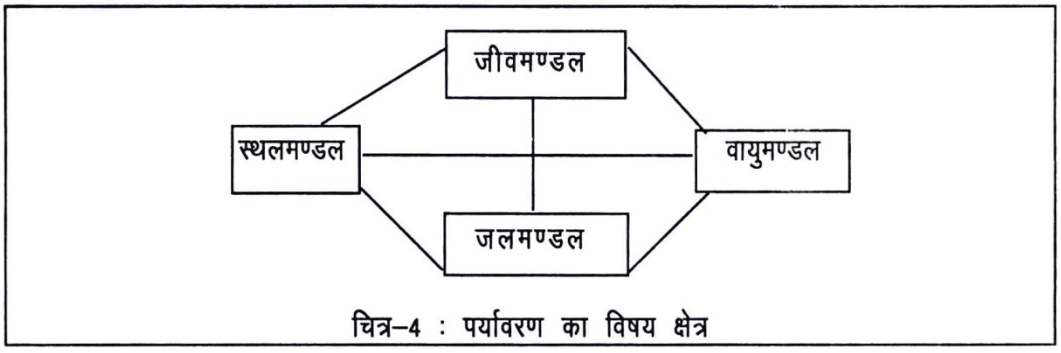

चित्र–4 : पर्यावरण का विषय क्षेत्र

पर्यावरण अध्ययन की विषयवस्तु में पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के विविध घटकों, इनके परिस्थितिकीय प्रभावों, मानव–पर्यावरण सम्बन्धों का अध्ययन सम्मिलित क्रिया जाता है। इसके अलावा इसमें पर्यावरणीय अवनयन, प्रदूषण, नगरीकरण, पर्यावरण संकट, पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण प्रबन्धन का अध्ययन क्रिया जाता है।

निम्नलिखित कुछ मानवीय गतिविधि के क्षेत्र हैं जिनमें पर्यावरण की जानकारी होना अत्यन्त आवश्यक है :

स कृषि का क्षेत्र :–

रासायनिक कीटनाशक, खरपतवार नाशक व उर्वरक हमारे पर्यावरण को दूषित करते हैं। परन्तु दूसरी ओर फसलों को बढ़ाते हैं तथा उनकी रक्षा करते हैं। इनके दुष्परिणामों की जानकारी पर्यावरण अध्ययन करने पर हमें आसानी से मिल जाती हैं।

स पर्यावरण व उद्योग धन्धे :–

विभिन्न उद्योगों के द्वारा उत्सर्जित अपशिष्ट चाहे गैसीय हो तरल हो या ठोस हो, वातावरण की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। कुछ अपशिष्ट विषैले होते हैं व कुछ अविषैले। इनके दुष्प्रभवों के अध्ययन से उन अपशिष्टों के उत्सर्जन की अधिकतम सीमा का ज्ञान व किस प्रकार के उपचार से इस उत्सर्जन को कम हानिकारक बनाया जाए का ज्ञान होता है।

स विकासात्मक गतिविधियाँ व पर्यावरण –

उद्योग के अलावा विकास के लिए बाँध, सड़के बनाई जाती हैं। इनसे भी पर्यावरण प्रभावित होता है। बाँध बनाने से बहते जल का आवास स्थिर जलीय आवास में बदल जाता है। जलीय जीवों को प्रवास की सुविधा नहीं मिलती। इस प्रकार हम कह सकते है कि प्रत्येक विकासात्मक गतिविधि का एक विनाशात्मक पहलू भी होता है, जिसका अध्ययन पर्यावरणीय अध्ययन का विषय क्षेत्र है।

स पर्यावरण एवं वाहन उद्योग :–

वाहनों के द्वारा पर्यावरण का प्रदूषण अधिक होता है। प्रदूषण मुक्त तकनीक द्वारा इस पर नियंत्रण क्रिया जा सकता है।

स पर्यावरण व अन्तरिक्ष :

विज्ञान की बढ़ती हुई उड़ान ने पर्यावरण को बिगाड़ने मे मी योगदान दिया है। उपरोक्त वर्णन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पर्यावरण के अध्ययन की अनेक क्षेत्रों में उपादेयता है।

1.9 महत्व एवं जन - जागृति की आवश्यकता:–

पर्यावरण अत्यन्त जटिल एवं विशाल है। इस पर पड़ने वाले प्रभावों को रोकने के लिए प्रत्येक व्यक्ति का जागरूक होना जरूरी है। मानव विकास के लिए स्वच्छ तथा संतुलित पर्यावरण की आवश्यकता होती है। प्रौद्योगिक विकास ने पर्यावरण को प्रदूषित कर दिया है। यदि प्रदूषण रोकने के उपाय नहीं किए गए तो पृथ्वी पर जीवन मुश्किल हो जाएगा। अत: मानव के विकास के लिए पर्यावरण सम्बन्धी पक्षों की ज्यादा समय तक उपेक्षा करना संभव नहीं है। इसके लिए पर्यावरण सम्बन्धी ज्ञान को सभी तक पहुँचाकर जन–जन को जागृत करने की आवश्यकता है।

पिछले पृष्ठों में आपने पर्यावरण के विषय क्षेत्र तथा जन–जागृति की आवश्यकता एवं महत्व के बारे में जानकारी प्राप्त की।

अब आप निम्न प्रश्नों के उत्तर दे सकते हैं:

बोध प्रश्न-4

1. पर्यावरण के अध्ययन के विषय क्षेत्र मे क्या-क्या सम्मिलित हैं?
2. कृषि के क्षेत्र मे पर्यावरण की क्या उपयोगिता है ?
3. पर्यावरण के बारे मे जन जागृति की आवश्यकता क्यों है ?

1.10 पर्यावरण संरक्षण अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास :–

विश्व मे प्रत्येक स्तर पर वैज्ञानिकों व सामाजिक शोधकर्ताओं ने विभिन्न अभियानों के अन्तर्गत पर्यावरण संरचना का बोध करवाने के प्रयास आरम्भ कर दिए। इस जन जागृत में कुछ संस्थाएँ काम कर रही हँ, जैसे – ग्रीन पीस संस्था (Green Piece Society), पृथ्वी के मित्र (Friends of Earth) तथा विश्व वन्य निधि (World Wide Life Fund) आदि।

पर्यावरण के संरक्षण पर ही जून 1972 में स्वीडन की राजधानी स्टॉकहोम में विश्व पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन क्रिया गया। इसी सम्मेलन में एक ही पृथ्वी के सिद्धान्त को मानकर पर्यावरण के सम्बन्ध में स्टॉकहोम घोषणा–पत्र–1972 (Stockhom Declaration–1972) स्वीकार क्रिया गया। इसी सम्मेलन में 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस स्वीकार क्रिया गया। सन् 1977 में तिबिलिसी सम्मेलन (Tibilisi Conference) में पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों व निर्देशन सिद्धान्तों का प्रादुर्भाव हुआ।

सन् 1992 (3–14 जून) में संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा पृथ्वी सम्मेलन (Earth Summit) रियो दी जेनिरियो में आयोजित हुआ। यह सम्मेलन पर्यातरण संरक्षण की दिशा में एक मील का पत्थर साबित हुआ।

पर्यावरण –चेतना व संरक्षण के लिए अन्तराष्ट्रीय स्तर पर चलाए जा रहे निम्न कार्यक्रम महत्वपूर्ण हैं:–

1. संयुक्त राष्ट्रसंघ का पर्यावरण कार्यक्रम
   (United Nations Environment Programm–U.N.E.P)
2. यूनेस्को का मनुष्य तथा जैवमण्डल कार्यक्रम
   (Man and Biosphere programme–UNESCO)
3. विश्व वन्य जीव कोष
   (World Wild Life–WWF)
4. अन्तर्राष्ट्रीय भू–मण्डल जैविय कार्यक्रम
   (International Geosphere Biological Programme–IGBP)

उपर्युक्त संगठन अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण चेतना एवं संरक्षण के लिए विचार विमर्श शोध कार्यक्रमों और पर्यावरण के अवबोध (Perception) में कार्यरत हैं।

1.11 भारत में पर्यावरण जन–जागृति:–

भारत में पर्यावरण जन–जागृति के सन्दर्भ में 1972 का स्टॉकहोम सम्मेलन मील पत्थर सिद्ध हुआ । इसके बाद भारत में पर्यावरण नियोजन एवं समचय समिति (N.C.E.P.) का गठन

किया गया जिसका प्रमुख कार्य पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं को पहचानना, उनका समाधान ढूँढना तथा कार्यक्रमों की समीक्षा करना था।

भारत सरकार ने स्टॉकहोम सम्मेलन से प्रेरित होकर 1980 में पर्यावरण विभाग की स्थापना की। इसके उपरान्त अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम (I.E.E.P.) के तहत अनेक कार्यशालाओं व संगोष्ठियों का आयोजन क्रिया गया।

भारत में पर्यावरण चेतना के लिए अनेक आन्दोलन हुए, उनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं:

1. खेजडली आन्दोलन – राजस्थान में वर्षो पहले खेजडली नामक स्थान पर वृक्षों की रक्षा करने में अनेक महिला–पुरूषों ने अपनी जान गंवाई थी।
2. चिपको आन्दोलन – यह आन्दोलन वर्तमान में उत्तराखण्ड राज्य के चमौली जिले की रैनी ग्राम में सन् 1973 में प्रारम्भ हुआ था। इसका मुख्य उद्देश्य वृक्षों की रक्षा करना था। बाद में इस आन्दोलन ने पर्यावरण के सभी आयामों को सम्मिलित कर लिया। यह आन्दोलन प्रसिद्ध पर्यावरणविद् सुन्दर लाल बहुगुणा द्वारा चलाया गया था।
3. एप्पिको आन्दोलन – चिपको आन्दोलन की तर्ज पर दक्षिण भारत में एप्पिको नाम से सन् 1983 में एक आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। कन्नड में एप्पिको का मतलब चिपको है। यह आन्दोलन कर्नाटक के पाण्डुरंग हेगड़े के नेतृत्व में हुआ। इसका मूल उद्देश्य वन रोपणए वन विकास तथा वन संरक्षण रहा।
4. नर्मदा बचाओ आन्दोलन – यह आन्दोलन नर्मदा घाटी की जैव विविधता को बचाने तथा मूल आदिवासियों के सांस्कृतिक पर्यावरण की रक्षा के लिए सन् 1985 से मेघा पाटेकर के नेतृत्व में चलाया जा रहा है। इसके साथ अब अरुंधति राय तथा बाबा आम्टे भी हो गए हैं।
5. शान्त घाटी आन्दोलन – यह आन्दोलन केरल मे हुआ। शान्त घाटी केरल में उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वनो का क्षेत्र है जो समृद्ध जैव विविधता रखता है। यहाँ पर जल विद्युत परियोजना की स्थापना के विरोध में तथा पश्चिमी घाट के वनो एवं जैव विविधता संरक्षण के लिए आन्दोलन हुआए जिसके परिणामस्वरूप सरकार को अपना निर्णय बदलकर वही राष्ट्रीय आरक्षित वन क्षेत्र घोषित करना पड़ा।

अभी तक आपने पर्यावरण संरक्षण के अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास तथा भारत में पर्यावरण जन–जागृति व भारत में पर्यावरण चेतना हेतु हुए विभिन्न आन्दोलनों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त की।

अब आप निम्न प्रश्नों के उत्तर दे सकते हैं :

बोध प्रश्न-5

1. विश्व मे जन-जागृति से जुड़ी कुछ संस्थाओं के नाम बताइए।
2. विश्व पर्यावरण दिवस कब मनाया जाता है?
3. पर्यावरण चेतना व संरक्षण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चलाये जा रहे मुख्य कार्यक्रम कौन-कौन से हैं?
4. खेजड़ली आंदोलन से आप क्या समझते हैं?
5. चिपको आंदोलन को चलाने वाले प्रसिद्ध पर्यावरणविद् का नाम क्या है?
6. शान्त घाटी आंदोलन किस राज्य से संबन्धित है?

1.12 सारांश:–

हमें चारों ओर से घेरे हुए भौतिक व जैविक तत्व पर्यावरण बनाते हैं। ये भौतिक व जैविक तत्व पर्यावरण के घटक कहलाते हैं। स्थल, जल, वायु आदि भौतिक एवं पेड–पौधे व सभी जीव–जन्तु जैविक घटकों के अन्तर्गत आते हैं। पर्यावरण के प्रमुख लक्षण हैं – जीवों के चारों ओर की वस्तुएँ पर्यावरण बनाती हैं, पर्यावरण की अपेक्षा आवास स्थान विशिष्टतम होता है य पर्यावरण में जीवों का परस्पर सहवास अनिवार्य लक्षण है य भौतिक अथवा जैविक घटक पर्यावरण के महत्वपूर्ण भाग हैं, पर्यावरण एक खुला तंत्र है, सभी सजीव पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति अनुकूलता उत्पन्न करते हैं। भू–मण्डलीय वातावरण जीव उपखण्डों जलमण्डल, थलमण्डल व वायुमण्डल से बना होता है। पृथ्वी पर पर्यावरण की समग्रता पाई जाती है। इस पृथ्वी पर सभी जीव–जन्तु व पेड–पौधे पारस्परिक तथा योजनाबद्ध रूप से जुडे हुए हैं। पृथ्वी पर पारिस्थितिक संतुलन बनाने की आवश्यकता है। पर्यावरण से स्वतंत्र होने के प्रयास में मनुष्य पर्यावरण पर अधिकाधिक निर्भर होता चला गया है। पर्यावरण अध्ययन में जलमण्डल, स्थलमण्डल एवं वायुमण्डल के संघटन व संरचना, पर्यावरणीय अवनयन प्रदूषण, पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण प्रबन्धन का अध्ययन क्रिया जाता है। पर्यावरण संरक्षण के लिए जन–जागृति की आवश्यकता है। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण के लिए विभिन्न प्रयास किए जा रहे हैं।

1.13 स्व मूल्यांकन प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. वे सभी तत्व, दशाएँ. परिस्थितियाँ आदि जो एक जीव को घेरे रहती हैं तथा जो उसके परिवर्धन को प्रभावित करती हैं, कहलाती हैं:

(अ) स्थलमण्डल (ब) वायुमण्डल

(स) पर्यावरण (द) जैवमण्डल

All the elements, conditions, circumstances etc. surrounding and affecting the development of organism is called as:

(a) Lithosphere (b) Atmoshphere

(c) Environment (d) Biosphere

2. विश्व पर्यावरण दिवस कब मनाया जाता हैं:

(अ) 6 जून (ब) 5 जून

(स) 12 जून (द) 18 जून

The'World Environmental Day' is celebrated on:

(a) 6 June (b) 5 June

(c) 12 June (d) 18 June

3. चिपको आन्दोलन किसने प्रारम्भ क्रिया:

(अ) हीरा लाल बहुगुणा (ब) अन्ना हजारे

(स) सुन्दर लाल बहुगुणा (द) मेघा पाटेकर

Who started the 'Chipko Movement':

(a)Heera lal Bhaguna (b)Anna Hajare

(c)Sundarlal Bhuguna (d)Megha Patkar

4. निम्न में से कौनसा पर्यावरण का जैविक घटक है :

(अ) जल (व) तापक्रम

(स) वायु (द) जन्तु

Of the following which is a biotic component:

(a) water (b) Temperature

(c) Air (d) Animal

उत्तर :– 1.(स) (c) 2.(ब) (b) 3.(स) (c) 4.(द) (d)

लघुत्तरात्मक प्रश्न:–

1. पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ क्या है?
   What is the literally meaning of 'Environment?
2. पर्यावरण के जैविक घटक कौन से है?
   Which are the biotic component of Environment?
3. शान्त घाटी आन्दोलन के बारे में संक्षेप में बताइए?
   Write briefly about 'Silent Valley Movement'.
4. जैव मण्डल किसे कहते हैं?
   What is 'Biosphere'?

निबन्धात्मक प्रश्न:–

1. पर्यावरण का अर्थ बताइए तथा इसे परिभाषित कीजिए।
   Give meaning of 'Environment' and define it.
2. पर्यावरण के घटकों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
   Describe the components of environment in detail.
3. पर्यावरण के विभिन्न लक्षणों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
   Describe the different characteristics of environment.
4. जैव मण्डल से आप क्या समझते हैं? इसके उपखण्डों के नाम लिखिए।
   What do you understand by 'Biosphere'? Write names of sub–divisions of 'Biosphere'

5. पर्यावरण की समग्रता के दृष्टिकोण से आप क्या समझते हैं?
   What do you mean by the concept of 'Totality of Environment'
6. पर्यावरण अध्ययन के विषय क्षेत्र का वर्णन कीजिए ।
   Explain scope of Environmental study
7. पर्यावरण के महत्व व जन–जागृति की आवश्यकता पर एक वर्णनात्मक लेख लिखिए।
   Write an explainatory note on importance of Enviroment and public awareness.
8. पर्यावरण संरक्षण हेतु किए जा रहे राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
   Write an explainatory note on importance of Environment and public awarnencess.

1.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1.	अग्रवाल,एल ॰सी॰	:	जैव भूगोल, रोहिणी जयपुर (2002)
2.	भाटिया, कोहली एवं स्वरूप	:	पर्यावरण जैविकी, रमेश बुक डिपो, जयपुर (2005)
3.	दाधीच एवं शर्मा	:	बायोडाइवर्सिटी : स्ट्रेटेजीज फॉर कंजर्वेशनए ए. पी. एच.पब्लिशिंग कार्पोरेशन, नई दिल्ली (2002)
4.	सक्सेना, एच॰एम॰	:	पर्यावरण एवं प्रदूषण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर (1995)
5.	सक्सेना, एच॰ एम॰	:	एनवार्यमेन्टल ज्योग्राफी, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर (2004)
8.	सिंह, सविन्द्र	:	पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद (2005)
7.	शर्मा एवं जोशी	:	पर्यावरण अध्ययन, रोहिणी बुक्स, जयपुर (2006)
8.	शर्मा, पी॰डी॰	:	पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ (2004)

इकाई–2

Concept of Ecology,Ecosystem,Components of Ecosystem and interdependence

पारिस्थितिकी संकल्पना पारिस्थितिकी तंत्र अवधारणा विभिन्न घटक एवं परस्पर संबंध

इकाई की रूपरेखा :

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 पारिस्थितिकी संकल्पना

2.3.1 पारिस्थितिकी की संरचनात्मक संकल्पना (वर्णनात्मक पारिस्थितिकी)

2.3.2 पारिस्थितिकी की क्रियात्मक संकल्पना (क्रियात्मक परिस्थितिकी)

2.3.3 विकास वाद पारिस्थितिकी

2.3.4 पारिस्थितिकी के प्रमुख उप विभाग

2.3.5 संगठन के स्तरों पर आधारित पारिस्थितिकी

बोध प्रश्न–1

2.4 पारिस्थितिकी तंत्र

2.4.1 पारिस्थितिकी तंत्र की संकल्पना

2.4.2 पारिस्थितिकी तंत्र के प्रकार

2.4.3 पारिस्थितिकी तंत्र का महत्व

2.4.4 पारिस्थितिकी तंत्र के अभिलाक्षणिक गुण

बोध प्रश्न–2

2.5 पारिस्थितिकी तंत्र की संरचना एवं घटक

बोध प्रश्न–3

2.6 पारिस्थितिकी तंत्र के कार्य

2.6.1 ऊर्जा का प्रवाह

2.6.2 खाद्य शृंखला

2.6.3 खाद्य जाल

2.6.4 पोषण स्तर

2.6.5 पारस्परिक सम्बन्ध

2.6.6 क्रियात्मक चक्रिय सन्तुलन

2.6.7 पारिस्थितिकी पिरामिड

बोध प्रश्न–4

2.7 विभिन्न प्रकार के पारिस्थितिक तंत्र

2.7.1 स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र

2.7.2 वन पारिस्थितिकी
2.7.3 घास के मैदान का पारिस्थितिकी तंत्र
2.7.4 मरूस्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र
2.7.5 जलीय पारिस्थितिकी तंत्र
2.7.6 शुद्ध (स्वच्छ) जल पारिस्थितिकी तंत्र
2.7.7 तालाब पारिस्थितिकी
2.7.8 समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र
2.8 सारांश
2.9 स्व मूल्यांकन प्रश्न
2.10 संदर्भ ग्रन्थ

2.1 उद्देश्य :–

इस इकाई के अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित है :–

1. इसके अध्ययन से आप यह समझ पायेंगे कि पर्यावरण के जैविक एवं अजैविक घटकों की पारस्परिक अन्योन्य क्रियाओं का पारस्परिक तालमेल क्यों आवश्यक है।
2. आप यह समझ पायेंगे कि प्रकृति में संतुलन के लिए जैव विविधता संरक्षण, ऊर्जा. प्रवाह खनिज चक्रण की क्यों आवश्यकता है। इसके अध्ययन से आप पारिस्थितिकी संकल्पनाओं को एवं पारिस्थितिकी के अध्ययन क्षेत्रों को समझ सकेंगे।
3. आप यह समझ पायेगे कि मनुष्य अपनी आवश्यकता आपूर्ति हेतु पारिस्थितिकी तंत्र के घटकों को किस प्रकार उपयोग कर सकते है साथ ही इनका रख रखाव किस प्रकार कर सकते है।

2.2 प्रस्तावना :–

जीव विज्ञान के अनेक आधारभूत क्षेत्रों में से पारिस्थितिकी भी एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इसको समझने के लिए पर्यावरण की जानकारी अत्यन्त आवश्यक है। पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ परि (चारों ओर) + आवरण (घेरा) = चारों और का घेरा या आवरण। पर्यावरण से तात्पर्य समस्त अजैविक कारकों से है जो प्रत्येक जीव पर परोक्ष या अपरोक्ष रूप से प्रभाव डालते है। पर्यावरण परिवर्तनशील होता है। पृथ्वी पर पाये जाने वाले जैविक (पेड–पौधे, जीव–जन्तु के वितरण को पर्यावरण प्रभावित करता है।

पारिस्थितिकी (इकोलोजी) मूल जर्मन शब्द Oekologic ग्रीक शब्द Oikos से व्युत्पन्न है। Oikos + logos आवास और अध्ययन अर्थात् जीवों का उन्हीं के आवास स्थान पर अध्ययन है। जर्मन जीव विज्ञानी अर्नेस्ट हैकल ने इस शब्द की व्याख्या की थी :– ओडम ने प्रकृति की संरचना एवं प्रकार्य के अध्ययन को पारिस्थितिकी कहा भारत के प्रमुख पारिस्थितिकी विज्ञान डॉ. मिश्रा के अनुसार जीवों के आकार, प्रकायों तथा कारकों की अन्योन्यक्रियाओं का अध्ययन ही पारिस्थितिकी है। डॉ. आर मिश्रा को भारत में परिस्थितिकी के जनक के रूप में पहचाना जाता है।

पारिस्थितिकी की मूल संकल्पना में इसके संरचनात्मक स्वरूप का वर्णन क्रिया जाता है। इसमें पारिस्थितिकी तंत्र को शामिल करने से पारिस्थितिकी को क्रियात्मक दृष्टि से बल मिलता

है। पारिस्थितिकी की आधुनिक अवधारणाओं में पारिस्थितिकी तंत्र का मुख्य स्थान है। इसमें जन्तु पारिस्थितिकी एवं पादप पारिस्थितिकी का विकास हुआ है। लेकिन दोनों ही समूहों के अध्ययन के सिद्धान्त में समानता है, साथ ही अलग–अलग होकर भी परस्पर सम्बन्धित है। अन्योन्यश्रय दर्शाते हे। पारिस्थितिकी वास्तव में सभी प्रकार के जीवों एवं उनके पर्यावरण के बीच आपसी सम्बन्धों और निर्भरता को दर्शाती है।

2.3 पारिस्थितिकी संकल्पना :–

2.3.1 पारिस्थितिकी की संरचनात्मक संकल्पना (वर्णनात्मक पारिस्थितिकी) :–

सभी जीवित जीवधारी और उनका पर्यावरण परस्पर संबंधित है एवं एक दूसरे पर अनेक प्रकार से प्रभाव डालते है। पर्यावरण अनेक परस्पर सम्बद्ध कारकों का जाल है, बहुत जटिल है। इसमें जातियों अपने जेनेटिक पूल के सरंक्षण द्वारा बढ़त एवं विकास करती है, अपनी सरंचना, क्रिया और, प्रजनन में एक रूपता बनाऐं रखती है। साथ ही संरचनात्मक एवं क्रियात्मक रूप से बदलते पर्यावरण में समायोजन भी दर्शाती है। जीवों की गतिविधियों से पर्यावरण में परिवर्तन हो रहा है विभिन्न प्रकार के जीवों के विकास के क्रम को अनुक्रमण कहते है। समुदाय की चरम अवस्था जो कि स्वयं को वातावरण के संतुलन में समायोजित कर सकती है, Climax या चरम अवस्था कहते है। क्लीमेन्ट्स और शेल्फोर्ड ने "बायोम" की अवधारणा प्रस्तुत की समान जल वायवीय स्थितियों में एक से अधिक समुदाय कुछ चरमावस्था को पहुंचते हुऐ और शेष अनुक्रमण के विभिन्न चरणों में एक साथ विकसित हो सकते है। एक ही जलवायु से संबंधित यह अनेक समुदायों का मिश्रण जिसमें विभिन्न जन्तु पेड–पौधें है। उपर्युक्त विवरण में पारिस्थितिकी की मूल अवधारणा का संरचनात्मक स्वरूप स्पष्ट हुआ है। इसके क्रियालक स्वरूप में पारिस्थितिकी तंत्र की संकल्पना से संरचनात्मक एव क्रियात्मक स्वरूप को बल मिला।

2.3.2 पारिस्थितिकी की क्रियात्मक संकल्पना (क्रियात्मक परिस्थितिकी):–

प्रकृति की मूल संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई "इकोसिस्टम" है। अनेक जीव ईकाइयाँ वयोम सहित अनेक समष्टि एवं समुदायों से बनती है। प्रत्येक समष्टि विशिष्ट एवं क्रियात्मक दृष्टि से अर्न्तक्रिया दर्शाती है। जीवों के मध्य विशेष स्तर की अन्तर एवं आंत्तर जातिय क्रियाऐं घटती, बढ़ती या शून्य होती रहती है। एवं नियत आवास में अनुक्रमण स्थिती का निर्धारण करती है। Population Ecology या समष्टिविज्ञान में एक ही जाति के सदस्यों को शामिल किया जाता है। इसके अंतर्गत जीवों का अर्न्तजातिय एवं अन्तराजातिय अन्त: क्रियाओं को समझाया जाता है।

ऊर्जा गति की पारिस्थितिकी तंत्रों में ऊर्जा मुख्य संवाहक बल होने के कारण इनमें ऊर्जा गति सम्मिलित रहती है। ऊर्जा का प्रवाह एक दिशीय होता है। सूर्य की प्रकाश ऊर्जा को उत्पादक (स्वयं पोषी) रासायनिक उर्जा (कार्बनिक पदार्थ) में परिवर्तित करते है। यह ऊर्जा भोजन के रूप में परपोषी (उपभोक्ता) स्तर पर हस्तांतरित हो जाती है। यह ऊर्जा का प्रवाह अचक्रिय तथा एक दिशीय है। पारिस्थितिकी तंत्रों के रासायनिक घटक निर्धारित जैव रासायनिक चक्रों में गति करते है, खनिजों का चक्रीकरण आवश्यक है। जीवों का विकास सीमाकारों कारकों द्वारा नियंत्रित होता है। एक ही जाति के सभी पारिस्थितिकी कारकों की गहनशीलता का न्यूनतम व अधिकतम स्तर मौसम, भूगोल और जनसंख्या आयु के आधार पर पीरवर्तित होता है। प्रकृति में विभिन्न प्रकार की समष्टि का अनुत्क्रमण होता है। सरल से विषम की और भौतिक परिवर्तन के साथ – साथ

सर्वोच्च स्थैतिक संतुलित अवस्था (Climax) चरमावस्था अपने वातावरण, आवास के प्रति अधिक सहनशील समायोजित होती है।

2.3.3 विकास वाद पारिस्थितिकी :–

वर्तमान में जीव पेड–पौधों, पूर्वजों से विकसित हुऐ है। विकास के चरणों में पर्यावरण के साथ सभी जैविक घटक अन्योन्यक्रिया दर्शाते है। अनुकूलता, सहनशीलता के साथ पर्यावरण के अनुसार समायोजित करते है। विकास की प्रक्रियाओं को समझकर विभिन्न परिस्थितियों में भविष्य में होने वाले परिवर्तनों का अनुमान लगाया जा सकता है। मानव द्वारा पारिस्थितिकी तंत्र का शोषण, विभाजन अपनी आवश्यकता पूर्ति हेतु क्रिया जाता है। मानव पारिस्थितिकी इसे "'एप्लाइड इकोलोजी" कहा जाता है। इसका तात्पर्य पारिस्थितिकी संकल्पनाओं का मानव गतिविधियों के सन्दर्भ में वर्णन करना है। उन मानदण्डों, नियमों का निर्धारण करना है, जिनके द्वारा मनुष्य पारिस्थितिकी तंत्र से अपनी आवश्यकताओं को सुस्थिर प्रकार से पूर्ण कर सकते है। मानव द्वारा परिवर्तित पारिस्थितिकी तंत्र नियंत्रित Managed कहलाते है। एवं मानव गतिविधियों से मुक्त पारिस्थितिकी तंत्र प्राकृतिक कहलाते है।

2.3.4 पारिस्थितिकी के प्रमुख उप विभाग :–

1. स्व पारिस्थितिकी–इसके अंतर्गत एक ही जाति विशिष्ट उसके पर्यावरण से सम्बंध का अध्ययन करते है। 2. सपारिस्थितिकी–जीवों के समूहों (समुदाय) से सम्बन्धित पारिस्थितिकी है यह समुदाय घटक, संगठन, इसके विकास से संबंधित पर्यावरण एवं अन्योन्य क्रियाओं को दर्शाती है। 3. आवासीय पारिस्थितिकी–आवास पर आधारित पारिस्थितिकी है। उदाहरणः–घास का मैदान, जलीय इत्यादि ।

2.3.5 संगठन के स्तरों पर आधारित पारिस्थितिकी :–

1. समष्टि पारिस्थितिकी – अध्ययन की इकाई समष्टि (Population) होती है। समष्टि में जाति विशेष सदस्यों में परस्पर स्पर्धा एवं समुदायों में समष्टि की विभिन्न जातियों के सदस्यों के आपसी संबंध का अध्ययन करते है। 2. समुदाय पारिस्थितिकी – अध्ययन की इकाई समुदाय है। दो या दो से अधिक विभिन्न समष्टियों का समूह समुदाय कहलाता है। इसे परस्पर निर्भरता का अध्ययन कहते है। 3. बायोम पारिस्थितिकी – प्रकृति में दो या अधिक जटिल समुदायों का समूह में पारस्परिक क्रियाओं का अध्ययन करते है। 4. पारिस्थितिकी पारिस्थितिकी - (Ecosystem Ecology) यह पारिस्थितिकी का विकसित क्षेत्र है। यह संरचनात्मक एवं क्रियात्मक दोनों पहलुओं **की जानकारी देता है। इसे इकोतंत्र/पारिस्थितिकी तंत्र भी कहते है। यह सबसे जटिल** संपारिस्थितिकीय क्षेत्र है। इसे आधुनिक पारिस्थितिकी में (Bioenergetic approach) बॉयो ऐनेजेटिक एप्रोच भी कहते है। इसमें जैविक, अजैविक, भौतिकी ऊर्जा गति की नियमों, रसायन चक्रों का महत्व है। प्रकृति में संतुलन इसी तंत्र द्वारा नियंत्रित है। इसमें मुख्य तीन क्रियाविधियां (सीमाऐ) है जिनके द्वारा स्थिरता का निर्धारण होता है। 1. Carrying capacity of Environment (पर्यावरण की वहन क्षमता) 2. व्यर्थ पदार्थो के पुनः चक्रण की दक्षता 3. फीड बेक नियंत्रण एक स्व नियंत्रित प्रणाली है, इसमें एक जाति के जीवित घटक दूसरी जाति के जीवित घटकों की वृद्धि पर प्रभाव डालते है। यह फीडबेक नियंत्रण है। यह दो प्रकार का होता है:–

घनात्मक फीड बेक - पेड–पौधों (उत्पादक) संख्या वृद्धि से शाकाहारी समष्टि की वृद्धि होती है। इससे मांसाहारी स्तर पर भी वृद्धि होती है। आधारीय पोषण स्तर घनत्व में वृद्धि से अन्य स्तर भी विकसित होते है तथा ऋणात्मक फीडबेक – किसी जाति विशिष्ट जीवों की संख्या के बढ़ने से परस्पर अन्तरजातिय स्पर्धा बढ़ती है। इससे यदि शिकारी स्तर में बढ़ोत्तरी होती है तो शिकार हो रहे जीवों की संख्या स्वत: ही नियंत्रित हो जाएगी -

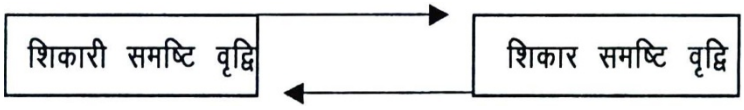

पारिस्थितिकी तंत्र में फीड बेक नियंत्रण

5. पारिस्थितिकी अनुवांशिकी :– अनुवांशिकी के सन्दर्भ में पारिस्थितिकी अध्ययन किया जाता है। अर्न्तजातिय वर्ग का (इकेड, इकोटाइप) जम्पिंगजीन, ट्रान्सपोसोन्स इत्यादि का अध्ययन क्रिया जाता है। 6. साईटों पारिस्थितिकी कोशिका विज्ञान के सन्दर्भ में पारिस्थितिकी का अध्ययन किया जाता है।

बोध प्रश्न-1

1. पारिस्थितिकी में पारिस्थितिकी तंत्र के महत्व को समझाइये?
2. पारिस्थितिकी के क्रियात्मक स्वरूप के मुख्य बिन्दुओं पर प्रकाश डालिए?
3. पारिस्थितिकी तंत्र की आधुनिक संकल्पना के मुख्य बिन्दु लिखिए?
4. पारिस्थितिकी एवं पारिस्थितिकी तंत्र में सम्बद्धता समझाईये?
5 मानव पारिस्थितिकी क्या है, इसके अध्ययन क्षेत्र लिखिये?
6. बायोम एवं बायोस्कीपर को परिभाषित कीजिए?

2.4 पारिस्थितिकी तंत्र:–

2.4.1 पारिस्थितिकी तंत्र की संकल्पना :–

पारिस्थितिकी में पारिस्थितिकी तंत्र एक क्रियात्मक इकाई है। क्योंकि जीवन निर्वाह के लिए जैविक घटक और पर्यावरण, दोनों का एक दूसरे पर प्रभाव पडता है। टेन्सले (1935) ने सबसे पहले पारिस्थितिकी तंत्र शब्द का प्रयोग क्रिया । उनके अनुसार पारिस्थितिकी वतावरण में सभी जीवित व निर्जीव कारकों के पारस्परिक क्रिया के परिणामस्वरूप बने तंत्र को पारिस्थितिकी तंत्र कहते है। पर्यावरण में पादप व जंतुओं के समुदाय एक दूसरे पर निर्भर रहते है।

पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) का शाब्दिक अर्थ, इको = आवस तथा सिस्टम = तंत्र, (क्रिया की अन्योन्याश्रय जटिलता) किसी भी क्षेत्र का पूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र जिसमें पादप जंतु आपस में एक इकाई के रूप में रहते है जिनका एक दूसरे से पारस्परिक संबंध होता है। पदार्थो व ऊर्जा का एक स्तर से दूसरे स्तर में गमन होता है। विभिन्न पारिस्थितिकी विद्वानों ने अनेक परिभाषाऐं दी है जिसने कतिपय निम्नलिखित है :

ओडम (1971) :– वह इकाई जिसमें एक विशेष क्षेत्र के भौतिक पर्यावरण में उपस्थित सभी सजीव पारस्परिक क्रिया करते है। अत: तंत्र के अंदर पदार्थ चक्र (Material cycle) जैविक

विभिन्नताऐं व पोषण संबंधी स्तर (Tropical structure) के माध्यम से ऊर्जा का प्रवाह स्पष्ट तौर पर दिखाई देता है। माइकल एलाबे (1983) :– पर्यावरण में अन्योन्याश्रयी (Interdependant) सजीव का समुदाय एक दूसरे से मिलकर रहते है, पारिस्थितिकी तंत्र कहलाता है। टेलर के अनुसार पारिस्थितिकी तंत्र प्राणियों के उन सभी सम्बन्धों को कहते है जो उनके सम्पूर्ण पर्यावरण से रहता है। जी.एल.क्लॉवि के अनुसार पारिस्थितिक तंत्रो में वे पारिस्थितिकी प्रणालियाँ सम्मिलित होती है, जिनसे पौधे एवं जीव जन्तु अपने पर्यावरण से एक दूसरे के फीड बेक चक्र के रूप में जुडे रहते हे।

पारिस्थितिकी तंत्र साधारण रूप वाला होता है जिसमें पर्यावरण में पादप व जंतु एक दूसरे पर निर्भर रहते हो। पारिस्थितिकी का महत्वपूर्ण आधार अन्योन्याश्रय है। पारिस्थितिकी तंत्र में घटकों की पारस्परिक क्रियाऐं व अन्योन्याक्रिया है जो कि एक दूसरे से जुड़ी हुई व खुली होती है। पारिस्थितिकी तंत्र का तालाब के जल की एक बूंद जितना छोटा (सूक्ष्म पारिस्थितिकी तंत्र) अथवा समुद्र जितना बड़ा हो सकता है। यह अस्थायी प्रकृति, जैसे :– फसल की उपज का क्षेत्र या शुद्ध जलाशय अथवा स्थायी प्रकृति वाले, जैसे :– समुद्र, वन का हो सकता है। एक संतुलित जल जीव कुंड की कल्पना कृत्रिम, स्थाई, स्वयं के द्वारा स्थापित पारिस्थितिकी तंत्र के रूप में की जा सकती है। जल जीव कुंड पूर्णतया स्वयं, पर्याप्तता 'वाला पारिस्थितिकी तंत्र है जो प्रकृति में बहुत ही दुर्लभता से पाया जाता है।

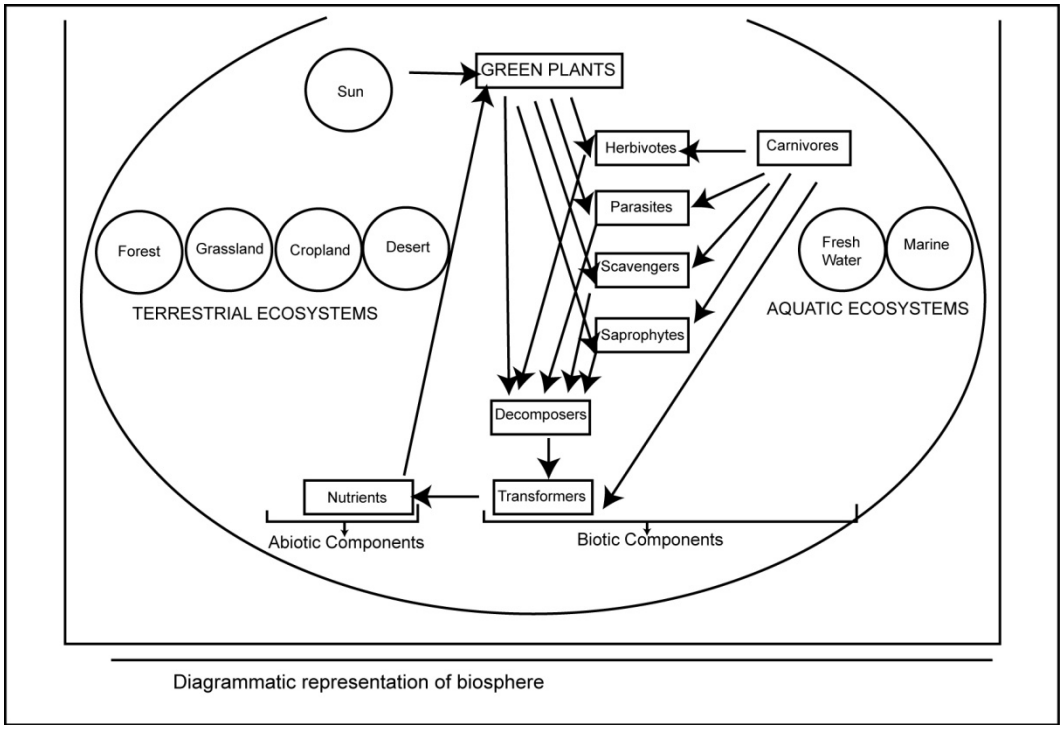

Diagrammatic representation of biosphere

सभी पारिस्थितिकी तंत्र समय और स्थान के अनुसार एक दूसरे से भिन्न होते है। परन्तु इनके कार्य एक समान होने के कारण एक रूपता दर्शाते है। पृथ्वी स्वयं एक बहुत बड़ा पारिस्थितिकी तंत्र (बायोस्फीयर) है जहां जैविक व अजैविक घटक एक दूसरे से क्रिया करते है।

इस बायोस्फीयर में अनेक छोटे पारिस्थितिकी तंत्र होते है जैसे – वन, रेगिस्तान, घांस के मैदान, फसल, शुद्ध जलीय व समुद्री तटीय पारिस्थितिकी तंत्र।

2.4.2 पारिस्थितिकी तंत्र के प्रकार :–,

पारिस्थितिकी तंत्र निर्माण के आधार पर प्राकृतिक व कृत्रिम हो सकते है।

1. प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र :– यह तंत्र बिना मानव हस्तक्षेप के तथा प्राकृतिक परिस्थितियों के अन्तर्गत कार्य करते है। आवासीय परिस्थितियों के आधार पर इन्हें पुन: वर्गीकृत क्रिया जा सकता है :– स्थलीय आवस में वन, घास के मैदान, रेगिस्तान आदि शामिल है। तथा जलीय में शुद्ध जल (स्वच्छ जल) झरने के रूप में बहता जल, नदी स्त्रोत या झील, तालाब, जलाशय, दलदल आदि स्थिर जल स्त्रोत या छिछला जल, मुहाना आदि शामिल किये जाते है।
2. कृत्रिम :– मानव द्वारा निर्मित पारिस्थितिकी तंत्र जहां उर्जा की आवश्यकता व संरचना प्रबंधन नियन्त्रित होता है। इसमें प्राकृतिक संतुलन में लगातार हस्तक्षेप होता है। जैसे :– फसल उत्पादन पारिस्थितिकी तंत्र। विभिन्न आधारों पर पारिस्थितिकी तंत्र का वर्गीकरण निम्न प्रकार क्रिया गया है।

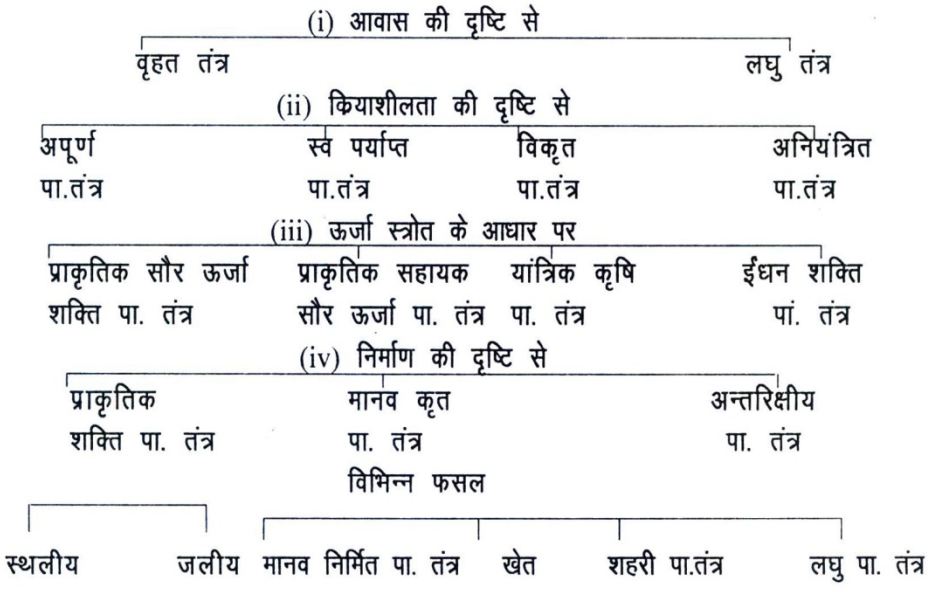

1. रेगिस्तान
2. घांस का मैदान
3. वन क्षेत्र

1. झरना
2. नदी
3. पोखर
4. समुद्र
5. झील

2.4.3 पारिस्थितिकी तंत्र का महत्व :–

पारिस्थितिकी तंत्र एक खुला तंत्र है जिसमें ऊर्जा पदार्थो के स्तर व जन समूह का आप्रवासन में भिन्नता होती है। पारिस्थितिकी तंत्र का अध्ययन निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण है:–

1. यह क्षेत्र में प्राप्य सौर ऊर्जा की कुल मात्रा के बारे में सूचना प्रदान करता है।

2. यह खनिज तत्वों की प्राण योग्यता, उपयोग, व पुर्नचक्रण के आँकड़े इंगित करता है।
3. जैविक व अजैविक पर्यावरण के बीच क्रियाओं तथा केवल सजीवों के बीच होने वाली क्रियाओं की सूचना प्रदान करता है।
4. इससे वैज्ञानिक प्रदूषण, प्राकृतिक स्त्रोत व उसके संरक्षण के बारे में जानकारी एकत्र कर है।
5. यह उत्पादक व उपभोक्ता तथा उत्पादकता की सूचना प्रदान करता है।

2.4.4 पारिस्थितिकी तंत्र के अभिलाक्षणिक गुण :–

1. यह पारिस्थितिकी की मुख्य संरचनात्मक व क्रियात्मक इकाई है।
2. इसकी संरचना जातिय विभिन्नता से संबंधित है। जटिल पारिस्थितिकी तंत्र में उच्चजाति विभिन्नता पाई जाती है साथ में जैविक व अजैविक घटकों की विभिन्नताऐं पाई जाती है।
3. तंत्र में ऊर्जा प्रवाह एक दिशीय एवं पोषक पदार्थो का खनिज चक्रण पारिस्थितिकी तंत्र के मूल सिद्धान्त है जो कि इसे गतिशीलता देते है।
4. पारिस्थितिकी तंत्र के रख–रखाव के लिए आवश्यक ऊर्जा की सम्बन्धित मात्रा उसकी संरचना पर निर्भर करती है।
5. यह स्वनियंत्रित गतिशील तंत्र है।

बोध प्रश्न-2

1. पारिस्थितिकी तंत्र को परिभाषित कीजिए?
2. पारिस्थितिकी तंत्र के प्रमुख कारकों को सूचीबद्ध कीजिए?
3. बायोस्फीयर को परिभाषित कीजिए? यह मानव से किस प्रकार संबंधित है?
3. पारिस्थितिकी तंत्र के विशिष्ट गुणों को बिन्दुवत लिखिए?

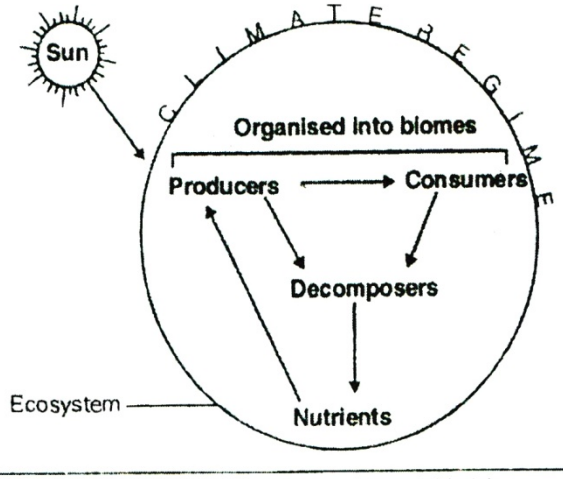

Presentation of living (biotic) and non-living (abiotic) components. They are interacting with each other to form integrated ecosystem – Ecosystem ecology.

2.5 पारिस्थितिकी तंत्र की संरचना एवं घटक:–

पारिस्थितिकी तंत्र में सजीवों का समुदाय व अजैविक कारक दोनों ही प्रकृति के घटक है। इसमें पर्यावरण से जुडे घटक शामिल किये जाते है, जो निम्नलिखित है :–

उत्पादक, उपभोक्ता व विघटनकारी –

सभी पारिस्थितिकी तंत्र चाहे भूमिगत, शुद्ध जल, समुद्र या मानव निर्मित हो, दो मुख्य घटकों (जैविक व अजैविक) से बने होते है।

जैविक सजीव घटक इनमें सभी सजीव सम्मिलित है

- स्वयंपोषी या उत्पादक :– हरे पौधे व कुछ प्रकाश संश्लेषी पौधों या रसायन संश्लेषी जीवाणु सूर्य के प्रकाश को रासायनिक ऊर्जा में बदल सकते है। यह ऊर्जा पादपों की वृद्धि व विकास के लिए आवश्यक है। श्वसन के लिए सभी सजीवों द्वारा आवश्यक आक्सीजन प्रकाश संश्लेशण क्रिया से उप – उत्पादक के रूप में उत्पादित होती है। अत: हरे पौधे उत्पादक कहलाते है। क्योंकि ये पादप सभी दूसरे जीवों के लिए भोजन देतें है, इन्हैं स्वयंपोषी भी कहते है। वैक्टीरिया के अलावा उत्पादक वातावरण में कार्बन डाइआक्साइड व आक्सीजन का संतुलन भी बनाए रखते है। ये स्वयंपोषी खाद्य श्रंखला का प्रथम पोषण स्तर बनाते है। श्वसन व दहन से निकली कार्बन डाइआक्साइड को गृहण करके आक्सीजन को पर्यावरण में छोड़ते है एवं संतुलन बनाए रखते है।
- परपोषी – सजीवों का यह समुदाय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भोजन के लिए स्वयंपोषियों पर निर्भर करता है, ये पादप (उत्पादपों) द्वारा निर्मित भोजन गृहण करते है। इन्हें दो समूह में बांटा गया है:–
- गुरु उपभोक्ता :– इस श्रेणी में वे जंतु आते है जो दूसरे जीवों व पादपों का भक्षण करते है ये दो प्रकार के होते है – शाकाहारी व मांसाहारी ।
- शाकाहारी प्राणी को प्राथमिक उपभोक्ता भी कहते है। ये पादपों पर प्रत्यक्ष रूप से निर्भर रहते है। यह समुदाय बहुत बडा हो सकता है, जैसे :– खरगोश, हिरण, मवेशी, बकरी, घोडे, इत्यादि । पौधे के भिन्न–भिन्न भागों के गृहण करने के आधार पर शाकाहारी जंतु को भी विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है। ये खाद्य श्रंखला का द्वितीय पोषण स्तर बनाते है।
- मांसाहारी जंतु दूसरे जंतुओं के मांस पर निर्भर रहता है। वे मांसाहारी जंतु जो शाकाहारी जंतुओं को अपना भोजन बनाते है उन्हें द्वितीयक उपभोक्ता या प्राथमिक मांसाहारी कहते है तथा मांसाहारी जंतुओं का यह समूह जो द्वितीयक उपभोक्ता का भक्षण करता है उसे तृतीयक उपभोक्ता कहते है। इस श्रंखला के अंत में वे बड़े मांसाहारी जीव सम्मिलित है जिन्हें दूसरे जानवर मार कर नहीं खा पाते । ऐसे मांसाहारी जीवों को गुरू उपभोक्ता कहते है, जैसे :– सिह, चीता, बाघ आदि । उदाहरण के लिए कीट (जैसे ग्रास होपर), तनों व पत्तियों का भक्षण करने वाले जंतु (जैसे :– गाय. बकरी, हिरण, खरगोश) पौधों के विभिन्न भागों एवं पादप उत्पादों को गृहण करने वाले जीव प्राथमिक उपभोक्ता कहलाते है। मांसाहारी, जैसे :– मेढक, (द्वितीयक उपभोक्ता) शाकाहारी जंतुओं को भोजन बनाते है तथा सांप मेढक को खाकर श्रंखला का तृतीयक उपभोक्ता बनाते है।

- सूक्ष्म उपभोक्ता :– इस श्रृखंला में परजीवी, विघटनकारी (अपघटनकारी) तथा अपमार्जक (Scavenger) सजीव सम्मिलित है।
- परजीवी – ये सजीव पोषण स्तर के जीवों से भोजन प्राप्त करते है। परजीवियों की उपस्थिति से भोजन प्रदाता में बीमारी उत्पन्न होती है। अपमार्जन जीव :– अपामर्जक जैसे केंचुआ, मिलिथोड आदि कार्बनिक स्त्रोत से भोजन प्राप्त करते है। बहुत से परपोषी सजीव मृत अवशेषों से भी भोजन प्राप्त करते है इन्हें स्केवेंजर कहते है। अपघटनकारी :– ये परजीवी व मृतोपजीवी सजीव सूक्ष्मजीव (वैक्टिरिया या कवक) प्रकृति के होते है। अपघटनकारी मृत अवशेषी या जीवद्रव्य के जटिल घटकों को अकार्बनिक खनिजों में बदलते है। ये अकार्बनिक खजिन पुन: वातावरण में पहुंच कर प्राथमिक उत्पादकों के लिए उपलब्ध होते है तथा पुन: वातावरण व उत्पादकों के बीच खनिज चक्र प्रारम्भ कर देते है। सजीवों का यह वर्गीकरण पारिस्थितिकी तंत्र के पोषण प्राप्ति स्तर तथा खनिज स्त्रोतों के प्रकार पर आधारित है। जिसमें उत्पादक–उपभोक्ता के समान्य ऊर्जा स्त्रोत पर निर्भर करता है। इस तन्त्र में प्रत्येक भोजन स्तर पोषण स्तर के रूप में जाना जाता है। भिन्न–भिन्न पोषण स्तर में सजीव पदार्थो की मात्रा एक फसल के समरूप जानी जाती है। यह शब्द जंतु व पादप दोनों के लिए प्रयोग में आता है।

अजैविक घटक :–

संरचनात्मक अजैविक घटकों में निम्नलिखित स्त्रोत सम्मिलित है -

- भौतिक कारक :– प्रकाश, ताप. पवन, नमी मृदा भूमि की भैगोलिक परिस्थितियां आदि।
- अकार्बनिक तत्व :– इसमें जल, खनिज व गैसें सम्मिलित है। कार्बनिक तत्वों के संश्लेषण के लिए अकार्बनिक तत्वों की आवश्यकता होती है। वातावरण में खनिज चक्रीय अवस्था में उपस्थित रहते है। जैविक तत्व जीवों की मृत्यु के बाद अपघटन सरल अकार्बनिक तत्वों में परिवर्तित होकर पुन: मृदा में मिल जाते है। इसे जैव–रासायनिक चक्र ठपवहमवबीमउपबंसद्ध कहते है।
- कार्बनिक तत्व :– कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा ह्यूमस अम्ल आदि तत्व जैविक घटकों को अजैविक घटकों के साथ जोडते है।

बोध प्रश्न-3

1. विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्रों के बीच सीमा निर्धारण सरल नहीं है समझाईये?
2. पारिस्थितिकी तंत्र में उत्पादकों के महत्व पर प्रकाश डालिए?
3. पारिस्थितिकी तंत्र स्वयं नियंत्रित तंत्र है समझाईये?
4. पारिस्थितिकी तंत्र, पारिस्थितिकी के मुख्य बिन्दुओं को सूचीबद्ध कीजिए?

2.6 पारिस्थितिकी तंत्र के कार्य:–

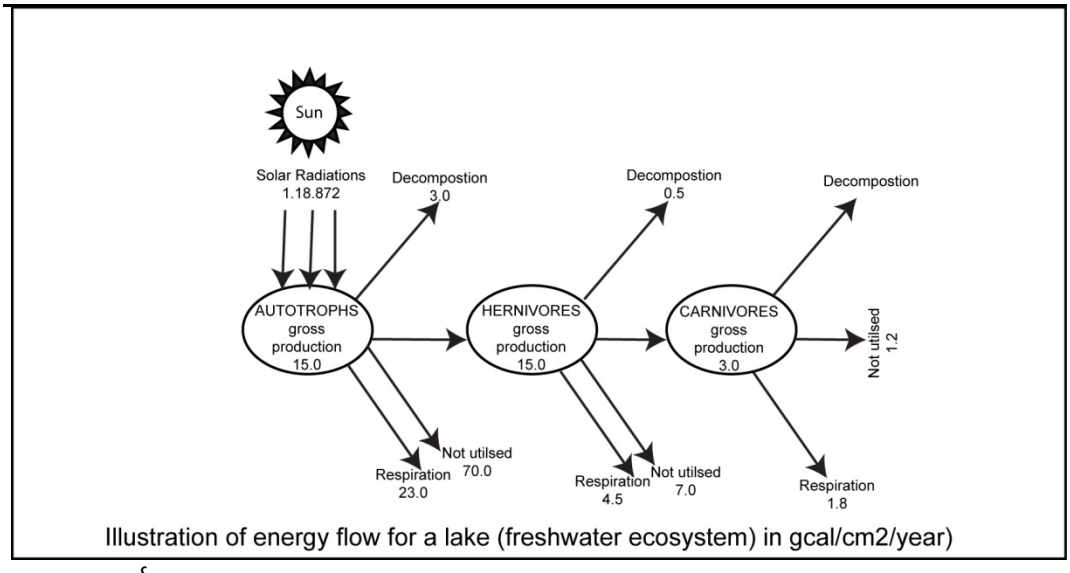

Illustration of energy flow for a lake (freshwater ecosystem) in gcal/cm2/year)

2.6.1 ऊर्जा का प्रवाह

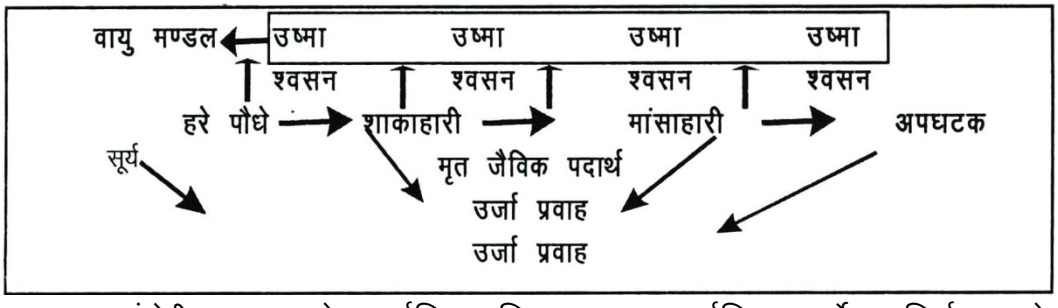

स्वयंपोषी वातावरण से अकार्बनिक खनिज प्राप्त कर कार्बनिक पदार्थो का निर्माण करते, यह क्रिया प्रकाश संश्लेषण कहलाती है। इसमें पौधे सौर ऊर्जा को ग्रहण कर कार्बनडाई आक्साइ गैस, पर्ण हरित एवं जल की उपस्थिति में कार्बनिक पदार्थ बनाते है। इस प्रक्रिया की अभिक्रिया निम्न है:–

$$6CO_2 + 12H_2O \xrightarrow[\text{पर्ण हरित}]{\text{सूर्य ऊर्जा}} C_6H_{12}O_6 + 6O_2 + 6H_2O$$

शर्करा ऑक्सीजन जल

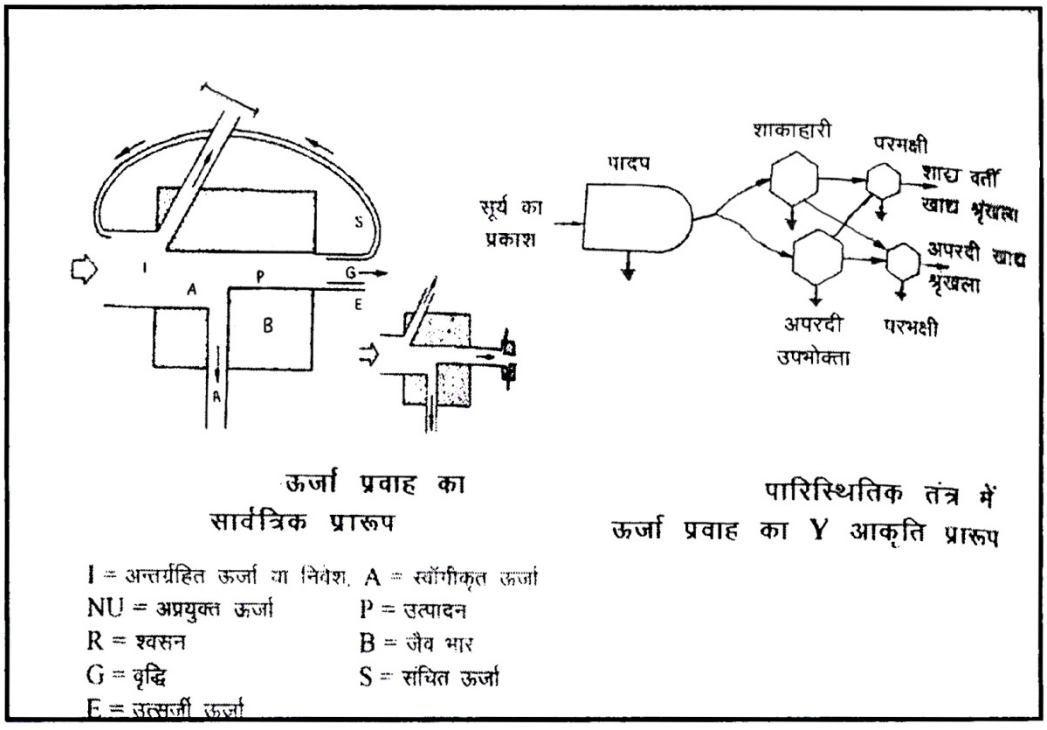

ऊर्जा प्रवाह का सार्वत्रिक प्रारूप

पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा प्रवाह का Y आकृति प्रारूप

I = अन्तर्ग्रहित ऊर्जा या निवेश, A = स्वांगीकृत ऊर्जा
NU = अप्रयुक्त ऊर्जा
P = उत्पादन
R = श्वसन
B = जैव भार
G = वृद्धि
S = संचित ऊर्जा
E = उत्सर्जी ऊर्जा

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा स्वयंपोषी पादप सौर ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में बदलने की क्षमता रखते है। सौर ऊर्जा का एक प्रतिशत हिस्सा स्वयं पोषी पौधे ग्रहण करते है तथा इसे रासायनिक ऊर्जा (कार्बनिक पदार्थ) में बदलते है। इसका कुछ अंश स्वयं के श्वसन, वृद्धि व अन्य उपापचयी क्रिया में उपभोग करते है तथा उत्पादक स्तर पर संग्रहित उपलब्ध रासायनिक ऊर्जा कुल प्राथमिक उत्पादन कहलाती है। यह ऊर्जा स्वयंपोषी के पादप संरचना निर्माण में उपयोग होती है। दूसरे सजीव (उपभोक्ता) कार्बनिक तत्व व ऊर्जा को स्वयंपोषी पादप से ग्रहण करते है जो कि उनकी वृद्धि व सुरक्षा (उपभोक्ता) श्वसन में उपयोग करतें है। पारिस्थितिकी तंत्र में ऊर्जा का प्रवाह एक तरफा होता है, जैसे :– उत्पादक से दूसरे सजीव (परपोषी) तक एक स्तर से दूसरे स्तर तक पहुंचने में ऊर्जा का मात्र 10 प्रतिशत ही उपलब्ध हो पाता है, शेष 90 प्रतिशत व्यर्थ अनुपयुक्त ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार उच्च स्तर से निम्न स्तर तक पहुंचने पर ऊर्जा के स्तर में कमी आ जाती है। इसे स्लोवोडिन का 10 प्रतिशत ऊर्जा का नियम (पारिस्थितिकी दशांक्ष नियम) कहते है।

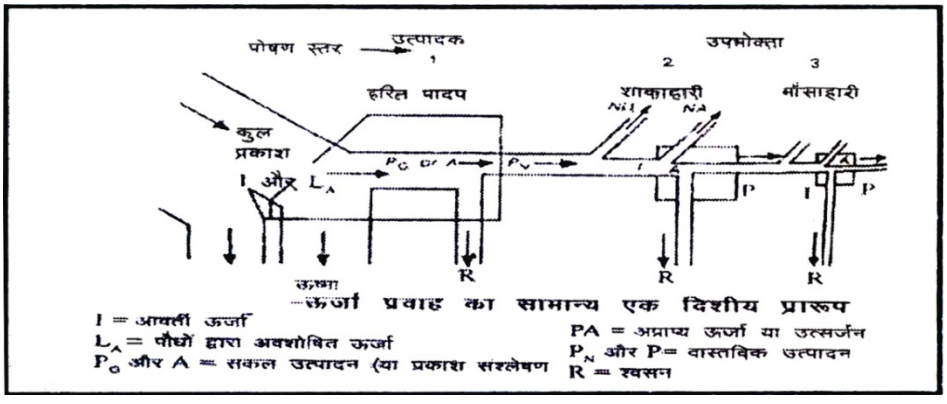

ऊर्जा प्रवाह का सामान्य एक दिशीय प्रारूप

I = आपती ऊर्जा
L_A = पौधों द्वारा अवशोषित ऊर्जा
P_G और A = सकल उत्पादन (या प्रकाश संश्लेषण
PA = अप्राप्य ऊर्जा या उत्सर्जन
P_N और P= वास्तविक उत्पादन
R = श्वसन

ऊर्जा के स्थानांतरण के दौरान उर्जा क्षय होती है। उच्च पोषण स्तर वाले जीव सदैव ऊर्जा प्राप्ति के लिए निम्न पोषक स्तर वाले जीवों पर निर्भर रहते है। ओडम ने विभिन्न मॉडल द्वारा पारिस्थितिकी तंत्र में ऊर्जा प्रवाह को समझाया ।

ओडम के एकल चैनल ऊर्जा मॉडल (Single channel energy models) द्वारा उष्नगतिकी के नियम तथा खाद्य श्रृखंला के द्वारा ऊर्जा प्रवाह को सरलता से समझ सकते है।

एक अनुमान के अनुसार लगभग 118.872 ग्राम कैलोरी/से.मी.^{2} वर्ष सौर ऊर्जा पृथ्वी पर पहुँचती है। जिसमें से 118.761 ग्राम कैलारी/से.मी.^{2} वर्ष ऊर्जा व्यर्थ हो जाती है। स्वयंपोषी पादप कुल 111 ग्रा. किलो कैलोरी/से.मी.^{2} वर्ष ऊर्जा ही ग्रहण कर सकते है। यह कुल ऊर्जा का लगभग 0.10%भाग है। इस ऊर्जा का लगभग 0.23% भाग पादपों की वृद्धि, विकास व जनन में प्रयुक्त हो जाता है। पादपों को ग्रहण करने वाले शाकाहारी प्राणी शेष बची ऊर्जा युक्त पदार्थ को खाते है। अब कुल ऊर्जा का लगभग 0.15% भाग प्राथमिक उपभोक्ता (शाकाहारी) की वृद्धि तथा विकास में उपभोग होता है। ऊर्जा का कुछ भाग श्वसन में प्रयुक्त होता है। शेष बची ऊर्जा उच्च स्तरीय मांसाहारी प्राणियों के प्रयोग में आती है। प्रथम स्तर व द्वितीय 5 स्तर में क्षय हुई ऊर्जा के आकड़ों से ज्ञात होता है कि श्वसन ऊर्जा में ऊर्जा का ह्वास स्वयंपोषी (21%) की तुलना में शाकाहारी प्राणियों (30%) द्वारा अधिक होता है। हरे पादप कुल ऊर्जा का लगभग 50% भाग ग्रहण करते है। जिसमें से केवल 1% सोर ऊर्जा प्रयुक्त होती है। तत्पश्चात् शाकाहारी व मांसाहारी उपभोक्ता 10% ऊर्जा ही प्राप्त कर सकते है। इसे पारिस्थितिक दंशाक्ष का नियम कहते है।

Y आकार का ऊर्जा प्रवाह मॉडल :–

ओडम ने Y आकार के ऊर्जा प्रवाह मॉडल में एक चैनल शाकाहारी प्राणियों का तथा अन्य चैनल अपघटकों का होता है। शाकाहारी खाद्य श्रृखंला व अपघटक खाद्य श्रृखंला नीचे प्राथमिक उत्पादकों से जुड़ा रहता है।

Y चेनल मॉडल की कुछ विशेषता है :–

1. दो भिन्न–भिन्न खाद्य श्रृखंला पृथक् नहीं होती है। 2. ये मॉडल एक चैनल मॉडल की तुलना में अधिक यर्थाथ है। 3. यह मॉडल सजीव पौधों का पूर्ण रूपेण उपभोग व मृत जैव पदार्थो के विघटन को पृथक रख सकता है।

2.6.2 खाद्य श्रृखंला : –

उत्पादक से प्राथमिक उपभोक्ता भोजन प्राप्त करते है। जबकि द्वितियक उपभोक्ता प्राथमिक उपभोक्ता को भोजन के रूप में ग्रहण करते है। खाद्य आधारित श्रृखंला, खाद्य श्रृखंला कहलाती है, जो कि स्वयंपोषी (प्रथम पोषक स्तर) से प्रारम्भ होकर विभिन्न पोषक स्तरों वाले जन्तुओं से अपघटक स्तर तक पहुंचती है। प्रत्येक स्तर पर ऊर्जा की कुछ मात्रा श्वसन, उपापचय, वृद्धि में काम आती है शेष अप्रयुक्त व्यर्थ ऊर्जा (90%) में परिवर्तित हो वातावरण में जाती है, शेष मात्रा (10%) के रूप में अगली कडी के पोषण स्तर के लिए रासायनिक ऊर्जा के रूप में उपलब्ध हो पाती है। प्रकृति में खाद्य श्रृखंला में प्राय: 5–6 से अधिक कडियां नही होती है। भोजन श्रृखंला के लम्बे होने पर अन्तिम स्तर के उपभोक्ता पर उपलब्ध ऊर्जा की मात्रा बहुत कम हो जाती है। खाद्य श्रृखंला के उदाहरण निम्न हैं:–

कुछ खाद्य श्रृखंलाओं के उदाहरण निम्न है :–

(I) पादप प्लवक शैवाल → अमीबा → मेढक → बगुला → अपघटक (जल या तालाब मे)

(II) शैवाल → घोंघा → मछली → बडी मछली → अपघटक (समुद्र मे)

(III) घांस → बकरी, गाय, भैंस, चूहा, खरगोश → लोमड़ी, भेड़िया → शेर, चीता → अपघटक (घांस के मैदान में)

(IV) वृक्ष → नील गाय बकरी → मांसाहारी पक्षी → अपघटक (वन मे)

प्रकृति में मुख्य रूप से दो प्रकार की खाद्य श्रृखंला पाई जाती है :–

(a) शाकवर्ती खाद्य श्रृखंला – वह श्रृखंला, जो पौधों से शुरू हो कर, शाकाहारी जीवों से चलकर मांसाहारी जीवों पर समाप्त हो जाती है। इसमें प्रत्यक्ष रूप से ऊर्जा से प्राप्त होती है। सामान्यतया प्रकृति में इसी प्रकार की श्रृखंला पाई जाती है।

(b) अपरदी खाद्य श्रृखंला:– यह श्रृखंला जन्तुओं के मृत सड़े गले पदार्थो से प्रारंभ होकर अपघटक जीवों की तरफ जाती है। जिन तन्त्रों में इस प्रकार की श्रृखंला पाई जाता है, वे सौर ऊर्जा पर निर्भर नहीं करते। मृत जीवों से भोजन प्राप्त करने के कारण इसे मृतोपजीवी भोजन श्रृखंला भी कहते है।

उदाहरण :– मृत कार्बनिक पदार्थ → केंचुएँ → मेंढक → सर्प → बाज

मृत कार्बनिक पदार्थ → कवक → छोटी मछली → बड़ी मछली

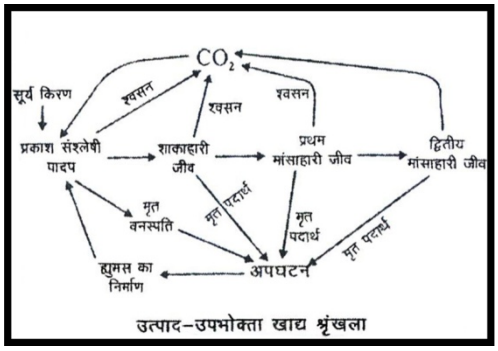

उत्पाद–उपभोक्ता खाद्य श्रृंखला

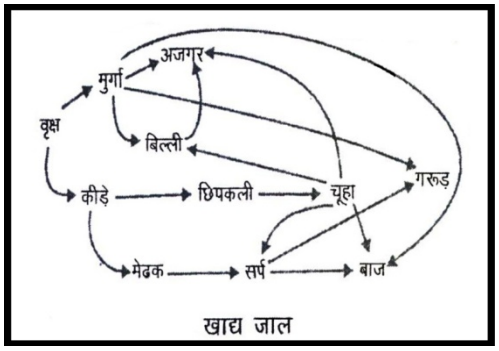

खाद्य जाल

2.6.3 खाद्य जाल :–

एक पारिस्थितिकी तंत्र में एक साथ कई खाद्य श्रृखंलाऐं चलती है। ये आपस में गुंथी रहते है। एक जाल सा बना लेती है। जिसे खाद्य जाल कहते है। यदि एक उपभोक्ता किसी खाद्य श्रृखंला में प्राथमिक तो दूसरी खाद्य श्रृखंला में द्वितीयक उपभोक्ता हो सकता है। इसमें जितनी खाद्य श्रृखंलाऐं आपस में जुडी होती है। भोजन का जाल या खाद्य उतना ही जटिल एवं स्थिर होता है। क्योंकि खाद्य जाल में पोषण के विकल्प होते है।

2.6.4 पोषण स्तर :–

पारिस्थितिकी तंत्र में प्रत्येक भोजन स्तर पोषण स्तर माना जाता है। यह भोजन के रूप में उपलब्ध होता है। खाद्य श्रृखंला में पोषण स्तर की संख्या प्रत्येक कड़ी के (उत्पादक एवं उपभोक्ता) बराबर होती है। भिन्न – भिन्न पोषण स्तर में सजीव पदार्थो की मात्रा एक फसल के समरूप मानी जाती है। पोषण स्तर जन्तु एवं पौधों दोनो के लिए प्रयुक्त होता है।

उत्पादक और उपभोक्ता दो आधारभूत पोषण स्तर होते है। उत्पादक का स्तर प्रथम श्रेणी का होता है, यह $T_{1,}$ है उपभोक्ता द्वितीयक स्तर के पोषण स्तर (T_2) इनको श्रेणी के आधार पर प्रथम श्रेणी उपभोक्ता को द्वितीय पोषक स्तर T_2 में रखा जाता है। जो कि मुख्यत: शाकाहारी है।

द्वितीयक श्रेणी उपभोक्ता या प्राथमिक मांसाहारी तृतीय पोषक स्तर T_1 बनाते है। मांसाहारी स्तर पर 2–3 कड़ियाँ हो सकती है।

उच्च श्रेणी को पोषण स्तर T_4/T_5 होता है। अपघटकों का पोषण स्तर अन्तिम सौपान है यह अपघटनकारी पोषक स्तर (T_6) कहलाते है।

उत्पादक → शाकाहारी हव मांसाहारी → द्वितीयक मांसाहारी → उच्च श्रेणी मांसाहारी

T_1 T_2 T_3 T_4 T_5

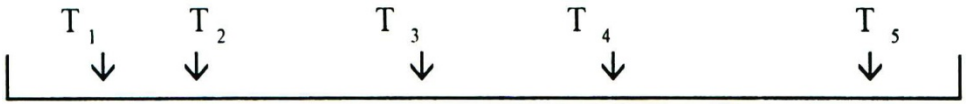

पारिस्थितिकी तंत्र में पोषक स्तर

2.6.5 पारस्परिक सम्बन्ध :–

कोई भी पारिस्थितिकी तंत्र पृथक तंत्र की तरह व्यवहार नहीं कर सकता है। अलग–अलग परिस्थितिकी तंत्र जैविक व अजैविक पदार्थो का आवागमन करते है। सभी पारिस्थितिकी तंत्र भिन्न – भिन्न घटकों से "जाल' ' की तरह एक दूसरे से जुडे रहते है तथा एक दूसरे से जटिल पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करते है। पौधें, जंतुओं को ऑक्सीजन, भोजन व सुरक्षा स्थल प्रदान करते है। तथा जंतु पौधों को CO_2 (कार्बन–डाइआक्साइड) उपलब्ध कराते है तथा प्रकीर्णन व परागण में भी मदद करते है। विभिन्न प्रकार के जंतु भोजन जाल में पारस्परिक संबंध द्वारा दूसरे जंतुओं से भी भोजन प्राप्त करते है। जब सजीव (पादप और जंतु की मृत्यु होती है तो विघटनकारी क्रियाओं द्वारा परजीवी सजीव मृत कार्बनिक यौगिकों का क्षय करके वापस मृदा में छोड देते है। जिसका स्वयंपोषी पुन: उपयोग करते है।

2.6.6 क्रियात्मक चक्रीय सन्तुलन :–

पारिस्थितिकी तंत्र भिन्न – भिन्न घटकों के बीच क्रियात्मक संतुलन स्थापित करता है। यह एक घटनाक्रम है जिसे कई सीमाओं से पारित हो कर प्राप्त क्रिया जा सकता है। उदाहरण के लिए प्रत्येक जाति एक सीमा के बाद अपनी संख्या नही बढ़ा पाती है इसका मुख्य कारण, भोजन, स्त्रोत की कमी, स्पर्धा अत्यधिक संख्या के कारण उनकी वृद्धि अवरूद्ध हो जाती है। पर्यावरण में अपशिष्ट के पुर्नचक्रण की योग्यता होती है। इस प्राकृतिक घटना को स्वनियमन कहते है। ऐसी स्थिति में एक प्रकार के जीवों के दूसरे प्रकार के जीवों से स्थान परिवर्तन के द्वारा नए संरचनात्मक व क्रियात्मक संतुलन स्थापित होते है।

खनिज चक्रण :– स्वयंपोषी पौधे वातावरण से अधिक मात्रा में अकार्बनिक खनिज प्राप्त करते है जिससे वे कार्बनिक पदार्थो का निर्माण करते है। स्वयंपोषी पौधों से खनिज दूसरे सजीव संघटक (जैसे गाय, मनुष्य आदि) में पहुंचता है ' तथा उपापचयी क्रियाओं से पच कर वे खनिज पुन: वातावरण में पहुंच जाते है। इस चक्र में खनिज सजीव व निर्जीव के बीच चक्रीत होता रहता है। पुन: अपघटन द्वारा इससे पारिस्थितिकी तंत्र को गति मिलती है। इसमें अपघटन क्रिया का प्रमुख योगदान होता है।

अपघटनकारी :– ये परजीवी व मृतोपजीवी सजीव सूक्ष्मजीव (बैक्टिरिया या कवक) प्रकृति के होते है। अपघटनकारी मृत अवशेषी या जीवद्रव्य के जटिल घटकों को अकार्बनिक खनिजों में बदलते है।

ये अकार्बनिक खनिज पुन: वातावरण में पहुंच कर उत्पादकों के लिए उपलब्ध होते है तथा पुन: वातावरण व उत्पादकों के बीच खनिज चक्र प्रारम्भ कर देते है। सजीवों का यह वर्गीकरण पारिस्थितिकी तंत्र के पोषण प्राप्ति स्तर तथा खनिज स्त्रोतों के प्रकार पर आधारित है। इस चक्र को पारिस्थितिकी तंत्र में पृथक अपरदी खाद्य श्रृखंला के रूप में प्रथक अध्ययन किया जा सकता है। पौधों एवं जन्तुओं के मृत अवशेषों को अपरद (Detritus) कहते है। यह सतही अपरद एवं भूमिगत अपरद होतें है। अपघटन की प्रक्रिया में निम्नलिखित क्रियाऐं होती हे ।

1. अपरद का भौतिक विखण्डन होता है। 2. निक्षालन (Leaching) में मृदा से रिसता रस घुलनशील पदार्थो जैसे : शर्करा, खनिज, पोषक तत्वों को अपरद से हटा देता है। 3. जीवाणुओं एवं कवकों द्वारा निमुक्त विकारों (एन्ज़ाइम) द्वारा अपघटन होता है। जिससे अकार्बनिक पदार्थ बनते है, इससे मृदा में ह्युमस निर्माण होता है। इसे ह्युमिफिकेशन तथा खनिजीकरण कहतें है। इससे सूक्ष्म जीवों की वृद्धि होती है, भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है।

अपघटन की प्रक्रिया जल वायवीय कारकों तथा अपरद के रासायनिक गुणों द्वारा प्रभावित होती है। खनिजों (रासायनिक तत्वों) के जीवों एवं मृदा के माध्यमों से होकर चक्रिय गमन को जैव भू रासायनिक चक्रण (Biogeochemical cycle) या खनिज चक्रण कहते है। इसमें स्थल मण्डल, जल मण्डल, वायु मण्डल एवं जीवों का संघटित, पारस्परिक संबंध है इसमें गैसीय तथा स्थलीय अवसादी खनिज चक्र मुख्य है।

2.6.7 पारिस्थितिकी पिरामिड :–

खाद्य श्रृखंला में एक घटक में दूसरे घटक तक जाने पर गुणों में विशेष परिवर्तन होता है। इन गुणों में ऊर्जा परिवर्तन, संख्या परिवर्तन, जैव भार परिवर्तन शामिल है।

इन्ही परिवर्तित गुणों को विभिन्न पोषण स्तर के सन्दर्भ में क्रम से व्यवस्थित करें तो एक स्तूप प्राप्त होता है। वह पारिस्थितिकी स्तूप कहलाता है।

ये पिरामिड मुख्यत: तीन प्रकार के गुणों पर आधारित है :–

1. संख्या पिरामिड (pyramid of number) 2.जैवभार का पिरामिड (Pyramid of biomass) 3. ऊर्जा का पिरामिड (Pyramid of energy)

संख्या और जैवभार के पिरामिड सीधे अथवा उल्टे हो सकते है। यह पारिस्थितिकी तंत्र की खाद्य श्रृखंला पर निर्भर होता है। लेकिन ऊर्जा पिरामिड सदैव सीधा (Upright) ही होता है।

संख्या का पिरामिड :–

इस पिरामिड में, उत्पादक, उपभोक्ता तथा अपघटकों के बीच संख्या का सम्बन्ध होता है। तीन प्रकार के पारिस्थितिकी तंत्र में संख्या का पिरामिड प्रदर्शित किया गया है।

संख्या का पिरामिड

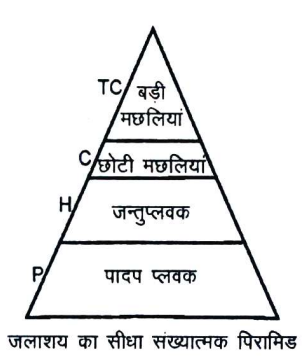

जलाशय का सीधा संख्यात्मक पिरामिड

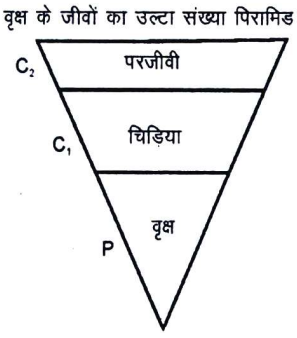

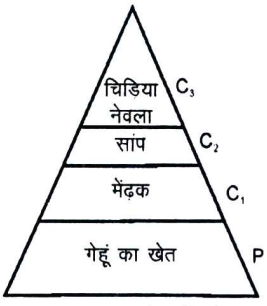

घास स्थल का सीधा पिरामिड

जीवभार पिरामिड

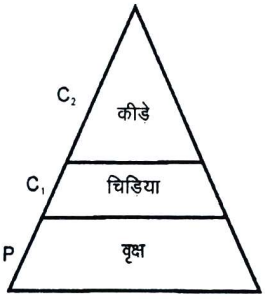

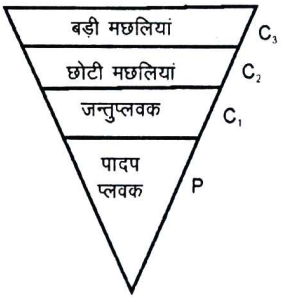

1. घास स्थल पारिस्थितिकी तंत्र का पिरामिड :– इसमें उत्पादक घास (T_1) होती है जो सदैव संख्या में अधिक है, यह स्तूप का आधार बनाते है। T_1 को खाने वाले प्राथमिक उपभोक्ता, जैसे :– चूहे, खरगोश (T_2) आदि उससे संख्या में कम होते है। प्राथमिक उपभोक्ता की तुलना में द्वितीयक उपभोक्ता, जैसे :– सांप, (T_3) छिपकली की संख्या में कम है। शीर्ष पर तृतीय उपभोक्ता बाज (T_4) संख्या में सबसे कम होते है। इस प्रकार यह पिरामिड सीधा (Upright) होता है।
2. ताल पारिस्थितिकी तंत्र का पिरामिड :– इस पारिस्थितिकी तंत्र में उत्पादक (आधार) पादप प्लवक्. (Plytoplankton) होते है, जैसे :– शैवाल, जीवाणु आदि। इनकी संख्या अधिक होती है। प्राथमिक उपभोक्ता शाकाहारी मछलियां होती है जो पादप प्लवक को खाती है इनकी संख्या T_1 कम होती है। प्राथमिक उपभोक्ता को ग्रहण करने वाली छोटी मांसाहारी मछलियां द्वितीयक उपभोक्ता C_2, कहलाती है। इनकी संख्या शाकाहारी मछलियों C_1 से भी कम संख्या में होती है। अंत में शीर्ष पर पाए जाने वाली वृहत् मछलियां बहुत कम संख्या में पाई जाती है। यह पिरामिड भी सीधा (Upright) होता है।
3. वन पारिस्थितिकी तंत्र का पिरामिड :– यह पिरामिड अन्य संख्या पिरामिड से भिन्न होता है। वन में पाए जाने वाले बडे वृक्षों की संख्या कम होती है। यह उत्पादक स्तर होता है। फल खाने वाले पक्षी उपभोक्ता कहलाते है। इनकी संख्या उत्पादक से अधिक होती है। प्राथमिक उपभोक्ता का शिकार करने वाले मांसाहारी प्राणियों की संख्या कम होती है। अत: प्राथमिक उपभोक्ता वाले स्तर तथा द्वितीय उपभोक्ता वाले स्तर युक्त पिरामिड पुन: सीधा बनता है।

4. परजीवी खाद्य श्रृखंला पिरामिड (वृक्ष खाद्य श्रंखला) :– यह पिरामिड सदैव उल्टा बनाते है। उत्पादक एक वृक्ष होता है, जिस पर अनेक शाकाहारी अर्थात प्राथमिक उपभोक्ता निवास करते है। प्रत्येक शाकाहारी अनेक परजीवियों अर्थात द्वितीय उपभोक्ता को पोषण प्रदान करते है। इस प्रकार बनने वाला पिरामिड सदैव उल्टा होता है।

जैवभार पिरामिड :–

इसमें प्रत्येक स्तर के कुल जैवभार के आधार पर पिरामिड बनाया जाता है।

घास स्थल तथा वन पारिस्थितिकी तंत्र पिरामिड :– इसमें आधारीय क्षेत्र उत्पादक घास/वृक्ष होते है। इनका जैवभार अधिक होता है। उत्पादक पर निर्भर रहने वाले प्राथमिक उपभोक्ता (शाकाहारी) का जैवभार उत्पादक से कम होता है। प्राथमिक उपभोक्ता का भक्षण करने वाले (मांसाहारी) जीवों का जैवभार उससे भी कम होता है। अत: यह पिरामिड सीधा बना है।

तालाब पारिस्थितिकी तंत्र पिरामिड :– चूंकि ताल में उत्पादक छोटे जीव है अत: इनका जैवभार न्यूनतम होता है। इस पारिस्थितिकी पिरामिड का स्तर बढ़ने के साथ–साथ जैवभार में भी वृद्धि होती जाती है। शीर्ष पर स्थित वृहत् मछली का जैवभार अत्यधिक होता है। अत: यह पिरामिड उल्टा होता है।

ऊर्जा का पिरामिड

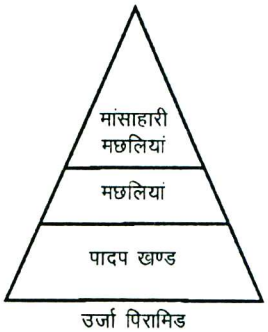

उर्जा पिरामिड

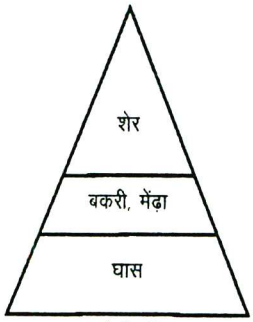

उर्जा पिरामिड

पारिस्थितकी तंत्र पिरामिड में प्राथमिक उत्पादक सौर उर्जा ग्रहण करके उसे रासायनिक उर्जा में बदलते है। पोषण स्तर के बढ़ने के साथ ऊर्जा कम होती जाती है क्योंकि एक स्तर से दूसरे स्तर में जाने पर सदैव ऊर्जा का ह्रास होता है। विभिन्न पोषण स्तरों द्वारा निश्चित समायावधि में निश्चित इकाई क्षेत्र में प्रयुक्त की गई कुल ऊर्जा का सम्बंध ग्राफ रूपरेखा द्वारा प्रदर्शित होता है। यह पिरामिड सदैव सीधा होता है। ऊर्जा को किलो जूल कि. कैलोरी/वर्ष में प्रदर्शित करते है।

बोध प्रश्न-4

1. जैवभार के पिरामिड को समझाईये?
2. अपरदी खाद्य श्रृन्खला की मुख्य कड़ियां लिखिये?
3. पारिस्थितिकी तंत्र में ऊर्जा प्रवाह के पारिस्थितिक दक्षांश का नियम समझाईये?
4. खाद्य श्रृन्खला की तुलना में खाद्य जाल अधिक स्थिर क्यों है?
5. पारिस्थितिकी तंत्र के विभिन्न भू-गर्भीय रासायनिक चक्रों के महत्व को समझाईये?
6. घास के मैदान की खाद्य श्रृन्खला में T_2T_3 एवं C_3C_4, जीवों के उदाहरण दीजिऐ?

2.7 विभिन्न प्रकार के पारिस्थितिक तंत्र :–

किसी भी पारिस्थितिकी में पारिस्थितिकी तंत्र संकल्पना महत्वपूर्ण होती है। इस संकल्पना मे संसार के वृहत तथा लघु भिन्न–भिन्न निवास स्थानों के पारिस्थितिकी तंत्रो के प्रकारों का वर्णन किया जाता है। पारिस्थितिकी तंत्र निम्न प्रकार हो सकते है।

2.7.1 स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र :–

उत्तरी ध्रुवीय और पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र में अधिकांश ठण्डे प्रदेश तथा वृक्ष रहित क्षैत्र सम्मिलित होते है। वन पारिस्थितिकी तंत्र अनेक उप–प्रकारों में विभक्त होते है जैसे– उष्ण कीटबंधीय वन, भूमध्य सागरीय सदाबहार वन, शीतोष्ण पर्णपाती वन, घास के मैदान, सवाना वन, मरूस्थलीय तथा अर्द्ध शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र।

2.7.2 वन पारिस्थितिकी :–

वन प्राकृतिक पादप समुदाय का समूह है जिसमें उच्च वर्षा के पौधो की लगभग 40% प्राजातियाँ भूमि क्षैत्र को घेरे रहती है। भारत में कुल भू–क्षैत्र के 19% भाग पर वन पाए जाते है। चैम्पियन और सेठें के अनुसार भारत में पाये जाने वाले वन की 11 श्रेणियाँ है, जिसका भू–आकृति विज्ञान, पुष्प संरचना निवास स्थल के आधार पर वर्गीकरण किया गया है।

अजैविक घटकों में मृदा एवं वायुमण्डल के अकार्बनिक एवं कार्बनिक तत्व, जलवायु (ताप, प्रकाश तथा नमी) एवं खनिज शामिल किये जाते है। वनों में खनिज के अतिरिक्त पेडों की टहनियाँ, पत्तियाँ इत्यादि पाये जाते है। जैविक घटकों में उत्पादक के रूप में वनों में पाये जाने वाले वृक्ष जैसे– चीड़ देवदार जूनीपेरस इत्यादि उष्ण कटिबन्ध वन एवं शुष्क पर्णपाती वन में सागवान, धोकडा तेंदू, सालर, गुर्जन आदि प्रमुख वृक्ष है। उपभोक्ता प्राथमिक उपभोक्ता के रूप में चिटियाँ, मकडी, गौबरेला, लीफ–हॉपर, खटमल, हाथी, नील गाय, हिरण आदि है। द्वितीयक उभोकता के रूप में छिपकली, लोमडी आदि । तृतीयक उपभोक्ता के रूप में शेर, बाघ आदि है, ये सर्वोच्च उभोक्ता होते है। अपघटनकारी की श्रेणी में सूक्ष्म जीव सम्मिलित है. जैसे– कवक (एस्पजिर्लस, अल्टरनेरिया, फ्यूजेरियम, ट्राइकोडर्मा आदि) बैक्टीरिया (स्थूडोमोनास, क्लेस्ट्रीडियम), एक्टिनोमाइसीज (स्ट्रेप्टोमाइसीज़)।

2.7.3 घास के मैदान का पारिस्थितिकी तंत्र :–

पृथ्वी के कुल भू–भाग का 24% भाग घास के मैदान से सुसज्जित है। घास के मैदान पारिस्थितिकी तंत्र में घास, दलदली घास, तथा अन्य चारा प्राप्त होने वाले पौधे मुख्य वनस्पति के रूप में पाये जाते है। यद्यपि संवहनी पौधों की 50 से अधिक प्रजातियाँ शीतोष्ण घास के

मैदान में पाई जाती है। तथा 200 से अधिक उष्ण कटिबंधीय घास के मैदानों में 2–3 घास की महत्वपूर्ण प्रजातियाँ पाई जाती है इनमें सवाना घास के मैदान भी आते है। घास के मैदान प्राकृतिक, अर्द्ध प्राकृतिक तथा उपजाऊ होते है। प्राकृतिक घास के मैदान महाद्विपीय भूमि समूह के बडे क्षैत्र को घेरे रहते है। जिसमें वृक्षहीन घास के विस्तृत मैदान है। प्राकृतिक घास के मैदान 250 से 750 मिमी. वार्षिक वर्षा, वाष्पन की उच्च दर तथा मौसमी शुष्कता के लक्षणों द्वारा विकसित होते है।

प्राकृतिक घास के मैदान में विभिन्न प्रकार के जन्तु पाए जाते है। स्तनधारी प्राणी, शाकाहारी व कुतरने वाले जन्तुओं के साथ समन्वय स्थापित करते है। बीज खाने वाली चिड़िया, बाज, साँप व कीट प्रमुख रूप से घास का भक्षण करते है। घास के मैदानों की मिट्टी प्राकृतिक रूप से उपजाऊ होती है। इन क्षैत्रों की मिट्टी में उपस्थित घुलनशील खनिज कम वर्षा होने के कारण नहीं बहते है। और वृक्षों की छाया या वृक्ष वितान (Tree canopy) की अनुपस्थिति के कारण प्रकाश उपलब्धता पर्याप्त होती है, घास के मैदान की ऊपरी मृदा परत उपजाऊ होती है। इसके परिणामस्वरूप उत्तरी शीतोष्ण क्षैत्र के प्राकृतिक घास के मैदान दाने वाली फसलों (मक्का व गेहूँ) में बदल जाते है। घास चरने वाले शाकाहारी जन्तु को विस्थापित कर पालतू मवेशी व भेड़ आ जाते है। अपघटनकारियों में कवक (म्यूकर, एस्पर्जिलस, पेनिसिलियम, क्लेडोस्पोरियम, राइज़ोपस), एक्टिनोमाईसिज (स्ट्रेप्टोमाइसीज), बैक्टीरिया (क्लेस्ट्रीडियम) प्रमुख है। ये मृत कार्बनिक यौगिकों को अपघटित करते है जिससे खनिज मृदा में विस्थापित होते है। ।

2.7.4 मरूस्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र :–

राजस्थान के संदर्भ में मरूस्थलीय क्षैत्र पश्चिमी शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क जिसे राजस्थान की मरूभूमि या थार का मरूस्थलीय भी कहा जाता है, को शामिल किया जाता है। यह 1,96,100 वर्ग कि. मी. क्षैत्र में फैला है। अरावली पर्वत श्रृखंलाओं के पश्चिम भाग के क्षैत्र की प्रमुख विशेषता लिए हुए है। भौतिक दशाओं में कम वर्षा (150–200 मिली लिटर) अधिक तापमान (47%) तेज हवाऐं (70 से 100 कि.प्रतिघंटा) तेज धूप कम आर्द्रता रेतीले टीले इत्यादि है। यहां की वनस्पति में कंटीली, काष्ठीय झाड़िया वृक्ष पाये जाते है जो इस वातावरण में अनुकूलित है। इनमें नागफनी. थौर, केक्टस, गूदेदार पौधे, खेजडी, कैर, नीम, कुमटा, बबूल, आकडा बैर इत्यादि प्रमुख है। थार में पाये जाने वाले जीव–जन्तु भी शुष्क वातावरण के प्रति अनुकुलित है इनमें गिरगिट, चामणी, छिपकली, साँप, बिच्छू, मकडिया तथा विभिन्न प्रकार के कीडे, पक्षियों में कौवे, चील, गिद्ध, बाज, ऊँट, गोडावन (राज्यपक्षी) भी मरुस्थल की ही देन है।

2.7.5 जलीय पारिस्थितिकी तंत्र -

जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में जल के संचरण व गमन द्वारा स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र से खनिजों का वहन होता है। जलीय समुदाय में जीवन के क्षैतिज स्तरीकरण पर भौतिक दशाऐं (दशा) जैसे– गहराई, प्रकाश, ताप, दाब, लवणता, ऑक्सीजन, व कार्बन–डाई–ऑक्साइड का प्रभाव पड़ता है। जलीय निवास स्थल में अनुक्रम परिवर्तन के परिणामस्वरूप भौतिक पर्यावरण में परिवर्तन आता है, जैसे– तालाब के तल में संचित बालू का एकत्र होना, तालाब के छिछला होने पर वहाँ तालाब लिली जैसे अस्थिर पौधे व टेल जैसे पौधों का अतिक्रमण हो जाता है।

2.7.6 शुद्ध (स्वच्छ) जल पारिस्थितिकी तंत्र :–

इस तंत्र में तालाब, झील, नदियाँ, दलदल भूमि सम्मिलित है। स्थलीय व शुद्ध जल तंत्र का 'संकर' करने से इस श्रेणी में अनूप वन (Swamp Forest) व मौसमी बाढ़ युक्त क्षैत्र सम्मलित होते है।

2.7.7 तालाब पारिस्थितिकी :–

तालाब स्व–नियमन व स्व–पर्याप्तता का अच्छा उदाहरण है। तालाब पारिस्थितिकी तंत्र की जैविकता पर तालाब के स्तर, आकार, गहराई का उचित प्रभाव पडता है। शुद्ध जल, पीने के पानी के स्त्रोत के रूप में प्रयुक्त होता है। अनेक स्थलों में घरेलू व औद्योगिक अपशिष्ट के मिलने से सतही व भू–जल प्रदूषित होता है। इसके अलावा अनेक पर्यावरणीय समस्याऐं उत्पन्न होती है। अजैविक घटकों में तापमान, प्रकाश जल तथा अनेक अकार्बनिक व कार्बनिक तत्व जैसे :– कार्बन, हाईड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, पौटेशियम, कैल्शियम, सल्फर तथा कार्बोहाइड्रेड, प्रोटीन, लिपिड आदि मुख्य घटक है। जैविक घटको में उत्पादकों में गुरूप्लवक (Macrophytes) निमग्न, मुक्त प्लावी, तथा एम्बफीबियस पादप (जैसे– हाइड्रिला, वैलिसनोरिया पिस्टिया, एजोला, वल्फिया लेम्ना, ट्रापा, टाइफा, मार्सिलिया) प्लवक (फइटोप्लेंक्टोन), शैवाल (जैसे– युलोथ्रिक्स, स्पारोगाइरा, उडोगोनियम, क्लेमाइडोमोनास, वालवॉक्स) डाइटमस आदि पाये जाते है। उपभोक्ता प्राथमिक उपभोक्ता में प्राणीप्लवक (रोटीफर) होते है। द्वितीयक उपभोक्ता में मांसाहारी है ये शाकाहारी का भक्षण करते है जैसे कीट, मछलियाँ, मेढक प्रमुख है। तृतीय उपभोक्ता में बडी मछलियाँ– ये सभी छोटी मछलियों का भक्षण करती है। बतख, बगुला आदि है। अपघटनकारी– इन्हें सूक्ष्म उपभोक्ता भी कहते है जैसे– बैक्टीरिया, कवक (एस्पर्जिलस, सिफेलोस्पोरियम) तथा एक्टिनोमाइसीटीज आदि है।

2.7.8 समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र :–

इसमें प्रवाल भित्ति, मैग्रोव समुद्री घास के संस्तर और अन्य तटीय व छिछले जल पारिस्थितिकी तंत्र से लेकर खुला–जल पारिस्थितिकी तंत्र एक सम्मिलित है। संसार का लगभग $361x10^6$ वर्ग कि. मी. भाग समुद्र से घिरा हुआ है। यह भाग पृथ्वी की सतह का लगभग 71%है। पृथ्वी पर पाये जाने वाले जल का 97% समुद्री जल है। समुद्री क्षैत्रों को ज्वारनदमुखी: प्रवाल भित्ति व महासागर में बाँटा जा सकता है। महासागर पारिस्थितिकी तंत्र सबसे बडे व विविध रूप को प्रदर्शित करता है। खारा पानी वाष्प बनकर उड जाता है। तथा भूमि पर वर्षा होती है। हमारे वायुमण्डल में समुद्री शैवालों द्वारा ऑक्सीजन उत्पन्न होती है। यह शैवाल वायुमण्डल से अत्यधिक मात्रा में कार्बन–डाई–ऑक्साइड का अवशोषण करते है। अजैविक घटको में क्षारीय प्रकृति के होने के कारण जल रासायनिक संगठन में स्थिर रहते है। अन्य भौतिक–रासायनिक कारक जैसे– घुलनशील ऑक्सीजन की मात्रा, प्रकाश तथा तापमान भी भिन्न प्रकार के होते है। समुद्री जल में Na, Ca, Mg व K ,युक्त लवण पाया जाता है। घुलनशील खनिजों की सांद्रता कम होती है। समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र में निश्चित स्तर होते है। जैविक घटकों में खुले समुद्र में बाहर की ओर का भाग पैलेजिक क्षैत्र कहलाता है जो मछलियों की अनेक जातियों, समुद्र स्तनधारी, प्लाक्टोन व कुछ जलमग्न समुद्री खरपतवार को भोजन प्रदान करते है। खुले समुद्र के अन्तर्गत आने वाले क्षैत्र नितलस्थ क्षैत्र कहलाता है। यहां स्खलन, बालू व विघटनकारी जीव पाये जाते है। यह क्षैत्र गहराई के कारण ठण्डा होता है क्योंकि वहां सूर्य का प्रकाश नहीं पहुंच पाता है। समुद्र तल में अनेक पादप व जन्तु पाये जाते है जो जल में ही भोजन प्राप्त करते है जैसे– तारा

मछली, एनिमान, स्पंज (Sponges) तथा अनेक प्रकार के सूक्ष्मजीव। उत्पादकों में पादप प्लवक तथा जलीय पादप पाये जाते है। प्राथमिक उपभोक्ता में शाकाहारी मछलियाँ क्रस्टेशियन जीव मोलस्का वर्ग के जन्तु इत्यादि है। द्वितीयक उपभोक्ता – मांसाहारी मछलियाँ (हेरिंग, मेग्रेल)। तृतीयक उपभोक्ता को गुरु उपभोक्ता कहते है। इस श्रेणी में मांसाहारी मछलियाँ जैसे – कोड, हैडोक शार्क आदि है। अपघटनकारी में वैक्टीरिया तथा कवक ये मृत कार्बनिक पदार्थो का भक्षण करते है।

समुद्र के सबसे गहरे भाग को पातालीय प्रदेश कहते है। यह पातालीय क्षैत्र बहुत ठण्डा व दाब युक्त होता है। इस क्षैत्र विशेष से अमेरूदण्ड की अनेक जातियां भोजन प्राप्त करती है। भारतीय समुद्र की गहराई में पायी जाने दाली अनेक मछलियाँ अंधेरे में चमकती है। चमकने की प्रक्रिया को फोटोलुमिनीसेंस कहते है। समुद्री तत्व का तापमान 2–3° C होता है। समुद्री तल में प्रकाश प्राय: अनुपस्थित होता है। जल का आंतरिक दाब 62:% तक उच्च होता है। जलप्लवक (फाइटोप्लेंक्टोन) व सूक्ष्मजीव जटिल भोज्य तंत्र बनाते है जो कि समुद्री क्षैत्र में समान दूरी तक फैला होता है। पारिस्थितिकी तंत्र इतना वृहत है कि सरलता से प्रदूषित पदार्थो द्वारा प्रभावित नहीं होता है। प्रशांत महासागर, हिन्द महासागर, अटलांटिक महासागर, उत्तरीध्रुव महासागर, दक्षिणीध्रुव महासागर दुनियाँ के प्रमुख महासागर है। समुद्री पारिस्थितिकी वृहत एवं स्थिर पारिस्थितिकी तंत्र है।

ज्वारनदमुखी पारिस्थितिकी तंत्र मे समुद्र के जल का वह भाग जो अर्द्ध–परिबंध (Semi enclosed) तथा जिसका खुले सागर के साथ मुक्त सम्बन्ध होता है। इसे ज्वालामुखी (Estuary) कहते है। यह जार भाटा क्रिया से बहुत प्रभावित होता है तथा समुद्री जल भू–अपवाह (Liver Mouths) द्वारा अलवण जल से मिश्रित होता है। तटीय खाडी, ज्वरीय कच्छ आदि ज्वारनदमुखी पारिस्थितिकी तंत्र के उदाहरण है इसमें जैविक घटक. में उत्पादक गुरूप्लवक (घास, समुद्री खरपतवार, समुद्री घासें, पादप प्लवक) इत्यादि है। तथा उपभोक्ता में केकडा, सीप, अनेक आर्थिक महत्व की मछलियाँ प्रमुख है।

प्रवाल भित्ति पारिस्थितिकी तंत्र संसार में पाया जाने वाला सबसे अनुकुल पारिस्थितिकी तंत्र है। कोरलरीफ की संरचना टापू की तरह नती है तथा प्रवाल तथा सूक्ष्मजीव चूना निष्कासित करते है जिससे प्रवाल बाहय शरीर के चारों तरफ कैल्शिम कार्बोनेट का सुरक्षा आवरण बनाते है। यह कैल्शिम कार्बोनेट का आवरण मृत्यु के पश्चात समुद्र की सतह में एकत्र हो जाता है। तथा प्रवाल भित्ति बनती है। भित्ति (Coral reef) पारिस्थितिकी तंत्र प्रशांत व हिन्द महासागर के गर्म जल में पाया जाता है। यह पारिस्थितिकी तंत्र यहां पाया जाता है। निर्मित प्रवाण 40–50 मीटर गहराई में लगभग 24°C वार्षिक तापमान के जिल में पनपता है। ये न तो अचानक तापमान में हुए परिर्वतन को सह सकते है। न ही 18^0C से कम ताप में विस्तार कर सकते है। प्रवाल भित्ति (Coral reef) पारिस्थितिकी तंत्र की वृद्धि के लिए कठोर (ठोस) जमीन व अधिक लवणता वाले जल की आवश्यकता होती है। ये स्वच्छ जल, गंदीले जल अथवा अलवणयुक्त झील या पोखर में वृद्धि नहीं कर सकते है। ये शाखा युक्त पेड या झाड़ी के सदुश्य संरचना उत्पन्न करते है इसे कोरल फेमिली (Coral Families) कहते है। कोरिलियन संरचना के बीच के रिक्त स्थान कोलीयम कार्बोनेट के संचयन द्वारा भरते है। कोरल के अतिरिक्त अनेक जन्तु जीव व

पादप जैसे कैल्केरियस शैवाल, जीवों में मॉलस्का तथा प्रोटोजोआ आदि प्रवाल जीव (Coral reef) आदि इसका निर्माण करते है।

अत: भारत वर्ष में जैव विविधता एवं पारिस्थितिकीय विविधता का परस्पर अटूट सम्बन्ध हैं, विभिन्न आवास में विभिन्न प्रकार के पारिस्थितिकी तंत्र अपनी पृथक् विशिष्टता लिये होते है। अत: इन सभी पारिस्थितिकी तंत्रों एवं संसाधनों का उचित प्रबन्धन एवं संरक्षण करना मानव का मुख्य कर्तव्य है।

2.8 सारांश :–

सभी जीवित जीवधारी और उनका पर्यावरण परस्पर संबंधित है एवं एक दूसरे पर अनेक प्रकार से प्रभाव डालते है। पर्यावरण अनेक परस्पर सम्बंध कारकों का जाल है, बहुत जटिल है। इसमें जातियाँ अपने जेनेटिक पूल के सरंक्षण द्वारा बढ़त एवं विकास करती है, अपनी सरंचना, क्रिया और, प्रजनन में एक रूपता बनाऐं रखती है। साथ ही संरचनात्मक एवं क्रियात्मक रूप से बदलते पर्यावरण में समायोजन भी दर्शाती है। जीवों की गतिविधियों से पर्यावरण में परिवर्तन हो रहा है विभिन्न प्रकार के जीवों के विकास के क्रम को अनुक्रमण कहते हे। समुदाय की चरम अवस्था जो कि स्वय को वातावरण के संतुलन में समायोजित कर सकती है, Climax या चरम अवस्था कहते है। क्लीमेन्ट्स और शेल्फ़ोर्ड ने "बायोम' की अवधारणा प्रस्तुत की समान जल वायवीय स्थितियों में एक से अधिक समुदाय कुछ चरमावस्था को पहुंचते हुऐ और शेष अनुक्रमण के विभिन्न चरणों में एक साथ विकसित हो सकते है। एक ही जलवायु से संबंधित यह अनेक समुदायों का मिश्रण जिसमें विभिन्न जन्तु पेड़–पौधें है। उपर्युक्त विवरण में पारिस्थितिकी की मूल अवधारणा का संरचनात्मक स्वरूप स्पष्ट हुआ है। इसके क्रियात्मक स्वरूप में पारिस्थितिकी तंत्र की संकल्पना से संरचनात्मक एव क्रियात्मक स्वरूप को बल मिला ।

बोध प्रश्न

1. बायोम एवं बायोस्फीयर को परिभाषित कीजिए?
2. प्रकृति के सन्तुलन में जैव विविधता के महत्व पर प्रकाश डालिए?
3. समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र में अजैविक घटकों के मुख्य बिन्दु लिखिए?
4. भारत की प्रमुख पारिस्थितिकी प्रणालियों को सूचीबद्ध कीजिए?
5. राजस्थान में मरूस्थलीय क्षैत्र में पाये जाने वाले पौधों एवे जीव-जन्तुओं का विवरण दीजिए?
6. मरूस्थल पारिस्थितिकी तंत्र के भौतिक कारको को सूचीबद्ध कीजिए?
7. मरूस्थल पारिस्थितिकी तंत्र में जैविक घटकों के मुख्य बिन्दु लिखिए?

2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. Billihgs W.D (1971) Plant, Man and the Ecosystem, Macmillan.
2. Dogra, Bharat (1980) Forest and People, Himalaya Darshan Prakashan Smiti, Rishikesh.

3.	Furley, P.A.; & Newey, W.W	(1983)	Man and the Biosphere, Butterworths, Landon
4.	UNESCO	(1970)	Use and Conservation of Biosphere, Natural Resources Research–10, Paris.
5.	वी.के. श्रीवास्तव एवं राव	(1991)	पर्यावरण और पारिस्थिनिकी, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
6.	अरूण रघुवंशी	(1987)	पर्यावरण तथा प्रदूषण, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
7.	हरिशचन्द्र व्यास	(1989)	जनसंख्या प्रदूषण एवं पर्यावरण, विद्या विहार, नई दिल्ली
8.	Flanagan,D	(1970)	The Biosphere, W.h.Freeman & Co. Sanfrancisco.
9.	Smith G.H (ed.)	(1965)	Conservation of Natural Resources, New York.
10.	Thomas W.L.	(1964)	Man's Role in cahanging the face of the earth; Univ.of Chicago Press.
11.	Dadhich, L.K,	(1999)	Prioritisation of Biodiviversity in Rajasthan: Indian Science Congress, Pune
12.	Jain, S.	(2003)	Studies on Floristic Diversity in some protected areas of Kota region in Rajasthan. Ph.D.thesis, M.D.S.University, Ajmer
13.	Sharma, N.K.	(1986)	Taxonomical and Phytosociological studies on vegetation of Jhalawar and its environs Ph.D.thesis University of Rajasthan, Jaipur
14.	Gadgil, M.	(1991)	Conserving biodiversity saving subcontinents wealth. Survey of the environment, Ed. N. Ravi. The Hindu, Madras, pp.140 141.

इकाई–3

Relationship of Man and Environment

मानव का पर्यावरण से संबंध

इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य
3.2 पर्यावरण संकल्पना
3.3 मानव प्रकृति की देन
3.4 नियतिवाद या निश्चयवाद
3.5 सम्भववाद
3.8 नव–निश्चयवाद
3.7 मानव पर्यावरण संबंधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन
3.8 जनसंख्या एवं उनका वातावरण के अनुसार वितरण
बोध प्रश्न–1
3.9 सामाजिक मुद्दे तथा पर्यावरण
3.10 पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य
3.11 जनसंख्या और पर्यावरण
3.12 सारांश
3.13 स्व मूल्यांकन प्रश्न
3.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.1 उद्देश्य:–

1. इस इकाई की समाप्ति पर शिक्षार्थी मानव एवं पर्यावरण के बीच संबंधों की स्थिति की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. पर्यावरण एवं मानव के संबंध का आधार जान सकेंगे।
3. प्राकृतिक परिवेश के प्रभाव को समझ सकेंगे।
4. पर्यावरण संरक्षण जागरूकता के प्रति अभिरूचि विकसित कर सकेंगे।

3.2 पर्यावरण संकल्पना:–

पर्यावरण जीवन का स्त्रोत है जो अनादि काल से पृथ्वी पर मानव एवं समूर्ण जीव जगत् को न केवल प्रश्रय देता रहा है अपितु विकास के प्रारम्भिक काल से वर्तमान तक व्यक्तित्व में बनाये रखने का आधार रहा है और भविष्य का जीवन भी इसी पर निर्भर करता है। वायु जल, भूमि, जीव–जन्तु तथा वनस्पति पर्यावरण के मूल घटक है, जिनकी क्रिया–प्रतिक्रिया से सम्पूर्ण जीव मण्डल परिचालित होता है।

सामान्य अर्थो में पर्यावरण उस सकल दृश्य–अदृश्य तत्वों के लक्षणों व प्रभाव को कहते हैं जो किसी स्थान पर वस्तु या वहाँ के ज़ैव स्वरूप के निकट से घिरे हुए अथवा बाँधे हुए हैं, एवं

उसकी कार्य प्रणाली को प्रत्यक्षत: प्रभावित करते है। जीव–मण्डल में जीवन का उदभव, विकास एवं विलुप्त होना इस तथ्य पर निर्भर करता है कि प्रकृति अथवा प्राकृतिक वातावरण के साथ उसका कितना समन्वय एवं सामन्जस्य है। भौगोलिक पर्यावरण से तात्पर्य ऐसी दशाओं से है, जिनका अस्तित्व मनुष्य के क्रिया–कलापों से अप्रभावित है अर्थात् यह पर्यावरण मानव रचित नहीं है, और जो कि बिना मनुष्य के व्यक्तित्व एवं कार्यो से प्रभावित हुए स्वत: स्वरूपित एवं परिवर्तित होते हैं। मनुष्य के सम्बन्ध में भौगोलिक पर्यावरण से अभिप्राय भूमि या मानव को चारों ओर घेरे उन सभी भौतिक स्वरूपों से है, जिनमें वह रहता है, जिनका उसकी आदतों एवं क्रियाओं पर प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के स्वरूपों में, भूमि का धरातल, उसके भौतिक एवं प्राकृतिक संसाधन, मिट्टी की प्रकृति (उपजाऊपन व जल उपलब्धता), उसकी स्थिति (महाद्वीपीय, द्वीपीय, तटीय या अन्तर्देशीय). जलवायु, वनस्पति, खनिज सम्पदा, जल–थल का वितरण, पर्वत, मैदान, वनस्पति एवं खगोलीय शक्ति–सौर ताप आदि जो कि पृथ्वी पर घटित होती है एवं मानव को प्रभावित करती है।

पर्यावरण व मानव का संसबंध भौगोलिक अध्ययन का मूलाधार है क्योंकि इसी संबंध से सांस्कृतिक एवं आर्थिक दृश्यावली का निर्माण होता है। वास्तव में मानव–पर्यावरण संबंध एक ऐसा विषय है जो मानव की विकास यात्रा का परिचायक है तथा अनेक वर्तमान पर्यावरणीय समस्याओं का कारण है, क्योंकि मानव अपने विकास हेतु पर्यावरण का उपयोग करता है। जब तक यह उपयोग सामंजस्यपूर्ण होता है, पारिस्थितिक संतुलन बना रहता है किन्तु जैसे ही प्राकृतिक तत्वों के शोषण में वृद्धि होती है, इस संतुलन में व्यतिक्रम आता है और अनेक पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देता है।

3.3 मानव प्रकृति की देन :–

मानव अन्य जीवों की भाँति प्रकृति की देन है। यद्यपि यह प्रकृति की अनुकूलता में पोषित हुआ फिर भी उसमें प्राकृतिक प्रतिकूल परिवेश से निरन्तर संघर्ष करने की क्षमता से ही उसका विकास होता रहा। मानव का क्रमिक विकास जीवों के विकास एवं परिवेश समायोजन की कडी का महत्वपूर्ण अंग रहा है। अत: प्राकृतिक परिवेश का प्रभाव उसके विकास के निकट से सम्बन्धित माना गया है। जब से मानव ने अभिव्यक्ति विधियों एवं भाषा का विकास किया तभी से वह प्रकृति के प्रभाव को विशेष रूप से अभिव्यक्त करता रहा। इसी कारण प्राकृतिक परिवेश का अध्ययन, मानव सम्बन्धी विज्ञान एवं शास्त्रों में, अभिन्न अंग बन गया। यूनान काल से भौगोलिक संदर्भ में मानव के स्वभाव, निवास के विकास एवं प्रदेशों के तात्कालिक एवं परिवर्तित स्वरूप पर प्राकृतिक परिवेश के प्रभाव को स्पष्ट रूप से उल्लिखित करने का प्रयास किया गया है।

इसमें प्रकृति मानव एवं क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है एवं उसके विभिन्न घटक जैसे धरातल, जलवायु, संसाधन आदि की भूमिका नियंत्रणकारी रह सकती है, को स्पष्ट किया गया है। इसी प्रभाव को सुव्यवस्थित स्वरूप देकर नियतिवाद या निश्चयवाद की संकल्पना का नाम दिया गया है।

3.4 नियतिवाद या निश्चयवाद:–

अति प्राचीन काल से ही मानव ने प्रकृति को सहज रूप में ही सार्वभौम मान लिया। उसके इस विश्वास को धर्म एवं धर्म के नाम पर स्थापित परंपराओं ने दृढ़ता प्रदान की। यही नियतिवाद का जन्म था। नियतिवाद अर्थात् नियति (प्रकृति) ही सर्वेसर्वा है, को ही निश्चयवाद कहा गया। उस काल में मानव शरीर रचना, आचार–विचार, सामाजिक संगठन, धार्मिक संस्थाएँ एवं क्षेत्रों का राजनीतिक स्वरूप आदि के विविध विकास को नियतिवाद द्वारा निर्धारित होने को माना गया है। हिप्पोक्रेट्स, अरस्तु जैसे सुप्रसिद्ध विद्वानों ने जलवायु भौतिक स्वरूप एवं मिट्टी के प्रभावों का स्पष्ट उल्लेख करते हुए बताया कि किस प्रकार पूर्वी भूमध्य सागर के निवासी विश्व के अन्य सभी (ज्ञान) क्षेत्रों के निवासियों से अधिक चतुर, आकर्षक, योद्धा, कूटनीतिज्ञ, सफल शासक, आदि–आदि गुणवाले होते हैं। ऐसे सभी गुणों के लिए उपयुक्त विद्वानों ने प्रकृति के विशिष्ट पर्यावरण (परिवेश) को विशेष महत्त्व दिया है।

3.5 संभववाद:–

पर्यावरणवाद या नियतिवाद से यह अनुभव किया कि मानव की क्षमता एवं महत्ता को नकारा जा रहा है, उसे एक निराश्रित एवं प्रकृति के हाथ का खिलौना माना जा रहा है जबकि वह अपने ज्ञान, क्षमता, तकनीक के आधार पर पर्यावरण को अपनी इच्छानुसार उपयोग में ले रहा है। संभववाद में मानव को उसका यथोचित स्थान प्रदान किया गया है तथा प्रकृति को उसका सहायक स्वीकार किया गया है न कि नियन्त्रक। संभववाद निश्चयवाद से भिन्न, मनुष्य की स्वतंत्रता में विश्वास रखता है जो भौगोलिक स्थिति (पर्यावरण) के अनुरूप ही क्रियाएँ न करके उसमें परिवर्तन लाता है। प्रकृति मात्र एक मार्गदर्शन या सलाहकार के रूप में है। मानव उस सलाह पर चलने को बाध्य नहीं अपितु वह उसको अपने अनुकूल परिवर्तन करने की क्षमता रखता है।

3.6 नव–निश्चयवाद:–

मानव पर्यावरण सम्बन्धों को प्रतिपादित करने हेतु उपर्युक्त वर्णित नियतिवाद और संभववाद को एकांगी या अतिवादी स्वीकार कर उसके स्थान पर एक मध्यमवर्गी विचारधारा का विकास हुआ जिसे नव–निश्चयवाद (Neo–determinism) या आधुनिक–नियतिवाद (Present day determinism) का नाम दिया गया। इस विचारधारा के अनुसार प्रकृति का प्रभाव मानवीय क्रियाओं पर पडता है, मानव अपने कौशल एवं ज्ञान से पर्यावरण की अनेक दशाओं को अपने अनुकूल कर लेता है या उनके अनुरूप स्वयं हो जाता है। अर्थात् वह एक सीमा तक ही पर्यावरण को पीरवर्तित करने की सामर्थ्य रखता है। वास्तव में न तो प्रकृति का मानव पर पूरा नियंत्रण है और न ही मानव प्रकृति का विजेता है, दोनों का एक दूसरे से क्रियात्मक संबंध है। प्रगति हेतु मानव के लिए आवश्यक है कि वह प्रकृति से सहयोग प्राप्त करे। मानव एक देश के विकास की गति को तेज कर सकता है, मंद कर सकता है या रोक सकता है किन्तु वह पर्यावरण के दिशा–निर्देशों की अवहेलना नहीं कर सकता। एक विशेष पर्यावरण अथवा स्थिति में विभिन्न सम्भावनाओं के आधार पर विविध भौगोलिक प्रारूपों का विकास होता है। वातावरण एवं मानव दोनों को पर्याप्त महत्व दिया जाना चाहिए व एक–दूसरे का पूरक मानने के विचार की पुष्टि होनी

चाहिए। पहले जहाँ वातावरण के नियंत्रण की बात थी, वहाँ बाद में प्रभाव को माना जाने लगा तत्पश्चात् अनुकूलन को स्वीकारा जाने लगा।

3.7 मानव पर्यावरण संबंधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन :–

मानव–पर्यावरण संबंधों के विश्लेषणात्मक अध्ययन में जो तथ्य सामने आये हैं – उनमें प्रकृति और मानव दोनों का महत्व है। कृतिवाद के अनुसार मानव की क्षमता एवं शक्ति का विशेष महत्व है। वह पर्यावरण को एक संभावित स्थिति तक परिवर्तित कर सकता है, उदाहरणार्थ: सिंचाई सुविधा द्वारा मरुस्थल में खेती करता है, सूर्य शक्ति से उर्जा प्राप्त करता है आदि – पर्यावरण का उपयोग करके ही मानव प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है, यह अवश्य है कि इसमें वह पर्यावरण को हानि पहुँचा रहा है, उसे विकृत एवं प्रदूषित कर रहा है किन्तु साथ में वह उसको संरक्षित भी करने का उपाय करता रहता है। प्राकृतिक पर्यावरण से समानुकूलन कर विभिन्न प्रकार से जीविकोपार्जन कर मानव प्रगति करता है। मानव की इच्छा एवं संकल्प कार्य करने की प्रवृत्ति महत्तपूर्ण है किन्तु उसकी आवश्यक परिस्थितियाँ एक ओर पर्यावरण से तथा दूसरी ओर विज्ञान एवं तकनीक से प्राप्त की जाती हैं।

मानव–पर्यावरण के संबंधों की आधुनिक अभिव्यक्ति पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण में परिलक्षित होती है, जिसमें मानव को पारिस्थितिक तंत्र का एक घटक माना जाता है। यह दृष्टिकोण प्राकृतिक पर्यावरण–मानव तथा तकनीकी विकास में समन्वय एवं संयोजकता का द्योतक है। पर्यावरण तथा मानव पृथक् न होकर एक ही तंत्र के अंग है तथा एक–दूसरे के पूरक हैं। पर्यावरण मानवीय कृत्यों का प्रेरक है तथा मानव अनेक कृत्यों से पर्यावरण को प्रमावित करता है। मानव–पर्यावरण का संबंध आपसी क्रिया–प्रतिक्रिया और आपसी परिवर्तन पर निर्भर है। पर्यावरण का मानवीकरण हो व मानव उसके महत्व को समझे, तभी सही अर्थो में विकास संभव है।

समान प्रकार के जीवों का सामूहिक समूह, जो एक निश्चित स्थान पर रहता है. उसे उस प्रजाति की जनसंख्या कहते हैं। प्रत्येक जीव चाहे वह जीव–जन्तु हो, पक्षी हो, वनस्पति हो – सभी की संख्या होती है और यह संख्या पारिस्थितिक चक्रद्वारा परिचालित होती है तथा उस चक्र को प्रभावित करती हे। मानवीय जनसंख्या अपने क्रिया कलापों से पर्यावरण को प्रभावित करती है और पारिस्थितिक चक्र में व्यधान कर संकट का कारण बनती है, किसी भूमि पर जनसंख्या का वितरण वहाँ के विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है – जैसे (1) भौतिक कारक - जलवायु मृदा परिस्थितियाँ, मौसम आदि (2) सामाजिक कारक – सामाजिक संधटन, राजनैतिक एवं आधुनिक विकास (3) आर्थिक कारक – अर्थ–व्यवस्था, औद्योगिक विकास आदि (4) जनसंख्या कारक -

3.8 जनसंख्या एवं उनका वातावरण के अनुसार वितरण:–

जनसंख्या का निवास एवं वृद्धि पर्यावरण की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। आज भी विश्व में अन्टार्क्टिका जैसा प्रदेश है जहाँ वर्ष भर हिमानी के जमाव के कारण मानव का निवास नही है, उच्च पर्वतीय क्षेत्र भी मानव रहित हैं। शुष्क मरूस्थली क्षेत्रों में भी अपेक्षाकृत कम जनसंख्या है तो दूसरी ओर समतल मैदानी प्रदेश जहाँ उपयुक्त जलवायु है – मानव संख्या का वहाँ केन्द्रीकरण है। जनसंख्या पर्यावरण के तत्त्वों द्वारा नियंत्रित है। तकनीकी विकास एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों से मानव अनेक क्षेत्रों को अपने रहने योग्य बना लेता है व इसी क्रम में जब

वह पर्यावरण से छेडछाड करता है तो वहाँ की पारिस्थितिकी को प्रभावित करता है जिससे अनेक समस्याएँ उभरकर आती हैं – जो निम्नांकित आरेखीय चित्र से स्पष्ट है :–

पर्यावरण–जनसंख्या–पारिस्थितिक संकट

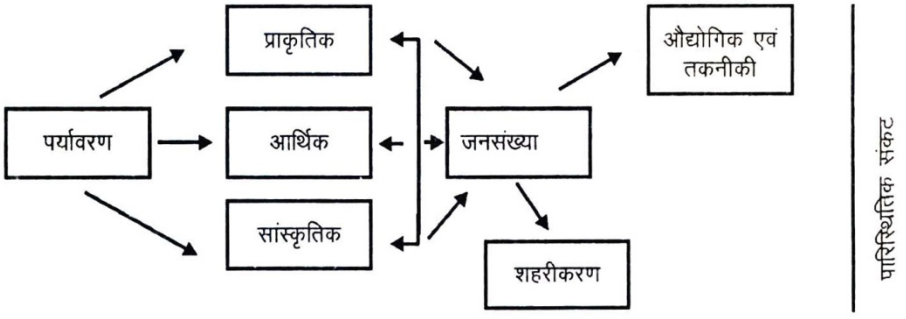

जनसंख्या का पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी से सीधा संबंध होता है अर्थात् यदि जनसंख्या अधिक होगी तो पर्यावरण का अधिक शोषण होगा और पारिस्थितिक –संकट अधिक हानिकारक होंगे।

उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर देने में आप सक्षम होंगे।

बोध प्रश्न-1

1. मानव का पर्यावरण से क्या संबंध है।
2. पर्यावरण के विभिन्न घटक मानव जीवन को प्रकार प्रभवित करते है।
3. नियतिवाद को परिभाषित कीजिए।
4. पर्यावरण के घटकों की अवहेलना के मानव जीवन समाप्त हो सकता है। इस कथन से आप कहाँ तक सहमत है?

3.9 सामाजिक मुद्दे तथा पर्यावरण :–

विश्व जनसंख्या की निरंतर वृद्धि तथा प्राकृतिक संसाधनों के विवेकहीन एवं अत्यधिक दोहन के फलस्वरूप पर्यावरण अवक्रमण की समस्या ज्वलंत रूप धारण कर रही है। शहरी क्षेत्रों में ऊर्जा की समस्या, जल संरक्षण वर्षा जल संग्रहण व जल प्रबंधन, जलवायु परिवर्तन, वैश्विक तापवृद्धि अम्लवर्षा व ओजोन छिद्र आदि प्रमुख सामाजिक समस्याएँ हैं। मानव के विभिन्न क्रिया कलापों के कारण प्राकृतिक संसाधन अत्यधिक प्रभावित होने जा रहे हैं, साथ ही जैव–विविधता में भी कमी होती जा रही है। इस कारण मानव की सुरक्षा एवं शांति को खतरा उत्पन्न हो गया है। वर्तमान समय तथा परिस्थितियों के मद्देनजर यह स्वीकार कर लिया गया है कि पर्यावरण संरक्षण विकास प्रक्रिया का अनिवार्य अंग है। अत: इस समस्या का समाधान संपोषित अथवा समायोजित विकास द्वारा ही संभव है।

3.10 पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य :–

पर्यावरण एवं मानव एक दूसरे से जुड़े हैं। इन्हें किन्हीं भी प्रयासों द्वारा पृथक् नहीं किया जा सकता। इसीलिए पर्यावरण में परिवर्तन का असर सीधा मानव जीवन पर पड़ता है और मानव

द्वारा लाए गए परिवर्तनों का असर पर्यावरण पर पडता है। पर्यावरण की गुणवत्ता में कमी का प्रभाव प्राणी एवं मनुष्य के स्वास्थ्य पर देखा ही जा सकता है। ये दुष्प्रभाव स्थानीय स्तर पर झीलों, नदियों, भूमिखण्ड आदि के प्रदूषित होने पर देखा जा सकता है। प्रादेशिक स्तर पर कृषि में उर्वरक, कीटनाशक का प्रयोग, मृदा अपरदन आदि का दुष्प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर सीधा पड रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न प्रदूषण अम्लवर्षा, ओजोन परत का क्षय, मरुस्थलीकरण आदि से मानव स्वास्थ्य बुरी तरह प्रभावित हुआ है। अत: मानव स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि पर्यावरण एवं इसके सभी घटकों को संरक्षित किया जाए। यू.एन.ओ. ने विश्व स्वास्थ्य संगठन और विश्व पर्यावरण कार्यक्रमों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रदूषण को रोकने एवं पर्यावरण संरक्षण पर जोर दिया है।

पर्यावरण संरक्षण जागरूकता के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवधिकार, नैतिक शिक्षा, महिला एवं बालकल्याण कार्यक्रम, पोषण कार्यक्रम व अन्य ऐसे कई सामाजिक कार्यक्रम देश के विभिन्न प्रदेशों में चलाये जा रहे हैं जिससे मानव जाति में पर्यावरण संरक्षण के प्रति अभिरूचि उत्पन्न हो व अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करने की जागरूकता उत्पन्न हो व प्रत्येक नागरिक पर्यावरण संरक्षण के प्रति समर्पित हो।

पर्यावरण का सबसे महत्त्वपूर्ण जैविक कारक– मानव है। मानव ने अपने परिश्रम, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के उपयोग द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर लिया है। मानव की पर्यावरण में सर्वोच्च स्थिति के कई आयाम हैं। मानव की बढ़ती जनसंख्या के कारण मूलभूत आवश्यकताओं जैसे भोजन, वस्त्र, आवास, जल, स्वास्थ्य सुविधाओं की संतोषपूर्ण आपूर्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सीमित व घटते पर्यावरणीय संसाधनों तथा निरंतर बढ़ती मानव जनसंख्या के बीच बढ़ती खाई के कारण समूर्ण पर्यावरण पर विपरीत असर पड़ रहा है। इस कारण मानव व पर्यावरण संबंधों के अध्ययन में जनसंख्या वृद्धि की विशेष भूमिका है। विश्व में मानव जनसंख्या वृद्धि की समस्या नियोजकों तथा नीति निर्धारकों के लिए गंभीर चिंता का विषय बन गया है।

3.11 जनसंख्या और पर्यावरण:–

सन् 2001 की जनगणना के आधार पर कहा जा सकता है कि भारत जनसंख्या संक्रमण की चतुर्थ अवस्था की ओर धीरे–धीरे अग्रसर हो रहा है। अनुमान है कि भारत 2020 के उपरान्त इस अवस्था में प्रवेश कर सकेगा जब यहाँ मृत्युदर में कमी के साथ–साथ जन्म दर में भी कमी आयेगी। इस तरह भारत में जनसंख्या वृद्धि के संदर्भ में स्थिरता प्राप्त करने में अपेक्षाकृत अधिक समय लगने की संभावना है।

भारत की जनसंख्या आकड़ों के अनुसार एक मार्च 2001 को 1,027,015,247 थी । भारत से अधिक जनसंख्या वाला दुनिया में केवल एक ही देश है और वह है चीन। दुनिया में केवल भारत तथा चीन दो ही ऐसे देश हैं जिनकी जनसंख्या 100 करोड़ के स्तर को पार कर चुकी है। भारत की जनसंख्या वृद्धि के बारे में यह एक भयानक किन्तु पूर्ण सत्य तथ्य है कि जितनी कुल जनसंख्या ब्राजील की है उससे अधिक जनसंख्या भारत में केवल एक दशक (1991–2001) में बढ गई है। उल्लेखनीय है कि पाकिस्तान, रूस, बांगला देश, जापान तथा नाइजीरिया की कुल जनसंख्या उतनी नहीं है जितनी भारत में एक दशक में बढ़ जाती है।

जनसंख्या की दृष्टि से विश्व के प्रमुख देशों की स्थिति को निम्न क्रमानुसार चित्रित किया जा सकता है :–

क्रमांक	देश	दिनक	जनसंख्या
1.	चीन	01.02.2000	1,277.6
2.	भारत	01.03.2001	1,027.6
3.	सं.रा.अमेरिका	01.04.2000	281.4
4.	इण्डोनेशिया	01.07.2000	212.1
5.	ब्राज़ील	01.07.2000	170.1
6.	पाकिस्तान	01.07.2000	156.5
7.	रुस	01.07.2000	146.9
8.	बांगला देश	01.07.2000	129.2
9.	जापान	01.10.2000	126.9
10.	नाइजीरिया	01.02.2000	111.5

विश्व जनसंख्या में भारत

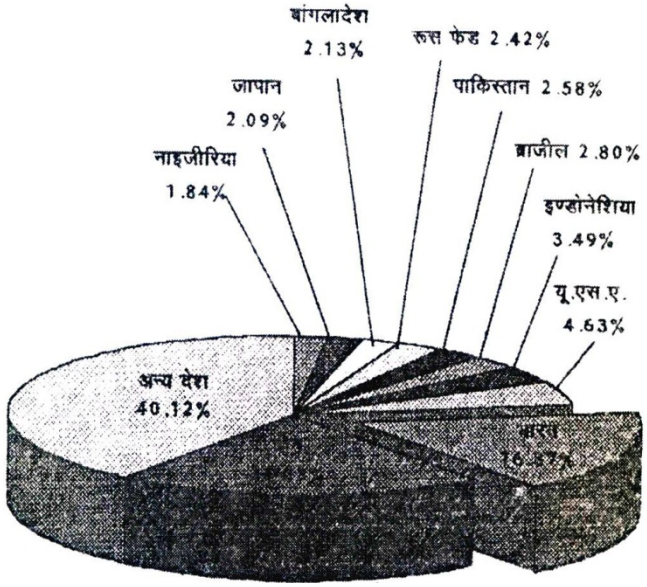

राज्य : 28	केन्द्रशासित प्रदेश : 7	जिले : 597	
जनसंख्या	व्यकित	पुरुष	महिलाएं
भारत	1,027,015,247	531,277,078	495,738,169
ग्रामीण	741,660,293	381,141,184	360,519,109
शहरी	285,354,954	150,135,894	135,219,060

जनसंख्या वृद्धि – दर (1991-2001)	कुल	प्रतिशत
व्यकित	180,627,359	21.34
पुरुष	91,944,020 20.93	
स्त्रियाँ	88,683,339	
स्त्री पुरुष अनुपात (प्रति हज़ार पुरुषों पर महिलाएं)		933
जनसंख्या का घनत्व (प्रति वर्ग किमी.)		324

जनसंख्या वृद्धि की तीव्र गति ने किसी चीज को सर्वाधिक प्रभावित किया है तो वह हमारा पर्यावरण है। बढ़ती जनसंख्या की मांग के लिए प्राकृतिक संसाधनों का जैसे जल, वायु, भूमि, खनिज, पेड–पौधे आदि का अंधाधुंध दोहन किया गया है, इसलिए आज पर्यावरण का कोई भी घटक प्रदूषण से अछूता नहीं है। औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप खुलने वाले कल–कारखानों द्वारा छोडे जाने वाले अवशिष्ट, ईधन, इमारती लकडी तथा कागज के लिए काटे जाने वाले जंगल, अधिक ऊर्जा उत्पादन हेतु स्थापित नाभिकीय भट्टियों से फैलता विकिरण आदि ने पर्यावरण को प्रदूषित किया है। राजस्थान जैसे मरूप्रदेश में तो जनसंख्या वृद्धि के परिणामस्वरूप पैदा होने वाले पर्यावरणीय असंतुलन की तो और भी अधिक संभावना है।

3.12 सारांश :–

औद्योगीकरण एवं शहरीकरण के फलस्वरूप शहरों में बढ़ती आबादी के दबाव के कारण आज एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा गंभीर समस्या बन गई है। सड़कों पर यातायात का बढता दबाव दुर्घटनाओं में बढोतरी का बडा कारण है। इन दुर्घटनाओं का शिकार होने वालों में युवाओं की संख्या तुलनात्मक दृष्टि से अधिक है। इसका कारण यह है कि युवाओं में धैर्य का प्राय: अभाव देखा गया है। जल्दी में वे वाहन प्राय: तेज भी चलाते हैं।

राजस्थान में एक ओर बढ़ती जनसंख्या के कारण पानी का दोहन बढ़ा है। वहीं दूसरी ओर निरंतर पडने वाले अकाल से भूमिगत जलस्तर में भी भारी गिरावट आई है। परिणामस्वरूप प्रदेश में पेयजल का संकट एक भारी चुनौती है। तेज गति से बढ़ती जनसंख्या के कारण तालाबों के पानी का उपयोग सिंचाई की बजाय पेयजल के लिए उत्तरोत्तर अधिक करना पडेगा। इसके कारण नगरों में पेयजल व्यवस्था पर उत्तरोत्तर अधिक दबाव पड़ेगा । बढ़ती जनसंख्या के दूरगामी प्रभाव तो है ही किन्तु दैनिक जीवन भी अब लोगों के लिए चुनौतीपूर्ण बन गया है।

इसी तरह की चुनौतियाँ जैसे कमाई के साधनों में गिरावट तथा रूपये का अवमूल्यन दैनिक जीवन को कठिन बना रहा है। कुल मिलाकर जनसंख्या वृद्धि हम सभी के लिए परेशानियों का सबसे बड़ा कारण है।

3.13 स्व मूल्यांकन प्रश्न :-

1. जनसंख्या वृद्धि का मानव जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है। समझाइए।
2. पर्यावरण एवं मानव का अंतर्संबंध बतलाइए।
3. जनसंख्या वितरण के विभिन्न कारकों को सूचीबद्ध कीजिए।
4. पर्यावरण से जुड़े विभिन्न सामाजिक मुद्दों पर टिप्पणी लिखिए।
5. पर्यावरण मे गुणवत्ता की कमी का पराभव मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है, स्पस्त कीजिए।

3.14 संदर्भ ग्रन्थ - सूची :–

1. Billihgs W.D (1971) Plant, Man and the Ecosystem, Macmillan.
2. Dogra, Bharat (1980) Forest and People, Himalaya Darshan Prakashan Smiti, Rishikesh.
3. Furley, P.A.; & Newey, W.W (1983) Man and the Biosphere, Butterworths, Landon
4. UNESCO (1970) Use and Conservation of Biosphere, Natural Resources Research–10, Paris.
5. वी.के. श्रीवास्तव एवं राव (1991) पर्यावरण और पारिस्थिनिकी, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
6. अरूण रघुवंशी (1987) पर्यावरण तथा प्रदूषण, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
7. हरिशचन्द्र व्यास (1989) जनसंख्या प्रदूषण एवं पर्यावरण, विद्या विहार, नई दिल्ली
8. Flanagan,D (1970) The Biosphere, W.h.Freeman & Co. Sanfrancisco.
9. Smith G.H (ed.) (1965) Conservation of Natural Resources, New York.
10. Thomas W.L. (1964) Man's Role in cahanging the face of the earth; Univ.of Chicago Press.
11. Dadhich, L.K, (1999) Prioritisation of Biodiviversity in Rajasthan: Indian Science Congress, Pune
12. Jain, S. (2003) Studies on Floristic Diversity in some protected areas of Kota region in Rajasthan. Ph.D.thesis, M.D.S.University, Ajmer

13. Sharma, N.K. (1986) Taxonomical and Phytosociological studies on vegetation of Jhalawar and its environs Ph.D.thesis University of Rajasthan, Jaipur

14. Gadgil, M. (1991) Conserving biodiversity saving subcontinents wealth. Survey of the environment, Ed. N. Ravi. The Hindu, Madras, pp.140 141.

इकाई–4

Personal and family responsibility about the Environment

पर्यावरण : पारिवारिक एवं व्यक्तिगत दायित्व

इकाई की रूपरेखा :

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

बोध प्रश्न– 1

4.3 वायु प्रदूषण और समाज

4.4 जल प्रदूषण और समाज

4.5 ध्वनि प्रदूषण और समाज

4.6 भूमि प्रदूषण और समाज

4.7 नैतिक प्रदूषण और समाज

बोध प्रश्न–2

4.8 पृथ्वी माता का महत्व

4.9 पर्यावरण के तत्व

4.10 पर्यावरण संरक्षण

4.11 पर्यावरण समस्या क्यों?

4.12 संसाधनों के उपयोग में मितव्ययिता–एक दूरगामी तथा स्थायी समाधान

4.13 मितव्ययिता–एक आवश्यक दृष्टिकोण

4.14 व्यक्तिगत कर्तव्य

4.15 सारांश

4.16 स्व मूल्यांकन प्रश्न

4.17 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.1 उद्देश्य :–

1. पर्यावरण के महत्व को समझ सकेंगे।
2. पर्यावरण के विभिन्न घटकों की जानकारी के साथ उनके संरक्षण की दिशा में प्रयासरत हो सकेंगे।
3. पर्यावरण के प्रति स्वयं का दायित्व निभाने हेतु प्रेरित हो सकेंगे।
4. प्राकृतिक एवं मानव जनित पर्यावरण में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।

4.2 प्रस्तावना :–

वायु, जल, मृदा, पादप और जीव जन्तु मिलकर पर्यावरण की रचना करते हैं। प्रकृति के उपरोक्त सभी घटक पारस्परिक संतुलन बनाये रखकर एक दूसरे को प्रभावित करते रहते है। जनसंख्या के बढते हुये दबाव, अनियोजित औद्योगिक विकास, खनिज दोहन, कृषि विस्तार,

धरती के गलत उपयोग, धनोपार्जन की हवस और वृक्षों की अंधाधुंध कटाई के कारण प्राकृतिक संतुलन बिगड जाने से पर्यावरणीय संकट के बादल मंडराने लगे हैं। प्रदूषण और पर्यावरण पर्यायवाची न होने पर भी विडंबना ऐसी हो गई है कि ये अंतरंग रूप से जुडे प्रतीत होते हैं।

आज ऐसा क्या हो गया है कि हम आवश्यक रूप से जाने कि पर्यावरण का अर्थ क्या है? क्यों हमें सुरक्षा करनी चाहिए हमारे पर्यावरण की? प्रदूषण क्यों फैल रहा है और हम इसे कैसे रोक सकते है? इस संदर्भ में हमारे दायित्व क्या हैं? हमारे संवैधानिक अधिकार और कर्त्तव्य क्या हैं?

मानव ने यदि केवल अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ही प्राकृतिक संपदाओं का उपयोग किया होता तो संभवत: आज पर्यावरण और प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र (इकोसिस्टम) की यह दुरावस्था नहीं हुई होती। विकास और प्रगति के नाम पर तथा अमीरों की अनन्त सुख सुविधाओं की पूर्ति हेतु जो अनियंत्रित और अनियोजित दोहन हुआ है उससे आज यह भीषण स्थिति निर्मित हुई है। संसार का आज कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जहां का प्राकृतिक परिस्थितिकी तंत्र (इकोसिस्टम) अप्रभावित हो।

जनसंख्या विस्फोट विश्व की जवलन्त एवं महत्वपूर्ण समस्या है। विश्व के मानचित्र में चीन के बाद भारत ही सर्वाधिक आबादी वाला देश है। सन् 2001 की जनगणना के आधार पर भारत की जनसंख्या 100 करोड से अधिक है, जो एक चौंका देने वाली स्थिति है और इससे भी भयावह है, भविष्य की जनसंख्या संभावनाए एवं उससे पर्यावरण पर पडने वाले प्रभाव।

मानव एवं प्रकृतिं का सदैव से ही अटूट सम्बन्ध रहा है। पर्यायरण एक प्रकृति प्रदत्त अमूल्य निधि है। इसका संरक्षण मानव जाति का परम दायित्व है। हमारा कर्तव्य हो जाता है कि हम पर्यावरण प्रदत्त संसाधनों का उपयोग विवेकपूर्वक करें तथा प्राकृतिक धरोहरों को परिशुद्ध रूप में आने वाली पीढ़ियों को सौंपकर भविष्य में भी इसी क्रम को बनाए रखने की चेतना का संचार उनमें करें ।

उक्त को पढ़ने व समझने के बाद आप निम्न प्रश्नों का उत्तर दे सकेगें।

बोध प्रश्न- 1

1. पर्यावरण से आप क्या समझते हैं ?
2. पर्यावरण के घटकों की जानकारी दीजिये।
3. प्रदूषण और पर्यावरण मे अंतर स्पष्ट कीजिए।
4. पर्यावरण संरक्षण हेतु सामाजिक दायित्वों का विवरण दीजिए।

4.3 वायु प्रदूषण और समाज :–

वायु मानव जीवन के लिए प्रथम आवश्यकता है। यदि प्राण देने वाली वायु ही दूषित होगी, तो वह जीवन के स्थान पर मृत्युदायिनी होगी। मनुष्य को भौतिक सुख–सुविधाएं प्रदान करने के लिए द्रुतगति से औद्योगिक इकाईयों की स्थापना हो रही है और औद्योगिक प्रतिष्ठानों की उंची–लंबी चिमनियों से निरन्तर निकलने वाला घूम्रविष वातावरण को विषमय बनाता जा रहा है। इसी प्रकार तेजी से बढते वाहनों की संख्या तथा गांवों में धुएंदार ईधनों के उपयोग से भी वायु में प्रदूषण फैल रहा है।

प्राचीनकाल में चारों और दूर–दूर तक हरियाली दिखाई देती थी। जनसंख्या वृद्धि के साथ

वह हरीतिमा नष्ट होती जा रही है। वन कटते जा रहे हैं, और उनका स्थान लेती जा रही है, बस्तियां व कल कारखानें। इससे पर्यावरण में आक्सीजन की कमी व कार्बन डाई आक्साइड व अन्य विषैली गैसों की मात्रा में वृद्धि हुई है। वायु प्रदूषण से आखें, गले व फेफडों से सम्बीधित रोग हो जाते हैं। भोपाल गैस काण्ड से हुई हानि को अभी तक भुला नहीं पाए है।

4.4 जल प्रदूषण और समाज :–

जल का प्रभाव सीधा ही मानव के स्वास्थ्य पर पडता है। जनाधिक्य के कारण नगरों व गांवों में जल स्त्रोत और अधिक प्रदूषित होते जा रहे हैं। जनसंख्या वृद्धि के कारण मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ताप बिजलीघर रिफाइनरीज, टेनरीज, रासायनिक उर्वरक व औषधियों के कारखानें आदि नदी व तालाबों के किनारे स्थापित किए जा रहे हैं। उनसे निकलने वाले अपशिष्ठ उत्पाद उन्हीं जलस्त्रोतों में बहाए जा रहे हैं। जरा विचार करें, कि क्या इन तालाबों व नदियों में स्नान करना पवित्रता प्रदान कर सकेगा? आज तो पावन गंगा व निर्मल यमुना भी पवित्रता की अंतिम सांसें ले रही हैं। एक शोध दल की रिपोर्ट के अनुसार महानगर दिल्ली में सबसे ज्यादा प्लास्टिक के कारखाने हैं, और उनसे एक टन साइनाइड (विषैला रासायनिक) प्रतिदिन यमुना में बहाया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त घरों व नगरों की सम्पूर्ण गन्दगी भी नालों व गटरों के माध्यम से प्रतिदिन नदियों में पहुंच रही है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ–साथ गन्दगी की मात्रा भी बढ़ रही है। यही कारण है कि देश में उपलब्ध जल का 75 प्रतिशत से ज्यादा प्रदूषित हो चुका है और जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ प्रदूषण का यह प्रतिशत और भी बढता चला जायेगा । गावों में तो जल स्त्रोत आमतौर पर कुएं व तालाब होते हैं। तालाब में नहाने, कपडे धोने, पशुओं को नहलाने व मलमूत्र विसर्जन के कारण तालाबों का पानी और भी प्रदूषित होता जा रहा है। प्रदूषित जल में नहाने–धोने व पानी पीने से वाइरल फीवर, पीलिया, हैजा व आन्त्रशोध जैसे रोगों की संख्या बढ़ती जा रही है।

4.5 ध्वनि प्रदूषण और समाज:–

आज सामान्य मानव ध्वनि प्रदूषण के प्रति बहरा हो गया है। वाहनों का चलना, हार्न का बजाना, मशीनों, लाउडस्पीकर, रेडियो, टेप रेकार्डर, बैण्ड–बाजे, टेलीविजन, स्टीरियो, वायुयान आदि से उत्पन्न शोर मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। गाजे–बाजे व नगाड़ों का तेज संगीत मानव को अच्छा लगता है परन्तु ये स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। जीन प्रदूषण से स्नायुरोग हृदयरोग, ब्लडप्रेशर, बहरापन व पागलपन तक की स्थिति पैदा हो सकती है।

मानसिक विकास के लिए शान्तिपूर्ण वातावरण अति आवश्यक है। शांत वातावरण में ही मानव चिंतन व सृजन अच्छी तरह कर सकता है।

4.6 भूमि प्रदूषण और समाज:–

बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए अधिक खाद्यान्न की उत्तपति हेतु भूमि में कृत्रिम खाद दिया जाता है और साथ ही फसलों को रोगों से बचाने के लिए उन पर दवाईयां छिडकी जाती हैं। ये सब भूमि पर अपना बुरा प्रभाव छोड़ती हैं। कुछ रासायनिक उर्वरक भूमि को कठोर बनाते हुए उसे अन्ततः बंजर बना देते हैं।

कृत्रिम खादों एवं कीटनाशक रासायनिकों के उपयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति धीरे–धीरे नष्ट हो जाती है, उपयोगी जीवाणु नष्ट हो जाते है तथा भूमि प्रदूषित हो जाती है। जनसंख्या नियंत्रण द्वारा भूमि की कुछ सीमा तक सुरक्षा की जा सकती है।

4.7 नैतिक प्रदूषण और समाज:–

जनसंख्या वृद्धि के कारण समाज में नैतिक मूल्यों में भारी गिरावट आती जा रही है। गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी एवं अशिक्षा आदि के फलस्वरूप व्यक्ति अपराध प्रवृति की ओर अग्रसर होने लगता है। इसी कारण समाज में चोरी, लूट–खसोट, हत्याएं व अन्य अनैतिक कार्यो में बढ़ोतरी हो रही है। जनसंख्या वृद्धि से ही परिवारों के विघटन की स्थिति सामने आ रही है। आवास का अभाव होता जा रहा है तथा जीविकोपार्जन के लिए पति–पत्नी दोनों का कार्यरत होना आवश्यक प्रतीत होने लगा है। परिणामत: परिवार में माता–पिता का बालकों पर उचित नियंत्रण एवं संरक्षण का अभाव होता जा रहा है। इसी उदासीनता के कारण युवा–असंतोष सामाजिक भ्रष्टाचार, अपराध, उदण्डता एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है। इस स्थिति पर जनसंख्या नियंत्रण द्वारा काबू पाया जा सकता है।

मत रोंदों, मत नष्ट करो, इस सुन्दरता की वादी को।
मत देर करो, अब रोक भी दो ,बढ़ती हुई आबादी को ।।

बोध प्रश्न–2

1. मानव और प्रकृति के बीच अंर्तसंबंधों को समझाइए।
2. वायु प्रदूषण और समाज पर टिप्पणी लिखिए।
3. जल प्रदूषण समस्या निवारण में समाज का दायित्व समझाइए।
4. ध्वनि प्रदूषण और समाज की व्याख्या कीजिए।
5. भूमि प्रदूषण और समाज के दायित्व को समझाइए।
8. नैतिक प्रदूषण और समाज की व्याख्या कीजिए।

4.8 पृथ्वी माता का महत्व :–

पृथ्वी हमारी मां है, और समस्त जीवधारी उसकी सन्तानें। पृथ्वी इसकी सन्तानों को वे सभी चीजें निर्लिप्त एवं सहज भाव से उदारतापूर्वक उपलब्ध कराती है, जो उसके सुखद एवं स्वच्छन्द जीवन यापन के लिए जरूरी है। यदि मनुष्य इन चीजों का उपयोग बिना संचय प्रवृति के आवश्यकतानुसार करता रहे, तो पृथ्वी काफी लम्बे समय तक उनकी जरूरतों को पूरा करने में समर्थ है। परन्तु मानव अपने लोभ व लिप्सा के कारण प्रकृति की अपरिमित निधियों का अविवेकपूर्ण दुरूपयोग कर प्राकृतिक सन्तुलन को नष्ट कर रहा है। फलस्वरूप वातावरण दूषित होकर मानव अस्तित्व खतरे में पड गया है।

शुद्ध पर्यावरण मानव के लिए प्रकृति प्रदत्त अनुपम उपहार है। मानव ने अपने पृथ्वी पर अवतरण के समय से ही प्रकृति का उपयोग एक सार्वभौम अथाह निधि के रूप में किया है। मानव अपने भोग विलास व सुख सुविधा में वृद्धि के लिए प्रकृति का निरन्तर दोहन एवं शोषण करता आ रहा है। बदले में कृतज्ञतास्वरूप वांछित सेवा सुश्रुष नहीं कर पाया है। शायद वह मूल गया कि वर्तमान पीढ़ी के सिर पर पूर्व पीढ़ी का एक उधार है। पूर्वजों ने हमें स्वच्छ व सुन्दर पर्यावरण आने वाली पीढ़ी को हस्तान्तरित करने के लिए विरासत में सौंपा था, जिसे हमने अज्ञानता एवं

स्वार्थवश सोने के अण्डे' प्राप्त करने की लोलुपता में विकृत कर दिया है। यह एक ऐसी भूल है, कि समय रहते अब भी हमने प्रकृति से छेड़खानी पर अंकुश नहीं लगाया, तो आने वाली पीढ़ी हमें कभी माफ नहीं करेगी ।

अनादि काल से चल रही मानव व प्रकृति की अन्तःक्रिया को मानव विकास की महत्वपूर्ण कड़ी माना जा सकता है। परन्तु मानव की स्वार्थपरक नीतियों के कारण यह अन्त:क्रिया एकतरफा ही रही है। आज विकास के नाम पर प्रकृति प्रदत्त ऊर्जा–स्त्रोतों को जिस प्रकार निचोडा जा रहा है, वह सोचनीय है। आइए, जरा सोचें! 21वीं सदी के लिए जिन विकास कार्यो के सपने हमने संजोए हैं, पर्याय ऊर्जा स्त्रोतों के बिना वे कैसे पूरे हो पाएगें? आज मानव अपने तकनीकी ज्ञान एवं आविष्कारों के माध्यम से पृथ्वी की सीमा को लांघ कर अन्तरिक्ष की ऊंचाइयों तक पहुंच चुका है। पृथ्वी के मूल तत्व मिट्टी, पानी, हवा, जीव जन्तु व वनस्पतियों की जिस समीकरण से मानव प्रगति की बुलन्दियों को छू सका है, अब वह समीकरण असंतुलित हो चुकी है।

प्रकृति व मानव के मध्य असंतुलित व एकतरफा अन्तक्रिया के फलस्वरूप अनेक पर्यावरणीय समस्याओं ने जन्म लिया है। प्रदूषित वायु दूषित जल, मृदा अपशिष्ट, ऊर्जा संकट, रेडियोधर्मी व्यर्थ, प्रदूषण, कीटनाशकों एवं रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग, जनसंख्या में विस्फोटक वृद्धि, धूल–धुंआ, सिमटते गाँव व परसते शहर, जहर उगलती चिमनियां, शोर–गुल व कोलाहल से त्रस्त सड़कें, जहरीली भूमि, सूखते जल स्त्रोत एवं सिकुडती हरीतिमा आज के परिवेश की खुरदरी सच्चाइयां है। पर्यावरण की प्रतिकूल परिस्थितियों के फलस्वरूप जन्तुओं व वनस्पतियों की अनेक प्रजातियां लुप्त होती जा रही है। याददाश्तों की इस लाल सूची में अनेकों प्रजातियां जुड़ती जा रही हँ। यदि प्रकृति का इसी प्रकार अविवेकपूर्ण दोहन जारी रहा, तो वह दिन दूर नहीं जब जन्तुओं की होमो–सेपाइन्स प्रजाति का नाम भी इस लाल पुस्तिका में शामिल हो जायेगा । अत: हमें पर्यावरण विनाश को रोकने हेतु तत्काल प्रयास करने होंगे । पर्यावरण संकट की इन गंभीर चुनौतियों के बावजूद भी यदि हमने इनके हल को कल (भविष्य) के भरोसे छोड़ा तो संभव है, कल को देखने के लिए हम (मानव जाति) पृथ्वी पर न रहें।

इनसे भी उपर उठकर देखें तो गरमाता माहौल, तेजाबी वर्षा, ऊर्जा स्त्रोतों का दुरूपयोग और ओजोन परत का छिद्रीकरण आज की विश्वजनीन समस्याएं हैं, जिनसे हमारा देश भी अछूता नहीं है।

यद्यपि पृथ्वी पर प्राकृतिक संसाधन अपरिमित हैं, परन्तु वैज्ञानिकों एवं तकनीकी विकास के कारण जिस तेजी से उनकी खपत हो रही है, उससे वे शीघ्र ही समाज हो जाएगें। यह स्थितियां मानव व्यक्तित्व को गम्भीर खतरों की चुनौतियां देती है। इन सबके चलते मानव जाति के पास एक ही विकल्प बचता है, और वह है, पुन: प्रकृति की गोद में लौटने का।

हम समझ लें, कि यह सुन्दर विश्व हमारी बपौती नहीं है, वरन् हमें पूर्वजों द्वारा विरासत में मिला है। हमें इसे सहेजकर आने वाली पीढ़ी को सौंपना है। अर्थात हमारे पास उधार ली गई मूल पूंजी के रूप में है। इस दायित्व का निर्वहन तभी संभव है, जब हम भौतिकवाद से पुन: प्रकृतिवाद की ओर अग्रसर हों।

अस्तु आइए, हम भारतीय पवित्र ग्रन्थों में वर्णित पंच महाभूतों की शरण लेकर एक कर पुन: प्रकृति की ओर लौट चलें। अग्नि, वायु, जल आदि में अपरिमित एवं अथाह उर्जा है। इसी कारण भारतीय संस्तुति में प्रकृति के प्रत्येक अवयव को पूजनीय माना जाता है। हमें प्राकृतिक

ऊर्जा–स्त्रोतों का संरक्षण करते हुए उनके विवेकपूर्ण उपयोग की तकनीक विकसित करनी होगी । तब ही साकार हो पायेगी, विनाश रहित विकास' (Development withot destruction) की संकल्पना।

4.9 पर्यावरण के तत्व :–

जीवों की अनुक्रियाओं को प्रभावित करने वाली समस्त भौतिक तथा जीवीय परिस्थितियों का योग पर्यावरण अर्थात जीवमण्डल कहलाता है। यह जीवमण्डल दूसरे शब्दों में जलमण्डल, स्थलमण्डल तथा वायुमण्डल के जीवनयुक्त भागों का योग है। अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में इन तीनों मण्डलों का विशद वर्णन प्राप्त है। इस पृथ्वी पर समुद्र तथा नदियां और अनेक जलधाराएं प्रवाहित होती हैं। इस पृथ्वी पर समुद्र तथा लाल रंग की मिट्टी की परतें हैं, हिम से आच्छादित ऊंची चोटियों वाले पर्वत, उसके वक्षस्थल में सोने तथा हीरे जैसी सम्पत्ति तथा इस पर मनुष्य, पशु पक्षी आदि सभी दो पैर तथा चार पैरवालों का वास है। सम्पूर्ण प्राणीजगत इसी भूमि पर तो श्वास लेता है। इसी पृथ्वी पर वृक्ष तथा वनस्पतियां हैं। चट्टानों, पत्थरों तथा धूल–मिट्टी से भरी हुई यह भूमि नमन योग्य है। इस जीवमण्डल के वायुमण्डल में मातारिश्वां–वायुगमन करती है जो स्थलमण्डल तथा जलमण्डल को जीवन, वृक्षों को गति देती है। यह वात, प्रवात, उपवात और अनुवात के रूप में सब ओर प्राप्त है। इसकी कोई सीमा नहीं है। यह चारों दिशाओं में, पूर्व, उत्तर, भूमि के नीचे, ऊपर, आगे, पीछे सभी ओर व्याप्त है।

जीवमण्डल अर्थात जैवमण्डल अर्थात पर्यावरण के तीनों मण्डल प्राणीजगत के जीवन के लिए उपयोगी हैं। यह जलमण्डल से जल, स्थलमण्डल से भोजन तथा वायुमण्डल से प्राण–वायुग्रहण करता है। संक्षेप में ये तीनों मण्डल एक दूसरे के पूरक हैं। इनमें से एक के नष्ट होने पर जीव का व्यक्तित्व सम्भव नहीं है। इन तीनों मण्डलों से प्राप्त ऊर्जा का अनुपाततः प्रयोग करके हम पर्यावरण को सुरक्षित रख सकते है। इन की ऊर्जा के अनुपात से अधिक प्रयोग ही प्रदूषण कहलाता है। यह प्रदूषण यक्तिगत, सामाजिक, देशिक तथा विश्व–व्यापी स्तर पर संभव है।

4.10 संरक्षण :–

पर्यावरण संरक्षण का मूल रहस्य भी वेद सूक्तों में निहित है। यहां स्पष्ट बताया गया है कि सृष्टा ही सफल संरक्षक हो सकता है। अतः वह आगे आने वाली प्रजाओं को पर्यावरण के संरक्षण का रहस्य समझा सकता है।

वन या वृक्ष लगाना एक बात है लेकिन उनका सदुपयोग करना एकदम अलग बात है। जैसा कि पहले बताया गया है, 88 प्रतिशत लकडी की खपत घरों में ऊर्जा के लिए होती है। यदि अच्छे व बेहतर किस्म के चूल्हे, जो अपने ही देश में उपलब्ध भी हैं, के चलन को पूरे देश में फैलाया जा सके तो घरों में काम आने वाली लकडी की खपत को आधा किया जा सकता है। स्पष्ट है कि वनों का जो विनाश आज हो रहा है उस पर कितना प्रभावशाली असर इस प्रक्रिया से हो सकता है। इसका एक और महत्वपूर्ण योगदान यह भी रहेगा कि एक सामान्य परिवार लकडी पर कम खर्च करेगा। अतः उसकी क्रय–शक्ति बढ़ेगी और अन्ततः देश के आर्थिक विकास एवं औद्योगीकरण को बल मिलेगा।

4.11 पर्यावरण समस्या क्यों ?

पर्यावरण के संदर्भ में यह जान लेना नितांत आवश्यक है कि मानव विभिन्न संसाधनों का उपयोग अपनी आवश्यकताओं एवं इच्छाओं दोनों की पूर्ति के लिए करता है। यदि आवश्यकताओं की पूर्ति ही मानव प्रवृत्ति, होती तो कदाचित पर्यावरण समस्या भी नहीं होती। पर जीवन की गुणवत्ता का प्रश्न आवश्यकता पर कम, इच्छा पर ज्यादा निर्भर करता है और इच्छाएं अंतहीन हैं। अत: इन्हीं अन्तहीन इच्छाओं की पूर्ति के लिए मानव विभिन्न संसाधनों का उपयोग अलग–अलग रूप से करता रहा है। फलस्वरूप विभिन्न पदार्थो को भूमि, हवा एवं पानी, जहां से भी उन्हें प्राप्त किया जा सकता है, निकाला जाता है और इच्छाओं की पूर्ति के बाद फेंक दिया जाता है। कोई बुराई नहीं थी यह सब करने में, यदि पर्यावरण–संतुलन पर इनका बुरा असर नहीं होता । दुर्भाग्य, वास्तविकता इसके ठीक विपरीत है।

पदार्थो या विभिन्न संसाधनों की खपत में कमी लाना ही पर्यावरण समस्या का एक दूरगामी व स्थायी समाधान है। न तो प्रकृति से अधिक संसाधनों को निकालना पडेगा और न ही उन्हें पर्यावरण को आत्मसात करने की क्षमता से बहुत अधिक मात्रा में फेंकना पडेगा। इस कंजूसी का अर्थ यह कदापि नहीं है कि मनुष्य अपनी इच्छाओं का दमन करें। लेकिन यह नहीं है कि प्रकृति के सौन्दर्य को नष्ट किया जाए या संसाधनों का अंधाधुंध एवं अविवेकपूर्ण तरीकों से प्रयोग किया जाए। आवश्यकता है तो सिर्फ इतनी ही कि हम प्रकृति की देन का जब भी उपयोग करें तो मितव्ययिता बरतें, दुरूपयोग न करें, अपव्यय न होने दें।

4.12 संसाधनों के उपयोग मे मितव्ययिता–एक दूरगामी तथा स्थायी समाधान :–

मनुष्य जो कुछ चाहता है, केवल प्रकृति से ही प्राप्त करता है। जिसको वह प्राकृतिक रूप में काम में नहीं ले सकता, उसे उद्योगों में उपयोग योग्य वस्तुओं के रूप में परिवर्तित करता है। फिर उन पदाथों या वस्तुओं का उपभोग या उपयोग करता है और उपयोग के बाद या उपयोगिता समाप्त होने के बाद उन्हें फेंक देता है। यही सब कुछ प्रत्येक प्राणी अपने जीवनकाल में करता रहता है। इनमें से किसी भी क्रिया को लीजिए और जरा सोचिए कि क्या हम उसे शत–प्रतिशत कार्यकुशलता से करते हैं? हसका उत्तर सदैव नकारात्मक ही मिलेगा। इसका अर्थ यह है कि हम हर एक क्रिया में कुछ न कुछ अपव्यय करते हैं और वह अपव्यय निर्भर करता है क्रिया विशेष पर, काम में लाए जाने वाले उपकरणों पर, काम की विधि पर, तकनीकी पर, इत्यादि इत्यादि। इसलिए यदि इन क्रियाओं की कार्यकुशलता को सुधारा जाए तो निश्चित है कि अपव्यय घटेगा। जो मर्म की बात इस विश्लेषण से साफ–साफ सामने आती है, वह है कार्यकुशलता एवं उत्पादकता को बढ़ाना और अपव्यय को घटाना।

उत्पादकता या कार्यकुशलता को यदि बढ़ाना हो तो कुछ बातें आवश्यक हैं जैसे कि जब भी पदार्थ प्रकृति से निकाले जायें तो ऐसी तकनीक और विधि का प्रयोग किया जाए, कि केवल मुनासिब पदार्थ ही निकलें और यदि अवांछित पदार्थ भी साथ में निकले तो उनकी मात्रा कम से कम हो। साथ ही ऐसा करने में काम आने वाले संसाधनों जैसे उर्जा, मानव शक्ति, पानी, उपकरण इत्यादि की खपत कम से कम हो । यह भी ध्यान रखने योग्य बात है कि पदार्थो का आसवन इस प्रकार से और ऐसे स्थानों से हो कि स्थानीय पर्यावरण पर कम से कम असर हो।

आवश्यकता इस बात की है कि नये उपकरण व प्रणालियां विकसित की जाएं, जो उपरोक्त सभी अर्थो में अधिक उत्पादक तथा पर्यावरण संगत हो।

जैसा कि पहले कहा गया है, उत्पादन क्रियाओं में काम आने वाले पदार्थो का अपव्यय अपरिहार्य है। यह केवल तीन तत्वों पर निर्भर करता है। पहला यह कि किस वस्तु का उत्पादन किया जा रहा है। दूसरा उसके उत्पादन के लिए कैसी उत्पादन तकनीक को अपनाया गया है। अन्तिम व तीसरी बात यह है कि उस तकनीक को कितनी कार्यकुशलता से काम में लाया जाता है। इन तत्वों में उत्पादन के कई विकल्प ढूंढे जा सकते हैं, जिनके द्वारा अपव्यय को कम किया जा सकता है। जो भी पदार्थ अपवय स्वरूप फेंके जाते हैं, उनको फिर से एकत्रित एवं साफ करके उसी उद्योग या किसी और औद्योगिक इकाई में किसी और वस्तु के उत्पादन के काम में लाया जा सकता है। उद्योगों में इस तरह के कई अवसर मिल सकते है। आवश्यकता है तो केवल इस बात की कि ऐसे मौकों को योजनाबद्ध तरीके से ढूंढा जाए और उनसे लाभ उठाया जाए। ऐसा करने से प्रदूषण की मात्रा तो कम होती ही है, साथ ही लाभ में भी वृद्धि होती है।

4.13 मितव्ययिता -एक आवश्यक दृष्टिकोण:–

जहां तक आम जनता या नागरिकों द्वारा विभिन्न वस्तुओं के उपयोग का प्रश्न है, केवल इतना ही कहना काफी होगा कि किसी भी पदार्थ या वस्तु का इस्तेमाल अवश्य करें. लेकिन उनका जानबूझकर अपव्यय न करें वह चाहे पानी हो, विद्युत ऊर्जा हो, खाद्य पदार्थ हो या और कोई वस्तु, सामान या उपकरण। अपव्यय करते समय इस तर्क में कोई तुक नहीं है कि इसको वहन करने की अमुक अक्ति की आर्थिक सामर्थ्य है। अपव्यय तो अपव्यय ही है। उसका असर पर्यावरण पर उतना ही होगा, चाहे अपव्ययकर्ता अमीर हो या गरीब। यह भी समझ लेना जरूरी है कि अपव्यय द्वारा प्रदूषित पर्यावरण गरीब व अमीर, छोटे या बडे, अफसर या व्यापारी, सभी को समान रूप से प्रभावित करता है। अत: अपव्यय रोकना सभी के हित में है।

4.14 व्यक्तिगत कर्तव्य:–

मनुष्य समाज में रहने वाला एक सामाजिक प्राणी है। समाज के वातावरण को दूषित न होने देना उसका कर्तव्य है। पृथ्वी के प्रदूषण को रोकने के लिए व्यक्ति को आर्य बनना होगा । देवगुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही आसुरी प्रवृत्तियों से पृथ्वी को दूषित करने वाले अनार्य लोगों को नष्ट कर सकता है। पृथ्वी पर प्रदूषण फैलाने वाले तत्व वे हैं जो अपनी सामर्थ्यपूर्ण मानसिक तथा शारीरिक शक्तियों से पृथ्वीवासियों में द्वेषभाव, हिंसाभाव तथा स्वार्थभाव को जन्म देते हैं। यत्र–तत्र मंत्रों में द्वेष न करने की प्रार्थना यह स्पष्ट करती है कि सभी मालिन्यों का मूल द्वेष है। इसी द्वेष से मानव, प्रकृति द्वारा प्रदत्त ऊर्जाओं का दुरूपयोग कर पर्यावरण को दूषित करता रहता है। पृथ्वी की स्वाभाविक गन्ध को सुरक्षित रखने की प्रार्थना हमें मिट्टी की शक्ति का अनुपात से अधिक प्रयोग करने तथा कीटाणुनाशक औषाधी एवं कृत्रिम खादों के बहुतायत में प्रयोग करने से रोकती है। वर्षा द्वारा सींची गई खेती तथा सामाजिक रूप से प्राप्त कृषि ही उत्तम मानी गई है। पृथ्वी सभी रसायनों का घर है। मानव प्रयोग में पृथ्वी का नाश न करे जो आज लोमवश हो रहा है।

पर्यावरण को संरक्षित रखने के लिए प्रकृति तथा मानव का उचित समीकरण बहुत आवश्यक है। यदि मूक प्रकृति, मानव द्वारा बिना याचना किए उसको आवश्यकताओं की पूर्ति

करने के लिए हर पल तत्पर है तो मानव बुद्धि तथा वाणी से युक्त प्राणी अर्थात मानव द्वारा भी उसके संरक्षण का ध्यान रखना परम आवश्यक है तथा यह उसका सबसे पहला कर्तव्य है। संस्कृत साहित्य का बहु चर्चित मंत्र

ऊं पूर्णमदः पूर्ण मिदं पूर्णातपूर्णमुद्चयते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णावावशिष्यते ॥

इसी ओर संकेत है कि मनुष्य अपनी इच्छाओं को वश में रखकर प्रकृति से उतना ही ग्रहण करें कि उसकी पूर्णता को क्षति न पहुंचे। क्या सोने का एक अण्डा प्रतिदिन देने वाली मुर्गी से सभी अण्डों की एकदम प्राप्त करने की इच्छा उसके विनाश का कारण नहीं बन जाती?

पर्यावरण के तीन कारक – मृदा वायु तथा तापमान वेदों में वर्णित पृथ्वी लोक, अन्तरिक्ष लोक तथा द्युलोक अथवा आदित्यलोक हैं जो सर्वव्यापक शक्ति अर्थात विष्णु द्वारा सृष्ट (ऋ 1.154.1) तथा संरक्षित हैं (ऋ 1.542)

वेदों में यत्र–तत्र तीनों लोकों तथा प्रकृति के स्वरूप का अनेकशः सौन्दर्यपूर्ण विवरण (ऋ 1.115.1.10.121.1) यह स्पष्ट करता है कि ऋषि पर्यावरण के प्रदूषण के भय से आक्रान्त है तथा मानव को बारम्बार उसके संरक्षण के लिए सतर्क तथा सचेत कर रहा है। प्रकृति का अतिक्रमण तो देवों के लिए भी निषिद्ध है (ऋ 5.52.3. अतिक्रम्य न गच्छन्ति) (मरूतः), मरूतो नाह रिष्यथ (ऋ 5.54.4) फिर मानव की तो बात ही क्या है? सम्पूर्ण जैव मण्डल का नियमन ही जैवमण्डल की सुरक्षा है (ऋ 8.74 निमयायान यो गिरीर्न सिन्धव विद्यर्मणे। महे शुष्माय योनिरे)

4.15 सारांश :–

प्रकृति व मानव के मध्य असंतुलित व एकतरफा अन्तःक्रिया के फलस्वरूप अनेक पर्यावरणीय समस्याओं ने जन्म लिया है। प्रदूषित वायुदूषित जल, मृदा अपशिष्ट, उर्जा संकट, रेडियोधर्मी व्यर्थ, प्रदूषण, कीटनाशकों एवं रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग, जनसंख्या में विस्फोटक वृद्धि, धूल–धुंआ, सिमटते गांव व परसते शहर, जहर उगलती चिमनियां, शोर–गुल व कोलाहल से त्रस्त सडकें, जहरीली भूमि, सूखते जल स्त्रोत एवं सिकुड़ती हरीतिमा आज के परिवेश की खुरदरी सच्चाइयां है। पर्यावरण की प्रतिकूल परिस्थितियों के फलस्वरूप जन्तुओं व वनस्पतियों की अनेक प्रजातियां लुक होती जा रही है। याददाश्तों की इस लाल सूची में अनेकों प्रजातियां जुड़ती जा रही हैं। यदि प्रकृति का इसी प्रकार अविवेकपूर्ण दोहन जारी रहा, तो वह दिन दूर नहीं जब जन्तुओं की डोमो–सेपाइन्स प्रजाति का नाम भी इस लाल पुस्तिका में शामिल हो जायेगा। अतः हमें पर्यावरण विनाश को रोकने हेतु तत्काल प्रयास करने होंगे। पर्यावरण संकट की इन गंभीर चुनौतियों के बावजूद भी यदि हमने इनके हल को कल (भविष्य) के भरोसे छोड़ा तो संभव है, कल को देखने के लिए हम मानव जाति) पृथ्वी पर न रहें।

जनसंख्या विस्फोट विश्व की जवलन्त एवं महत्वपूर्ण समस्या है। विश्व के मानचित्र में चीन के बाद भारत ही सर्वाधिक आबादी वाला देश है। सन् 2001 की जनगणना के आधार पर भारत की जनसंख्या 100 करोड़ से अधिक है, जो एक चौंका देने वाली स्थिति है और इससे भी भयावह है, भविष्य की जनसंख्या संभावनाएं एवं उससे पर्यावरण पर पढ़ने वाले प्रभाव।

मानव एवं प्रकृति का सदैव से ही अटूट सम्बंध रहा है। पर्यावरण एक प्रकृति प्रदत्त अमूल निधि है। इसका संरक्षण मानव जाति का परम दायित्व है। हमारा कर्तव्य हो जाता है कि हम पर्यावरण प्रदत्त संसाधनों का उपयोग विवेकपूर्वक करें तथा प्राकृतिक धरोहरों को परिशुद्ध रूप

में आने वाली पीढ़ियों को सौंपकर भविष्य में भी इसी क्रम को बनाए रखने की चेतना का संचार उनमें करें ।

4.16 स्व मूल्यांकन प्रश्न

1. विनाश रहित विकास की संकल्पना पर एक लघु निबंध लिखिए।
2. जीव मण्डल के महत्व को प्रतिपादित कीजिए।
3. पर्यावरण के मूल तत्वों की जानकारी दीजिए।
4. पर्यावरण की समस्या पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
5. पर्यावरण संसाधनों में मितव्ययिता पर लेख लिखिए।
6. पर्यावरण संरक्षण हेतु व्यक्तिगत एवं सामाजिक दायित्वों को स्पष्ट कीजिए।

4.17 संदर्भ ग्रंथ सूची:–

एन्नारनमेंटल डिग्रेडेशन स्ट्रेटेजिस फार कन्ट्रोल, आलेख पब्लिशर्स, जयपुर
वायोडाइवरसीटी कंजरवेशन हिंमाशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर
पर्यावरण संरक्षण, नीरी नागपुर
पर्यावरण कुछ तथ्य, रेखांकन, कोटा

इकाई–5

Probleme of modern civilization: Population Explosion

आधुनिक सभ्यता की समस्याएं: जनसंख्या विस्फोट

इकाई की रूपरेखा :–

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 विश्व जनसंख्या वृद्धि

बोध प्रश्न–1

5.4 जनसंख्या का वितरण

5.5 भौतिक कारक

5.6 आर्थिक कारक

5.7 सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक

5.8 राजनैतिक कारक

5.9 विश्व में जनसंख्या का वितरण

बोध प्रश्न–2

5.10 विश्व में जनसंख्या घनत्व

बोध प्रश्न–3

5.11 जनसंख्या एवं पर्यावरण

5.12 सारांश

5.13 स्व मूल्यांकन प्रश्न

5.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

5.1 उद्देश्य:–

इस अध्ययन के पढ़ने के पश्चात आप :–

1. पर्यावरण में जनसंख्या से जुडी समस्या की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. पर्यावरण के विभिन्न घटकों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
3. पर्यावरण के सामाजिक सरोकारों की व्याख्या कर सकेंगे।
4. पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी में अंतर्संबंध की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

5.2 प्रस्तावना:–

पर्यावरणविदों के अनुसार जनसंख्या (Population) से आशय 'समान प्रकार के जीवों के सामूहिक समूह से है, जो एक निश्चित स्थान पर निवास करता हैं' । ("The Population Which has been define as a collective group of the same specis or other group within which individuals may exchange genetic information

occupying aparticulare"–Odum,Eugene,P–Fundamentals of Ecology,1971) यहाँ जनसंख्या से आशय मानव जनसंख्या (Human Population) से है, जिसके स्वयं के क्रिया–कलापों द्वारा पर्यावरण को प्रभावित किया जाता है, तथा जनसंख्या वृद्धि एवं निवास पर्यावरण सम्बन्धी परिस्थितियों पर ही मुख्य रूप से निर्भर करता है। वर्तमान में अण्टार्कटिका प्रदेश तथा विश्व के उच्च पर्वतीय प्रदेशों में हिम के जमाव तथा अन्य विषम पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण मानव निवास दिखाई नहीं देता। इसी प्रकार दुण्ड्रा प्रदेश, विषुवतरेखीय वन क्षेत्र, शुक मरूस्थलीय क्षेत्रों आदि में भी अपेक्षाकृत जनसंख्या का वितरण कम है, तो दूसरी ओर विश्व में जहां पर समतत्व मैदानी भाग हैं, जलवायु तथा वातावरण की परिस्थितियां मानव के लिए अनुकूल हैं, वहां मानव जनसंख्या का अधिक केन्द्रीकरण देखने को मिलता है। स्पष्ट है कि जनसंख्या पर्यावरण के विभिन्न तत्वों द्वारा नियंत्रित होती है, किन्तु मानव द्वारा वैज्ञानिक उन्नति तथा तकनीकी विकास के कारण अनेक क्षेत्रों को वह अपने

पर्यावरण – मानव जनसंख्या – पारिस्थितिक संकट

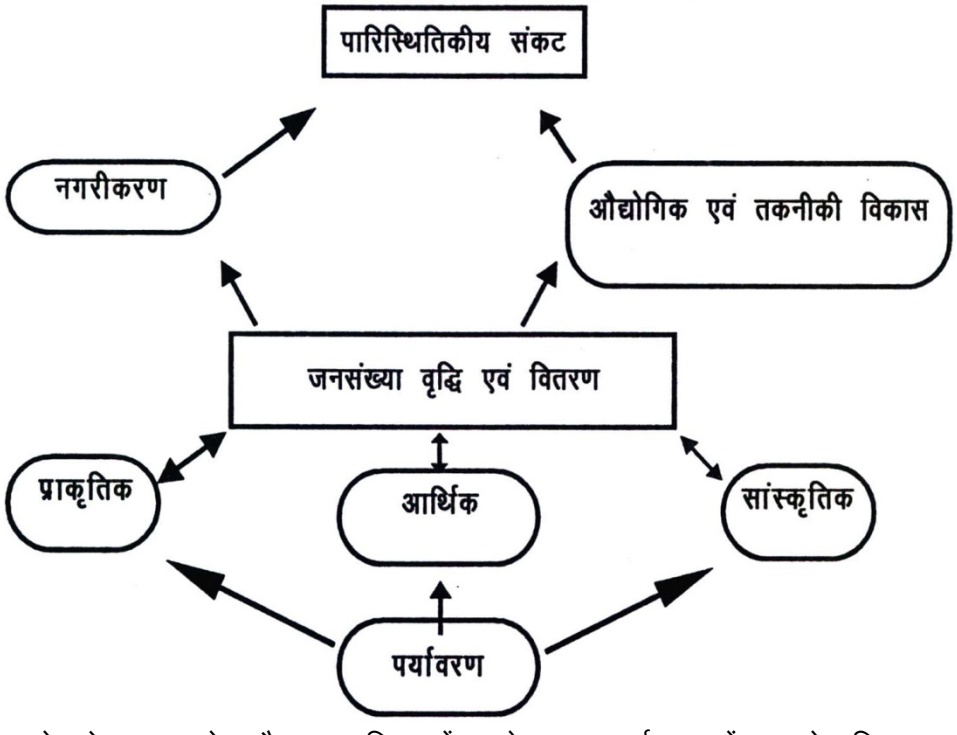

निवास के योग्य बना लेता है। इस प्रक्रिया में उसके द्वारा पर्यावरण में हस्तक्षेप किया जाता है, अन्ततः वह उस क्षेत्र की पारिस्थितिकी को प्रभावित कर अनेक समस्याओं को जन्म देता है, जो उक्त आरेख द्वारा स्पष्ट होता है।

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी का मानव जनसंख्या से प्रत्यक्ष संबंध होता है। स्पष्ट है कि जनसंख्या की अधिकता के कारण पर्यावरणीय शोषण भी अधिक होगा तथा पारिस्थितिकीय संकट भी अधिक नुकसानदायक होंगे। उक्त दृष्टि से जनसंख्या वृद्धि, वितरण एवं घनत्व संबंधी तलों का विवेचन आवश्यक है।

5.3 विश्व जनसंख्या वृद्धि:–

प्राचीन काल से ही मानव के व्यक्तित्व के साथ उसकी संख्या में भी लगातार वृद्धि दर्ज की जा रही है। मानव व्यक्तित्व के प्रारम्भिक काल में निश्चित रूप से मानव जनसंख्या सीमित थी तथा उपयुक्त क्षेत्रों में ही निवास करती थी, किन्तु शने: शने: इसमें इतनी अधिक वृद्धि हो गयी कि वर्तमान में यह ऐसे बिन्दु पर पहुंच गयी है, जिसके कारण विश्व के अनेक राष्ट्रों में चिन्ता का विषय बन गयी है। किसी भी प्रदेश या क्षेत्र ही जनसंख्या वृद्धि वहां की ऐतिहासिक घटनाओं. सामाजिक जागरूकता, सांस्कृतिक आधार, आर्थिक विकास तथा राजनीतिक विचारधारा की सूचक होती है। यद्यपि जनसंख्या संबंधी अन्य विशेषताओं की जनसंख्या वृद्धि से निकट की समग्रता होती है। वर्तमान में विश्व के अधिकांश देशों में तीव्र जनसंख्या वृद्धि सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या बन गयी है।

किसी क्षेत्र विशेष में एक निश्चित अवधि में निवास करने वाले लोगों की संख्या में परिवर्तन के लिए जनसंख्या वृद्धि शब्द का प्रयोग होता है। किसी भी क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि के लिए जन्म, मृत्यु तथा स्थानान्तरण को नियंत्रित करने वाले कारक ही मुख्य होते हैं। जनन क्षमता को विभिन्न व्यक्तिगत कारकों के अतिरिक्त प्रजाति से लेकर राजनीतिक विचारधारा तक के कारण प्रभावित कर सकते है, यद्यपि जन्मदर को प्रभावित करने बाते कुछ आधारभूत कारक उर्वरता (Fecundity), वैवाहिक आयु विवाह – अवधि (Duration of marrige), यौन स्वभाव (Sexual habit) आदि हैं। सामान्यत: जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने वाले सम्पूर्ण कारकों को तीन मुख्य वर्गों तथा जैविक (Biological), जनांकिकीय (Demographic) तथा सामाजिक – राजनैतिक (Socio–Political) में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम, जैविक कारकों (Biological Factors) में प्रजाति (Race), स्वास्थ्य एवं आनुवांशिक जननता (Genetic fertility) आदि को सम्मिलित क्रिया जाता है, जिनका जन्म पर नियंत्रण देखा जाता है। द्वितीय, जनांकिकीय कारकों (Demographic Factors) के अन्तर्गत आयु – यौन संगठन, आवास तथा आर्थिक कार्यो में स्त्रियों की भागीदारी की मात्रा महत्वपूर्ण कारक है, जिनका जन्म दर पर नियंत्रण होता है। तृतीय, सामाजिक – राजनैतिक कारकों (Socio–Political Factors) में वैवाहिक – आयु (Age of married) जन्म दर को प्रभावित करने वाला प्रमुख कारक है। इसके अतिरिक्त विवाह की अवधि (Duration of marriage), यौनस्वभाव (Sexual habits), धार्मिक भोगाधिकार (Religious presctiptions), शिक्षा (Education), परिवार में प्रतिष्ठा, आर्थिक नियंत्रण (Economic controls), सरकारी नीति (Government Policy), नगरीकरण की मात्रा आदि मुख्य हैं।

जन्म एवं मृत्यु दर के अन्तर से किसी भी क्षेत्र अथवा प्रदेश की जनसंख्या वृद्धि जानी जाती है। यदि जन्म दर मृत्यु दर से बहुत अधिक होगी तो वहां जनसंख्या की तीव्र वृद्धि होगी, इसके विपरीत यदि जन्म दर से मृत्यु दर अधिक होगी तो जनसंख्या में कमी आयेगी, जबकि यदि दोनों में आनुपातिक संबंध होगा तो जनसंख्या वृद्धि सामान्य होगी। किसी देश अथवा प्रदेश में समय के साथ जनसंख्या वृद्धि के प्रारूप को हैरिस एवं बिटेक ने पुस्तक 'Geography – An Introductory Perspective' में जनांकिकीय संक्रमण (Demographic Transition) के रूप में बताते हुए इसकी चार अवस्थायें बतायी हैं। प्रथम अवस्था के अन्तर्गत जन्म एवं मृत्यु

दर दोनों अधिक होने के कारण या तो जनसंख्या वृद्धि नहीं होती अथवा नगण्य होती है। वर्तमान में इस अवस्था में कोई देश नहीं है, यह केवल मात्र इतिहास का उदाहरण है। द्वितीय अवस्था वाले ऐसे देश हैं, जहां जन्मदर अधिक है तथा मृत्यु दर कम है, ऐसी स्थिति में जनसंख्या वृद्धि तीव्र गति से होती है। वर्तमान में अधिकांश विकासशील देशों की स्थिति इसी प्रकार की है। तृतीय अवस्था वाले देश ऐसे हँ, जहां वृद्धि दर मन्द है, अर्थात् जन्म दर कम होने के परिणामस्वरूप मृत्यु दर भी कम है, उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका। चतुर्थ अवस्था वाली स्थिति में जन्म एवं मृत्यु दर दोनों ही कम होने से स्थिर जनसंख्या वाली स्थिति है, यानी वास्तविक वृद्धि कम होती है, जैसे– स्वीडन, ग्रेट ब्रिटेन तथा अन्य यूरोपीय देश।

हैरिस एवं विटेक के अनुसार जनसंख्या संक्रमण मॉडल की चार अवस्थायें

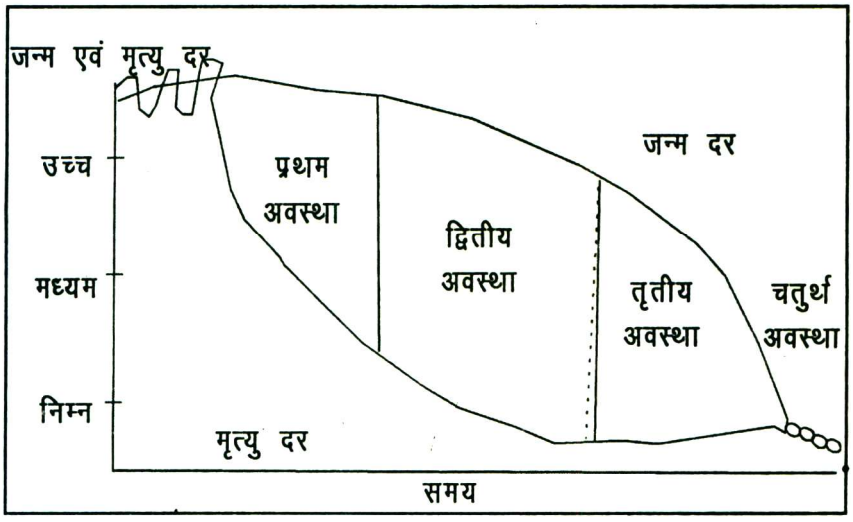

जनसंख्या वृद्धि संबंधी इतिहास पर दृष्टिपात करें तो इसमें स्थानिक सम्बद्धता के साथ निरन्तर वृद्धि हुयी है। प्रारम्भिक काल में जनसंख्या में वृद्धि अत्यन्त धीमी गति से होने का मुख्य कारण विषम जलवायु दशाऐं, धुमक्कडी जीवन, अल्पपोषण आदि को माना गया। शने: शने: कृषि विकास के कारण खाद्य आपूर्ति की निश्चितता तथा पर्याप्त पोषण के कारण समय के साथ मानव जीवन विभिन्न जलवायु दशाओं के अनुसार अनुकूलित होने लगा तथा जनसंख्या वृद्धि प्रारूप सामने आने लगा 1600 ई. से आधुनिक काल का प्रारम्भ माना गया है, तब विश्व की जनसंख्या लगभग 51.5 करोड थी, जो 1950 में बढ़कर लगभग 250 करोड हो गयी। पिछली तीन शताब्दियों में विश्व की जनसंख्या में अप्रत्याशित वृद्धि के लिए औद्योगिक क्रान्ति ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। 1750 से 1900 के मध्य के काल में जनसंख्या वृद्धि मध्यम रही, जबकि 1900 से 1950 के मध्य वृद्धि दर अत्यधिक तीव्र रही। 1950 के पश्चात् जनसंख्या वृद्धि में आकस्मिक उछाल आया जो निम्न तालिका से स्पष्ट है :–

विश्व में जनसंख्या वृद्धि की स्थिति (1650 से 2001)

वर्ष	जनसंख्या (दस लाख में)	औसत वार्षिक वृद्धि	
		दस लाख में	प्रतिशत में
1650	545	1.8	0.29
1750	728	3.5	0.44
1800	906	5.3	0.51
1900	1171	8.7	0.64
1920	1810	21.8	1.11
1940	2246	24.7	1.05
1950	2493	49.1	1.81
1960	2984	64.8	2.15
1969	3788	145.8	2.23
1981	4492	70.4	1.7
1990	5293	80.1	1.76
2001	6137	90.3	2.3

स्त्रोत : संयुक्त राष्ट्र संघ के जनसंख्या विभाग के अनुसार विश्व जनसंख्या वृद्धि

सम्पूर्ण पृथ्वी पर जनसंख्या वृद्धि दर समान नहीं रही है। यह भिन्नता हमें यूरोपीय विकसित राष्ट्रों तथा अन्य विकासशील राष्ट्रों के मध्य देखने को मिलती है। विश्व में प्रत्येक 30 सेकण्ड में 117 शिशुओं का जन्म होता है तथा लगभग 46 व्यक्तियों की मृत्यु अर्थात् 71 व्यक्तियों की वास्तविक वृद्धि होती है। अर्थात विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 7.5 करोड जनसंख्या अधिक हो जाती है। यदि यही स्थिति रही तो एक समय ऐसा आयेगा जब न तो लोगों के लिए पर्याप्त मात्रा में भोजन उपलब्ध हो पायेगा और न ही रहने के लिए आवास उपलब्ध हो पायेंगे। ऐसी स्थिति समूर्ण विश्व के पारिस्थितिक तंत्र के लिए खतरनाक होगी। विश्व में एक अन्य प्रवृत्ति सीमित प्रदेशों में जनसंख्या के जमाव की है, अर्थात् जहां पर पर्यावरणीय परिस्थितियां अनुकूल हैं, वहीं पर जनसंख्या का केन्द्रीकरण हो गया है।

निम्न तालिका द्वारा महाद्वीपों के अनुसार जनसंख्या वृद्धि संबंधी विविध तथ्य देखे जा सकते है:–

महाद्वीपों मे तुलनात्मक जनसंख्या वृद्धि दर (2001)

महाद्वीप	जन्म दर (प्रति हजार व्यक्ति)	मृत्तु दर (प्रति हजार व्यक्ति)	प्रकृतिक वृद्धि दर	उत्पादक दर
एशिया	22	8	1.4	2.7
अफ्रीका	38	14	2.4	5.2
यूरोप	10	11	–0.1	1.4
उत्तरी अमेरिका	14	9	0.5	2.0
दक्षिण अमेरिका	23	7	1.6	2.6
आस्ट्रेलिया	18	7	1.1	2.5
विश्व	22	9	1.3	2.8

स्त्रोत : जनसंख्या रिपोर्ट ब्यूरो,2001

अभी तक आपने जनसंख्या वृद्धि संबंधी विभिन्न पक्षों का अध्ययन किया। या आप निम्न प्रश्नों के उत्तर दे सकते हैं–

बोध प्रश्न-1

1. जनसंख्या वृद्धि कि प्रवृत्ति प्रारम्भिक काल से किस प्रकार कि रही है?
2. जनसंख्या वृद्धि को कौनसे कारक प्रभावित करते हैं।
3. जन्म दर अधिक होने पर जनसंख्या वृद्धि किस प्रकार कि होगी ?
4. जनांकिकीय संक्रामण (Dmographic Transition) के रूप मे हैरिस एवं विटेक ने कितनी अवस्थाये बतायी है?
5. विश्व मे स्थानिक रूप जनसंख्या वृद्धि दर किस प्रकार कि रही है?

5.4 जनसंख्या का वितरण :–

जनसंख्या वितरण का अर्थ मुख्य रूप से इसके स्थानिक वितरण पर अधिक बल दिया जाना है। जनसंख्या का विवरण सम्पूर्ण पृथ्वी सतह पर समान रूप से नहीं पाया जाता है। यह इस तथ्य से स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है कि विश्व की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या केवल मात्र 20 प्रतिशत भू–भाग पर ही केन्द्रित है, जबकि विषम परिस्थितियों वाले 80 प्रतिशत धरातत्व पर शेष 20 प्रतिशत जनसंख्या का विवरण देखने को मिलता है। जनसंख्या के इस विषम विवरण के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं जिनमें भौतिक आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक राजनैतिक आदि कारक मुख्य है:–

5.5 भौतिक कारक:–

(1) धरातल :– पृथ्वी सतह का लगभग 41 प्रतिशत भाग मैदानी होने के कारण यहाँ कृषि, उद्योग परिवहन आदि आर्थिक क्रिया कलापों का जाल फैला ज़ा है। यही कारण है कि विश्व की अधिकांश जनसंख्या नदियों द्वारा निर्मित मैदानी भू–भागों पर निवास करती है। जीविकोपार्जन हेतु मानव को इन मैदानी भागों में अनुकूल दशाऐं प्राप्त होती हैं, इसी कारण इन भागों में जनसंख्या का वितरण सघन रूप में देखने को मिलता है, उदाहरणार्थ – भारत में गंगा–ब्रम्हपुत्र

का मैदान, चीन में ह्वांग्हो–यांग्टीसीक्यांग नदी घाटियां, संयुक्त राज्य अमेरिका का इरावदी, मीकांग, मिनाम, मिसीसिपी मैदान, अफ्रीका का नील नदी का मैदान, आस्ट्रेलिया का मरे– डार्लिग नदियों का मैदान आदि मुख्य हैं। इसी प्रकार समुद्रतटीय भागों में स्थित मैदानी भागों में भी जनसंख्या का सघन वितरण देखने को मिलता है। इसके विपरीत हिमालय, आल्पस, रॉकी, एण्डीज आदि पर्वतों, तिब्बत एवं अनातोलिया का पठार आदि प्रतिकूल स्थितियों एवं विषम स्थलाकृति वाले भागों में जनसंख्या विवरण विरल पाया जाता है।

(2) स्थिति :– विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में जनसंख्या विवरण पर वहां की स्थिति का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। विश्व में भूमध्यरेखीय एवं शीत कटिबंधीय क्षेत्रों की तुलना में अधिकांश जनसंख्या का सघन वितरण शीतोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों की महत्वपूर्ण स्थिति के कारण अधिक देखने को मिलता है। समुद्रतटीय भागों में स्थिति संबंधी अनेक अनुकूल दशाऐं होने के कारण अधिकांश जनसंख्या का वितरण इन्हीं भागों में देखने को मिलता है, जबकि महाद्वीपों के आन्तरिक भागों में स्थित देशों में न्यूनतम जनसंख्या पायी जाती है।

(3) जलवायु :–जलवायु संबंधी कारक जनसंख्या के वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। शीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में जहाँ मनुष्य की कार्यकुशलता भी अधिक पायी जाती है, अधिकतम जनसंख्या निवास करती है. जबकि भूमध्यरेखीय क्षेत्रों में अधिक तापमान एवं वर्षा के कारण न्यून जनसंख्या निवास करती है। अति शुष्क एवं ऊष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों जैसे – सहारा, कालाहारी, थार, अरब, अटाकामा आदि मरूस्थलीय भागों में प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों के कारण आबादी कम पायी जाती है।

(4) मृदा :– जीवित रहने एवं जीविकोपार्जन का मानव का प्रमुख आधार भोजन, उपजाऊ मृदा वाले समतत्व भागों से कृषि फसलों के रूप में प्राप्त होता है। यही कारण है कि उपजाऊ मृदा वाले इन भागों में सघन जनसंख्या पायी जाती है। अत: प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से जनसंखा मृदा संसाधन पर निर्भर है। चीन, भारत, म्यांमार, बांग्लादेश, संयुक्त राज्य अमेरिका, मिश्र आदि देशों में नदियों द्वारा लायी गयी उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी के मैदानों में अधिकांश जनसंख्या निवास करती है। भारत का पश्चिमी बंगाल राज्य, नदी निर्मित मैदान में स्थित होने के कारण जनघनत्व 904 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से अधिक पाया जाता है।

(5) जल की आपूर्ति :–जल मानवीय जीवन के लिए महत्वपूर्ण भौगोलिक कारक है। इसी कारण जल की आपूर्ति जनसंख्या के वितरण को अधिकतम प्रभावित करती है। घरेलू औद्योगिक. सिंचाई, परिवहन आदि महत्वपूर्ण क्रिया कलापों मे जल का उपयोग किया जाता है। अत: समुद्रतटीय क्षेत्रों में जल की आसान प्राप्ति के कारण घनी आबादी पायी जाती है। इसके विपरीत मरूस्थलीय भागों में जनसंख्या वितरण के बहुत कम रहने का मुख्य कारण जल की कमी ही है।

5.6 आर्थिक कारक:–

(1) खनिज संसाधन :– यदि किसी क्षेत्र में खनिज सम्पदा का भण्डार है, तो जनसंख्या निवास के लिए अन्य कारकों के प्रतिकूल होने के बावजूद भी औद्योगिक एवं खनन क्रियाओं के कारण सघन जनसंख्या पायी जाती है।

(2) व्यक्ति संसाधन :– शक्ति के संसाधनों की प्राति विभिन्न औद्योगिक क्रियाओं परिवहन साधनों के संचालन हेतु अति आवश्यक है। अन्य कारकों के जनसंख्या निवास के अनुकूल न होते

हुए भी पेट्रोलियम, गैस, जल विद्युत आदि शक्ति संसाधनों के उत्पादक देशों में इसी कारण जनसंख्या सघन पायी जाती है।

(3) परिवहन संसाधन :– परिवहन के साधन उत्पादित वस्तुओं का आयात–निर्यात करने तथा मानव के विभिन्न स्थानों पर जाने हेतु एक प्रमुख कारक के रूप में हैं। समुद्रतटीय भागों में अधिकतम जनसंख्या पाये जाने का एक प्रमुख कारण परिवहन संबंधी सुविधाएं भी हैं।

(4) आर्थिक विकास :– जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न देशों में रोजगार, कृषि, उद्योग आदि कारकों की अनुकूलता होने से वहां भुखमरी एवं बेरोजगारी संबंधी समस्याऐं नहीं होती है। अत: ऐसे भागों में जनसंख्या की सघनता पायी जाती है, उदाहरणार्थ – संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, कनाडा, ग्रेट–ब्रिटेन, चीन, जापान. अर्जेन्टाइना आदि देश आर्थिक दृष्टि से उन्नत हैं, जबकि अफ्रीका महाद्वीप के अधिकांश देशों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण वहा न्यूनतम जनसंख्या निवास करती है।

5.7 सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक :–

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के कारण समाज के बिना नहीं रह सकता है। जनसंख्या वितरण को सामाजिक रीति–रिवाज, विभिन्न धर्म एवं धार्मिक विश्वास, लोगों का जीवन के प्रति दृष्टिकोण आदि कारक सर्वाधिक प्रभावित करते हैं। एशिया के दक्षिणी एवं दक्षिण पूर्वी भाग में स्थित देशों इन्हीं धार्मिक विश्वासों एवं भाग्यवादिता के कारण ही अधिक जनसंख्या वृद्धि पाई जाती है।

5.8 राजनैतिक कारक:–

जनसंख्या के वितरण को असुरक्षा, शान्ति, सरकारी नीतियां आदि कारक भी प्रभावित करते हैं, उदाहरणार्थ – दक्षिणी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, कनाडा आदि देशों की श्वेत नीति न्यूनतम जनसंख्या वितरण के लिये उत्तरदायी है। आतंककारी गतिविधियों वाले क्षेत्रों में भी जनसंख्या कम पायी जाती है, जैसे फिलस्तीन, इजराइल. भारत के जम्मू–कश्मीर, असम एवं नागालैण्ड राज्य आदि। जनसंख्या का अधिक निवास उन क्षेत्रों में पाया जाता है, जहां राजनीतिक स्थिरता है तथा शान्त एवं सुरक्षित हैं।

5.9 विश्व में जनसंख्या का वितरण:–

वर्तमान समय में विश्व की जनसंख्या लगभग 613.41 करोड (वर्ष 2000) है, विकासशील देशों में इसका 75 प्रतिशत से अधिक भाग निवास करता है, जबकि विकसित देशों में शेष भाग निवास करता है। विश्व संसाधन प्रतिवेदन के अनुसार विभिन्न महाद्वीपों में जैसे – एशिया में 350 करोड, अफ्रीका में 72.8 करोड़, यूरोप (पूर्व सोवियत संघ सहित) में 72.6 करोड, दक्षिणी अमेरिका में 31.9 करोड, उत्तरी अमेरिका में 29.3 करोड तथा ओशीनिया (आस्ट्रेलिया, न्यूजीलेण्ड, फिजी) में 2.8 करोड जनसंख्या निवास कर रही थी, जो कि ऐसा अनुमान है कि वर्ष 2025 में बढकर क्रमश: 495.9 करोड़, 149.5 करोड़, 71.8 करोड़, 46.2 करोड़, तथा 4.10 करोड़ हो जायेगी । इसी प्रकार विश्व की कुल जनसंख्या 2025 में लगभग 829 करोड़ होने का अनुमान है।

यदि विश्व के विभिन्न देशों में जनसंख्या के विवरण पर दृष्टिपात करें तो वर्ष 2000 में सर्वाधिक जनसंख्या वाला राष्ट्र चीन था, जिसकी जनसंख्या 127.31 करोड़ थी, तत्पश्चात् क्रमश:

भारत की 102.70 करोड, संयुक्त राज्य अमेरिका की 28.50 करोड, इण्डोनेशिया 20.60 करोड़ तथा ब्राजील की 17.20 करोड़ जनसंख्या थी। विश्व में विकासशील एवं कम विकसित देशों में ही सर्वाधिक जनसंख्या वृद्धि रही है। साथ ही इन क्षेत्रों में जनसंख्या एवं संसाधनों के

विश्व के विभिन्न देशों की जनसंख्या (2001)

क्र.सं	देश का नाम	जनसंख्या (मिलियन मे)
1.	चीन	1273.1
2	मध्य भारत	1027.0
3.	संयुक्त राज्य अमेरिका	285.0
4.	इण्डोनेशिया	206.0
5.	ब्राजील	172.0
6.	पाकिस्तान	145.0
7.	रूस	144.0
8.	बांग्लादेश	134.0
9.	जापान	127.0
10.	नाइजीरिया	127.0
11.	मेक्सिको	100.0
12.	जर्मनी	82.0
13.	वियतनाम	79.0
14.	फिलिपीन्स	77.0
15.	मिश्र	70.0
16.	टर्की	66.3
17.	इथोपिया	65.4
18.	थाइलैण्ड	62.4
19.	ग्रेट - ब्रिटेन	60.0
20.	फ्रांस	59.2
21.	इटली	57.8
	विश्व	6137.1

Source -Human Developement Report, 2002

मध्य का अनुपात लगातार बिगडता जा रहा है। 1992 के रियोडीजेनेरो पृथ्वी सम्मेलन तथा 2002 के जोहान्सबर्ग पृथ्वी सम्मेलन में इस विषय पर अनेक रूपों में चर्चा हुयी। स्थानिक दृष्टिकोण से यदि देखा जाये तो विश्व की 90 प्रतिशत जनसंख्या का वितरण उत्तरी गोलार्द्ध में तथा शेष 10 प्रतिशत दक्षिणी गोलार्द्ध में पायी जाती है। इसके लिए मुख्य रूप से स्थलीय वितरण, भौतिक, आर्थिक, सामाजिक. सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि कारक उत्तरदायी हैं। अनुकूल जलवायु तथा मिट्टी की उर्वरता के कारण दक्षिण – पूर्वी एशिया में सघन जनसंख्या पायी जाती है। चीन एवं भारत की लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या समुद्रतटीय एवं नदी घाटियों वाले क्षेत्रों में पायी जाती है। जनसंख्या संबंधी विभिन्न दशाओं को दृष्टिगत रखते हुए विश्व को मुख्यत: तीन भागों में विभक्त क्रिया जा सकता है।

1. सघन जनसंख्या वाले क्षेत्र – विश्व के सघन जनसंख्या वाले पांच क्षेत्र मुख्य हैं, जिनमें जनसंख्या घनत्व 100 अक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से अधिक है। इन क्षेत्रों में पूर्वी एशिया (चीन, जापान. दक्षिणी कोरिया, ताइवान व हांगकांग); दक्षिणी एशिया (भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, बांग्लादेश व नेपाल); सम्पूर्ण दक्षिणी – पूर्वी एशिया; उत्तरी – पश्चिमी यूरोप (ग्रेट–ब्रिटेन. जर्मनी, हालेण्ड, बेल्जियम, लक्ज़मबर्ग, फ्रांस, आयरलैण्ड. डेन्मार्क, इटली व स्पेन); तथा पूर्वी व उत्तरी अमेरिका (उत्तरी – पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिण – पूर्वी कनाडा आदि) आदि सम्मिलित हैं।

2. विरल जनसंख्या वाले क्षेत्र :– विश्व के 70 प्रतिशत भूभाग पर ऐसे क्षेत्र स्थित हैं, जहां पर विश्व केवल मात्र 5 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। यहां पर जनसंख्या घनत्व बहुत कम 10 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से भी कम पाया जाता है। उच्चावच, स्थिति, जलवायु आदि विषम परिस्थितियों के कारण इन क्षेत्रों में जनसंख्या विवरण का विरल रूप देखने को मिलता है। विश्व में इस प्रकार के क्षेत्रों के अन्तर्गत शुष्क मरूस्थल, पर्वतीय क्षेत्र, उच्च अक्षांशीय हिमाच्छादित क्षेत्र, अति ऊष्णार्द क्षेत्र आदि भू–भाग आते हैं।

3. सामान्य जनसंख्या वाले क्षेत्र :– इस प्रकार के भौगोलिक क्षेत्रों में वहाँ की पारिस्थितिकी जनसंख्या निवास हेतु सामान्य दशायें प्रदान करती है। प्रकृति के साथ अनुकूलन भी यहाँ अनेक क्षेत्रों में क्रिया जाता है। खनिज एवं ऊर्जा संसाधनों की उपलब्धता तथा आर्थिक क्रिया कलापों के कारण इन क्षेत्रों में सघन जनसंख्या पायी जाती है। इसके अतिरिक्त राजनैतिक कारणों से भी कुछ भागों में अधिक जनसंख्या पायी जाती है।

बोध प्रश्न–2

1. जनसंख्या विवरण से क्या आशय है?
2. जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले कारक क्या हैं?
3. राजनैतिक कारक जनसंख्या विवरण को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?
4. विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले प्रथम पाँच देश कौन से हैं?
5. विश्व के विभिन्न क्षेत्रों को जनसंख्या के दृष्टिकोण से कितने भागों में बांटा जा सकता है?

5.10 विश्व मे जनसंख्या घनत्व :–

जनसंख्या घनत्व से आशय जनसंख्या एवं धरातल से अनुपात से है।इसे प्रति इकाई क्षेत्र व्यक्तियों की संख्या के रूप में व्यक्त किया जाता है, तथा यह जनसंख्या जमाव की मात्रा का मापन है। विभिन्न विद्वानों द्वारा अनेकों प्रकार के घनत्व मापन के प्रयास जनसंख्या और संसाधन सबन्धों की सही जानकारी प्राप्त करने के लिए किये गये हैं। सामान्यता किसी प्रदेश अथवा क्षेत्र की कुल जनसंख्या को उसके क्षेत्रफल से विभाजित करके प्रति वर्ग किलोमीटर अथवा प्रति वर्ग मील जनसंख्या प्राप्त की जाती है। ऐसे घनत्व को गणितीय जनसंख्या घनत्व; ।तपजीउंजपब च्वचनसंजपबाद क्मदेपजलद्ध कहा जाता है। भूगोल एवं अन्य समाज विज्ञानों में इस प्रकार के अनुपात का बहुतायत से प्रयोग किया जाता है, क्योंकि इस प्रकार के आँकडे बड़ी आसानी से और विश्व स्तर पर प्राप्त हो जाते हैं। विश्व में जनसंख्या केवल कुछ ही क्षेत्रों में सीमित है। इस तथ्य की इस बात से पुष्टि होती है कि कुछ क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व 500 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से भी अधिक है, जबकि विश्व का 42 प्रतिशत स्थलीय क्षेत्र ऐसा है,

जहां जनसंख्या घनत्व एक व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से भी कम है। ऐसा देखा गया है कि कई क्षेत्रों में एक समान पर्यावरणीय स्थिति होने के बावजूद जनसंख्या का संकेन्द्रण असमान होता है, जिसके लिए वहां प्राकृतिक पर्यावरण के अतिरिक्त सामाजिक, आर्थिक व तकनीकी कारक उत्तरदायी होते हैं। अत: कहा जा सकता है कि जनसंख्या के वितरण व घनत्व को पर्यावरणीय व सांस्कृतिक तत्व अर्न्तसम्बन्धित होकर सामूहिक रूप से नियंत्रित करते हैं।

जनसंख्या घनत्व में विश्व स्तर पर बहुत अधिक असमानता पायी जाती है। जहां एक ओर विश्व के कुछ ऐसे भू–भाग हैं, जिनमें जनघनत्व एक व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से भी कम है, जैसे – ग्रीनलैण्ड, सहारा, साइबेरिया आदि तो दूसरी ओर सिंगापुर में जनघनत्व 4670 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। विश्व संसाधन के प्रतिवेदन के अनुसार विश्व का जनसंख्या घनत्व 44 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था, किन्तु इसमें क्षेत्रीय भिन्नता थी, उदाहरणार्थ – एशिया में जनघनत्व 112 व्यक्ति यूरोप में 32, अफ्रीका में 25. उत्तरी व मध्य अमेरिका में 21, दक्षिणी अमेरिका में 8 तथा ओशीनिया में 3 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था।

विश्व के महाद्वीपों तथा कुछ देशों का जनसंख्या घनत्व, 2000

महाद्वीप /देश	घनत्व (व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर)
सम्पूर्ण एशिया	112
1. सिंगापुर	4670
2. बांग्लादेश	997
3. कोरिया गणराज्य	456
4. जापान	337
5. भारत(2001)	324
6. लेबनान	294
7. श्रीलंका	300
सम्पूर्ण यूरोप	32
1. निदरलैंण्ड	469
2. बेल्जियम	312
3. जर्मन	235
4. ग्रेट ब्रिटेन	247
सम्पूर्ण अफ्रीका	25
1. मारीशस	550
2. रुआण्डा	322
3. नाइजीरिया	123
4. मिश्र	63
उत्तरी एवं मध्य अमेरिका	21
1. एल साल्वाडोर	278
2. हैटी	260
3. ट्रिनिडाड एवं टोबेगो	255
4. मेक्सिको	49

5. संयुक्त राज्य अमेरिका	27
सम्पूर्ण दक्षिणी अमेरिका	18
1. ब्राजील	191
2. कोलम्बिया	34
3. वेनेजुएला	25
4. अर्जेन्टाइना	12
कुल ओशीनिया	03
1. फिजी	43
2. न्यूजीलैण्ड	13
3. आस्ट्रेलिया	02
विश्व	44

जनसंख्या के वितरण एवं घनत्व को किसी मी देश में मुख्य रूप से भौगोलिक कारक आकर्षित करते हैं। जीविकोपार्जन हेतु मानव संसाधन के लिए सामान्य रूप से रोजगार के साधन आवश्यक हैं, इसी कारण पठारी एवं पहाडी भागों की तुलना में घने इसे हुए समतत्व मैदानी क्षेत्र जनसंख्या को अधिक आकर्षित करते है, उदाहरणार्थ – भारत में 2001 की जनगणना के अनुसार मध्यवर्ती मैदानी क्षेत्र में उत्तरप्रदेश में 16.6 करोड, पंजाव में 2.42 करोड, बिहार में 8.28 करोड, पश्चिमी बंगाल में 8.02 करोड, हरियाणा में 2.10 करोड तथा राजस्थान में 5.64 करोड जनसंख्या निवास करती थी. जो देश की कुल जनसंख्या का लगभग 40 प्रतिशत भाग था।

बोध प्रश्न-3

1. जनसंख्या घनत्व किसे कहते हैं?
2. विश्व मे जनसंख्या घनत्व प्रारूप किस प्रकार का है ?
3. सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व किन क्षेत्रों मे देखने को मिलता है ?
4. जनसंख्या घनत्व को कौनसे कारक प्रभावित करते हैं?

5.11 जनसंख्या एवं पर्यावरण:–

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि विश्व में जनसंख्या में तीव्र एवं नियमित वृद्धि दृष्टिगोचर हो रही है। यदि यह वृद्धि इसी प्रकार अनवरत रूप से जारी रही तो पर्यावरण पर इतना अधिक दबाव हो जायेगा कि इससे उसकी धारण एवं पोषण की क्षमता समाप्त हो जायेगी । अत: इस वृद्धि को नियंत्रित करने के लिये मानव को आवश्यक प्रयास करने होंगे अन्यथा प्राकृतिक अथवा पर्यावरणीय कारक इसे स्वयं नियंत्रित कर देंगे। यह नियंत्रण किसी भी रूप में हो सकता है, जैसे– बाढ़, अकाल, महामारी, युद्ध अथवा अन्य प्राकृतिक आपदायें। यदि मानव पर्यावरण का सीमा से अधिक शोषण करता है तो पर्यावरण जनसंख्या का पोषक नहीं रह जाता है तथा इस कारण पर्यावरण के विभिन्न घटकों के मध्य समन्वय समाप्त हो जाने के परिणामस्वरूप विपरीत प्रभाव पडने लगता है तथा अकाल मृत्यु का क्रम कई रूपों में जैसे महामारी या अकाल, बाढ़ अथवा सूखा भूमि का धसांव या समुद्री तूफान, ज्वालामुखी उद्‌गार अथवा भूकम्प आदि के रूप में प्रारम्म हो जाता है।

जनाधिक्य (Over Population) आधुनिक विश्व की सबसे बडी एवं महत्वपूर्ण चिन्तनीय समस्या है। जनाधिक्य कितनी जनसंख्या को कहा जाये यद्यपि इसकी व्याख्या करना कठिन है। किन्तु यह उस देश की उत्पादकता, आर्थिक स्थिति, तकनीकी एवं वैज्ञानिक क्षमता पर निर्भर करता है। वास्तविक रूप से वहां के पर्यावरण की पोषक क्षमता से ही इसका सही मूलांकन किया जा सकता है। विभिन्न विद्वानों इसके मापन के लिए जनसंख्या घनत्व या कृषि योग्य क्षेत्र या वास्तविक कृषि क्षेत्र अथवा कृषि कार्य में लगे मनुष्यों को आधार मानकर निर्धारण करते हैं। प्राकृतिक संसाधनों की तुलना में यदि जनाधिक्य है, तो उस स्थिति में बेरोजगारी, निम्न जीवन स्तर, निम्न औद्योगिक उत्पादन वाली स्थिति होगी तथा इसके परिणामस्वरूप जनसंख्या को पोषक तत्वों की प्राप्ति नहीं होने से राष्ट्रीय शक्ति क्षीण होगी । किसी भी क्षेत्र के पर्यावरण को जनाधिक्य के कारण सर्वाधिक बोझ उठाना पडता है. क्योंकि लोगों को रहने के लिये स्थान की आवश्यकता होगी, खाद्य पदार्थ के रूप में भोजन चाहिये तथा स्वस्थ रहने के लिए स्वच्छ पर्यावरण की आवश्यकता होगी। उपरोक्त सभी तथ्य जनाधिक्य की स्थिति में संभव नहीं हैं। हमारे पर्यावरण को जनसंख्या वृद्धि की तीव्र गति ने सर्वाधिक प्रभावित किया है। बढ़ती जनसंख्या की विभिन्न मांगों की आपूर्ति के लिए संसाधनों का दोहन अंधाधुध एवं तीव्र गति से हो रहा है. इस कारण प्रदूषण से पर्यावरण का कोई भी घटक अछूता नहीं है। अत: आवश्यक है कि जनसंख्या विस्फोट की विश्वव्यापी ज्वलंत समस्या पर विचार करके सभी देशों की सरकारें दीर्घकालीन नीतियां बनाकर उस पर अमल करें ।

5.12 सारांश :–

प्राचीन काल से ही मानवीय ज्ञान की विविध शाखाओं के चिन्तनशील विद्वानों, राजनयिकों तथा दार्शनिकों के लिए जनसंख्या संबंधी प्रश्न महत्वपूर्ण रहा है एवं इसकी ओर प्रारम्भ से ही उनका ध्यान आकर्षित होता रहा है। प्लूटो तथा अरस्तू का संतुलित जनसंख्या का विचार, जनसंख्या अध्ययन में नगर के लिये जनसंख्या – आकार के संबंध में विद्वानों की प्राचीन अभिरुचि का बोध कराता है। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में माल्थस (1798) के 'जनसंख्या सिद्धान्त' संबंधी प्रथम प्रकाशन के साथ ही विद्वानों का इस विषय के विस्तृत अध्ययन की ओर ध्यान आकृष्ट हुआ तथा यहीं से समाज विज्ञानों के अन्तर्गत जनसंख्या संबंधी अध्ययन का सूत्रपात हुआ । वर्तमान में जनसंख्या संबंधी विषय सभी सामाजिक विज्ञानों के लिए अध्ययन का मुख्य विषय बन गया है। पृथ्वी सतह पर पाये जाने वाले विभिन्न एवं विविध संसाधनों का उपयोग मानव संसाधन अथवा जनसंख्या पर निर्भर करता है। मानव द्वारा जैविक तथा अजैविक संसाधनों के अपनी आवश्यकतानुसार दोहन के कारण प्राकृतिक पर्यावरण में विभिन्न प्रकार दो परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। सांस्कृतिक पर्यावरण के निर्माण के लिए मानव विविध भू–भागों को पीरवर्तित करके कृषि परिदृश्य का निर्माण करता है। खनिज, उर्जा, वनस्पति, जीव–जन्तुओं आदि का उपयोग मनुष्य अपनी आर्थिक समृद्धि के लिए करता है। साथ ही मानव अपने निवास के लिए भी भू–भाग का उपयोग करता है।

किसी भी क्षेत्र, प्रदेश अथवा देश में स्थित विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता के अनुपात में वहां की जनसंख्या में अनियंत्रित व लगातार वृद्धि को जनसंख्या विस्फोट की संज्ञा दी जाती है। वर्तमान में विश्व के अधिकांश विकासशील देश जनसंख्या विस्फोट के संकट का सामना कर रहे हैं। जनसंख्या विस्फोट की स्थिति वर्तमान समय में जनसंख्या की अनियंत्रित वृद्धि के

कारण सबसे बडी पर्यावरणीय चुनौती है। प्राकृतिक संसाधनों पर जनसंख्या विस्फोट के कारण बहुत ही प्रतिकूल प्रभाव पडता है। इस हेतु जनसंख्या नियंत्रण सम्बन्धी नीतियों के निर्माण की आवश्यकता महसूस की जा रही है। प्राकृतिक संसाधनों के उचित उपयोग तथा विकास में संतुलन स्थापित करने के लिए अनुकूलतम जनसंख्या प्राप्त करने वाली नीतियों के क्रियान्वयन का प्रयास किया जाता है। उदाहरणार्थ भारत सरकार द्वारा परिवार कल्याण योजना को सामाजिक – आर्थिक कार्यक्रमों के साथ जोडकर जनसंख्या विस्फोट को नियंत्रित करने हेतु प्रयास करने का कार्य किया गया है।

5.13 स्व मूल्यांकन प्रश्न

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्र 1. जनसंख्या विस्फोट क्या है?
What is Population Explosion?

प्र 2. विश्व की जनसंख्या 2000 में कितनी थी?
What is population of world in 2000?

प्र 3. जनसंख्या वृद्धि से आप क्या समझते है?
What do you mean by Population Growth ?

प्र 4. जन्म दर से क्या आशय है?
What do you mean by birth rate?

प्र 5. जनसंख्या घनत्व का अभिप्राय समझाइये।
Explain the meaning of population density.

लघूत्तरालक प्रश्न: –

प्र 6. जनसंख्या वृद्धि के प्रमुख कारणों का उल्लेख कीजिये।
Mention main causes of population growth.

प्र 7. विश्व के दस सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों के नाम लिखिये ।
Write name of ten country of the world with maximum population.

प्र 8. मृत्युदर का तात्पर्य समझाइये।
Explain the meaning of mortality.

वर्णनात्मक प्रश्न :

प्र 9. मानव जनसंख्या एवं पर्यावरण पर एक लेख लिखिये ।
Write a note on human population and environment.

प्र 10. जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिये ।
Explain the factors affecting population distribution.

प्र 11. जनसंख्या वृद्धि पर एक वर्णनालक लेख लिखिये।
Write a explanatory note on population growth.

प्र 12. जनसंख्या विस्फोट' पर एक लेख लिखिये ।
Write an essay on 'Population Explosion'.

प्र 13. विश्व में जनसंख्या वितरण एवं घनत्व का वर्णन कीजिये ।

Describe population distribution and density in the world?

प्र 14. जनसंख्या वृद्धि के पर्यावरणीय दुवभाबों का वर्णन कीजिये ।

Discribe harmful effects of population growth on environment.

5.14 संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. Ackerman,E.A."Population and Natural Resources–The Study of Population",1959.
2. Agarwal,S.H.–"Population",1967.
3. Arvill,R.–"Man & Environment–Crises and the Strategy of Choice", 1967.
4. Beaujeu Garnier,J.–"Population Geography",1966.
5. Clarke,John–"Population Geography"1972.
6. Cox,P.R.–"Demography",1976.
7. Davis–"The Earth and the Man",1955
8. Jhonston -"The Dictionary of Human Geography",2001.
9. Park–"Ecology and Environmental Management",1980.
10. Savindra Singh–" Environmental Geography",2004.
11. Shrama,P.D.–"Elements of Ecology",1996.
12. Trewartha,G.t.–"The Case for Population Geography 1953
13. Zimmerman–"World Resource and Industries",1993.
14. हरिचन्द्र व्यास– "जनसंख्या,प्रदूषण एवं पर्यावरण ",1989.

इकाई–6

Environmental Pollution

पर्यावरण प्रदूषण

इकाई की रूपरेखा :–

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 प्रदूषक

6.4 प्रदूषकों के प्रकार

6.5 जल प्रदूषण

6.6 जल प्रदूषण के स्त्रोत

6.7 जल प्रदूषण के प्रभाव

6.8 प्रदूषण के नियत्रंण के उपाय

बोध प्रश्न–।

6.9 ध्वनि प्रदूषण

6.10 ध्वनि प्रदूषण का मापन

6.11 ध्वनि प्रदूषण के प्रकार

6.12 ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव

6.13 वायु प्रदूषण

6.14 वायुप्रदूषण के स्त्रोत

6.15 वायु प्रदूषक

6.16 वायु प्रदूषण के दुष्प्रभाव

6.17 वायु प्रदूषण के नियंत्रण के उपाय

बोध प्रश्न–2

6.18 कूडे–कचरे से प्रदूषण

6.19 प्रदूषण के कारण

6.20 कूडे–कचरे से प्रदूषण के दुष्प्रभाव

6.21 कूडा–कचरा प्रदूषण का नियन्त्रण

6.22 सारांश

6.23 स्व मूल्यांकन प्रश्न

6.24 संदर्भ ग्रंथ सूची

6.1 उद्देश्य :–

इस इकाई में आप पर्यावरण प्रदूषण के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे तथा इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

1. विभिन्न प्रकार के प्रदूषण के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगें।
2. पर्यावरण प्रदूषण से हु ये दुष्प्रभावों से लोगों को जागृत कर सकेगें।

3. प्रदूषण की रोकथाम कर सकेगें।

6.2 प्रस्तावना :–

सृष्टि के प्रारम्म से ही पर्यावरण एवं मानव का अटूट सम्बन्ध रहा है। प्रदूषण एवं प्राकृतिक संसाधनों का विघटन एवं विनाश आज एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन गई है। किसी भी लोक कल्याणकारी राष्ट्र के विकास के लिए पर्यावरण संरक्षण एक आम आवश्यकता है। आज के विभिन्न स्तरों पर पर्यावरण प्रदूषित हो कर हमें विनाश की ओर धकेल रहा है।

प्राचीनकाल में मनुष्य यज्ञ– जप–तप आदि के द्वारा वायुमण्डल को शुद्ध रखते थे। शुद्ध पर्यावरण के ही कारण प्राचीनकाल में व्यक्ति की औसत आयु लगभग 120 वर्ष हुआ करती थी जो प्रदूषण बढने के साथ–साथ आधी रह गई है।

प्रदूषण का अर्थ :–

प्रदूषण अंग्रेजी के शब्द च्वससनजपबाद का अनुवाद है, जो मूल रूप से लैटिन भाषा के शब्द "Pullutus" से बना है। इसका अर्थ है दूषित करना।

प्रदूषण वायु भूमि तथा जल के भौतिक रासायनिक एवं जैविक गुणों में होने वाला अवांछनीय परिवर्तन है, जिससे मनुष्य या अन्य जीवों की प्रक्रियाओं, जीवन दशाओं, सांस्कृतिक गुणों तथा प्राकृतिक संसाधनों को कोई हानि हो या हानि होने की आशंका हो। – अमेरिका राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी

प्रदूषण वायु जल एवं स्थल की भौतिक, रासायनिक और जैविक विशेषताओं का वह अवांछनीय परिवर्तन है जो मनुष्य और उसके लिए लाभदायक घटकों और दूसरे जन्तुओं, पौधों, औद्योगिक संस्थानों तथा दूसरे कच्चे माल इत्यादि को किसी भी रूप में हानि पहुंचाता है।

6.3 प्रदूषक :–

मानव की गतिविधियों के फलस्वरूप वातावरण में अनेक पदर्था की अत्यधिक मात्रा एकत्रित हो जाती है। इस अधिक मात्रा के पुन: चक्रण (Recycling) एवं उपयोग के लिए तंत्र सक्षम नहीं होता और तंत्र का संतुलन टूट जाता है। यह पदार्थ पारिस्थितिक तंत्र (Ecosystem) के लिए अनुति अथवा असम्बद्ध अवशेष (Out of place reside) बन जाते हैं। इस प्रकार प्रदूषक रासायनिक अथवा अन्य पदार्थ है जो वातावरण के स्वाभाविक संतुलन को बदल कर प्रदूषण उत्पन्न करते हैं। प्रदूषक, जैव क्रियाओं को उद्वीपित आरम्भ अथवा समाप्त कर सकते हैं या उनकी क्षमता में परिवर्तन लाते हैं। इस प्रकार पारिस्थितक तंत्र में भी परिवर्तन हो जाता है। जनसंख्या वृद्धि के साथ साथ प्रदूषकों की मात्रा. संख्या और प्रकारों में बढ़ोत्तरी हो रही है।

6.4 प्रदूषकों के प्रकार :–

सामान्यत: दो प्रकार के होते है :–

1. अनिम्नीकरण प्रदूषक :–

ये प्रदूषक ऐसे पदार्थ होते है जिनका विघटन नहीं होता अथवा बहुत कम होता है। जैसे ऐलुमिनियम के डिब्बे, पारे (Hg) के यौगिक, लौहा, फिनोल के कुछ यौगिक, कांच एवं D.D.T. आदि।

ये वातावरण में एकत्रित होकर उसका प्रदूषण करते है। ऐसे पदार्थ प्रारम्म से ही हानिकारक होते है। ओर इनकी मात्रा बढने के साथ हानि भी बढ़ती जाती है। इनके पुन: चक्रण के लिए प्रकृति में कोई उपचार (Treatment) नहीं पाया जाता है।

इन प्रदूषकों से होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए दो उपाय है :–

(i) ऐसे पदार्थो को कानून द्वारा रोका जाये।

(ii) इनके वैकल्पिक (Altrenatives) पदार्थो को उपयोग में लाया जाए।

2. जैव निम्नीकरणीय प्रदूषक :–

घरेलू वाहित मल (Domestic Sewage), कपडा, कागज, लकडी, आदि व्यर्थ पदार्थो का सूक्ष्म जीवियों द्वारा अपघटन होता है। परन्तु इनके अधिक मात्रा में एकत्रित हो जाने पर इनका अपघटन कठिन हो जाता है एवं ऐसे पदार्थ वातावरण का प्रदूषण करने लगते है।

प्रदूषण के प्रकार: –

पर्यावरण की दृष्टि से अनेक प्रकार के प्रदूषण है जो मानवीय जीवन तथा जीव जन्तु व वनस्पति जीवन पर गहरा प्रभाव डालते हैं। ये प्रदूषण स्वच्छ पर्यावरण के लिए गम्भीर समस्या बनते जा रहे हैं।

निम्न प्रकार के प्रदूषणों को पर्यावरण के क्षेत्र में सम्मिलित किया जा सकता है।

1. वायु प्रदूषण (Air Pollution)
2. भूमि प्रदूषण (soil Pollution)
3. जल प्रदूषण (Water Pollution)
4. वाहन प्रदूषण (Vehicular Pollution)
5. ध्वनि प्रदूषण (Noice pollution)
6. विकिरणीय प्रदूषण (Radiation Pollution)
7. तापीय प्रदूषण (Thermal Pollution)
8. औद्योगिक प्रदूषण (Industrial Pollution)
9. कूडे कचरे से प्रदूषण (Waste Disposal Pollution)
10. समुद्रीय प्रदूषण (Marine Pollution)
11. घरेलू अपशिष्ट के कारण प्रदूषण (Domestic Pollution)
12. अन्य कारणों से प्रदूषण (Pollution for other reason)

आइये हम यहां जल, वायु तथा कूडा–कचरा प्रदूषण का अध्ययन करेंगे।

6.5 जल प्रदूषण :–

मैक्सबेल के अनुसार जल सम्पूर्ण जीव जगत का आधार है। पृथ्वी पर जल परमावश्यक एवं मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन है। फल आर्थिक, सांस्कृतिक और जैविक दृष्टि से पृथ्वी का अत्यधिक उपयोगी संसाधन है।

मानव जल को विविध उपयोगों में लेता है परन्तु औद्योगिकरण, शहरीकरण एवं विकास की अन्य गतिविधियों के फलस्वरूप अधिकांश जलीय पारिस्थितिक तंत्रों का प्रदूषण के कारण प्राकृतिक संतुलन बिगड़ गया है।

जल का प्रभाव सीधा ही मानव के स्वास्थ्य पर पडता है। जनाधिक्य के कारण नगरों व गावों में जल स्त्रोत और अधिक प्रदूषित होते जा रहे है। मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ताप बिजलीघर, टेनरीज, रिफाइनरीज, रासायनिक उर्वरक व औषधियों के कारखानों आदि नदी व तालाबों के किनारे स्थापित किये जा रहे है। उनसे निकलने वाले अपशिष्ट उत्पाद उन्हीं जल स्त्रोतों में बहाए जा रहे है।

जरा विचार करें, कि क्या इन तालाबों व नदियों में स्नान करना पवित्रता प्रदान कर सकेगा। आज तो पावन गंगा व निर्मल यमुना भी पवित्रता की अन्तिम सांसें ले रही है। एक शोध दल रिपोर्ट के अनुसार महानगर दिल्ली में सबसे ज्यादा प्लास्टिक के कारखाने है, और उनसे एक टन साइनाइड प्रतिदिन यमुना में बहाया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त घरों व नगरों की समूर्ण गन्दगी भी नालों व गटरों के माध्यम से प्रतिदिन नदियों में पंहुच रही है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ साथ गंदगी की मात्रा मी बढ रही है। यही कारण है कि देश में उपलब्ध जल का 75 प्रतिशत से ज्यादा प्रदूषित हो चुका है।

गांवों में तो जल स्त्रोत आमतौर पर कुएं व तालाब होते है। तालाब में नहाने, कपडे धोने पशुओं को नहलाने, व मलमूत्र विसर्जन के कारण तालाबों का पानी और भी दूषित हो चुका है। प्रदूषित जल में नहाने–धोने व पानी पीने से वाइरल फीवर, पीलिया हैजा व आन्त्रशोध जैसे रोगो की संख्या बढ़ती जा रही है।

जल प्रदूषण का अर्थ :–

जल प्रदूषण वह प्रक्रिया है, जिसके अर्न्तगत जल के प्राकृतिक स्वरूप में बाह्य तत्व आकर सम्मिलित हो जाते है तथा जिसके कारण उसकी निर्मलता में विकृतियां आ जाती है।

रासायनिक दृष्टि से जल (H_2O), हाइड्रोजन के और एक भाग ऑक्सीजन का होता है। किन्तु प्रकृति में इस प्रकार का शुद्धजल नही पाया जाता है।

वास्तव में जैसे ही वाष्प संघनित होकर वर्षा के रूप में वायुमण्डल में प्रवेश करती है, उसमें अनेक गैसे धूल के कण एवं अन्य अशुद्धियां मिश्रित होने लगती है और जैसे ही यह धरातत्व पर बहने लगता है इसमें अनेक रासायनिक एवं अन्य तत्व मिश्रित हो जाते है। कुछ तत्व हानिकारक होते है तो अन्य का प्रभाव सामान्य होता है। अत: जल की गुणवत्ता इस तथ्य पर निर्भर करती है कि उसमें हानिकारक तत्वों की मात्रा का प्रतिशत कितना कम है।

सामान्य रूप से कहा जाता है कि प्राकृतिक जल में अवांछित पदार्थो का सम्मिलित होना जिससे जल की गुणवत्ता में अवनीत होती है, जल–प्रदूषण है।'

जल प्रदूषण को अनेक विद्वानों ने परिभाषित किया है –

जब प्राकृतिक या अन्य स्त्रोतों से बाह्य पदार्थ जल में मिल जाते है तथा जिनका दुष्प्रभाव जीवों के स्वास्थ्य पर पडता है जल में विषाक्ता होती है, जल के सामान्य ऑक्सीजन स्तर में गिरावट आती है, जल जनित महामारियां फैलती है तथा अन्य दुष्प्रभाव पड़ते है, तो उसे जल प्रदूषण कहते है।

–विश्व स्वास्थ्य संगठन

पेयजल के लिए 1971 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने निम्नांकित मानक निर्धारित किये है

(अ) भौतिक मानक – पेयजल स्वच्छ, शीतल, निर्मल, गन्धरहित और निस्वाद होना चाहिए।

(ब) रासायनिक मानक – पेयजल का pH मान 7 एवं 8.5 के बीच हो तथा इसमें मिश्रित अपद्रव्यता की सीमा निर्धारित सीमा से अधिक न हो जो आगे लिखी सारणी में वर्णित की गई है।

पेयजल हेतु विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित मानक

क्र.सं	अपद्रव्य पदार्थ	उच्चतम निर्धारित सीमा
		मिग्रा./लीटर
1	कुल ठोस पदार्थ	500
2	सम्पूर्ण ठोस पदार्थ	2 मि.इक्वा. ग्राम
3	कैल्शियम	75.00
4	मैग्नीशियम	30.00
5	सल्फेट	200.00
6	क्लौराइड्स	200.00
7	लोहा	0.10
8	मैगनीज	0.05
9	जिंक	5.00
10	तांबा	0.05
11	आर्सेनिक	0.5
12	कैडमियम	0.005
13	सायनाइड	0.05
14	पारा	0.001
15	सीसा	0.05
16	फिनोलिक अम्ल	0.001

	जैविक मानक -अपद्रव्य	सर्वाधिक स्वीकार्य संख्या
1	बेसिलस कोलाई(B.Coil)	प्रति 100 मिली.मे एक भी नहीं
2	अन्य कोली फार्म बैक्टीरिया	10 से अधिक नहीं

मोटे रूप में जल प्रदूषण को निम्न बिन्दुओं के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है –

1. अपशिष्ट पदार्थो का निपटान तथा अन्य मानव क्रियाओं के कारण जल के गुणों में ऐसे परिवर्तन जिनके कारण यह पीने, घरेलू, कृषि, मत्स्य, तथा अन्य उद्देश्यों के अनुपयुक्त हो जाता है, जल प्रदूषण कहलाता है।
2. अमेरिका के जन स्वास्थ्य सेवा पेयजल मानकों के अनुसार जल में किसी भी प्रकार के अवांछित पदार्थ जैसे कार्बनिक, अकार्बनिक, विकिरण, जैविक आदि की उपस्थिती जिसके कारण जल की विशेषताओं में कमी होकर घातक प्रभाव होता है या जल की उपयोगिता में कमी आती हो जल प्रदूषण कहलाता है।

3. मास के अनुसार जल की विशेषताओं में किसी प्रकार का परिवर्तन जो जल हितकारी उपयोगिता को अहितकारी बना देता है, जल प्रदूषण कहलाता है।

प्राकृतिक जल में उपस्थित अपद्रकताओं को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

1. निलम्बित अपद्रव्यताएं – यह बडे कणों अथवा पदार्थो के रूप में तैरती रहती है जैसे धूल के कण, मृदा, अनेक खनिज. शैवाल तथा अजैव पदार्थ। इनका आकार बडा होने से इन्हें पृथक किया जा सकता है।
2. कोलॉइड अपद्रव्यताएं – ये अत्यधिक सूक्ष्म आकारी होते हैं। जिन्हें पृथक करना कठिन होता है। इसमें सिलिका, ग्लास, विभिन्न धातुओं के ऑक्साइड, जैव पदार्थो के कण, बैक्टीरिया आदि होते है।
3. घुलित अपद्रव्यताएं – इसमें ठोस, द्रव्य एवं गैस होती है जो प्रवाह के समय जल में घुल जाती है। इसमें कार्बन डाई ऑक्साइड, मिथेन, सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम मैग्नीशियम, लौह, मैग्नीज के लवण तथा अमोनियम आदि होते है।

6.6 जल प्रदूषण के स्त्रोत :–

जल के प्राकृतिक स्वरूप में बाह्य तत्वों के मिश्रित हो जाने के फलस्वरूप जब विकृति आ जाती है तो वह जीव जगत के लिए हानिकारक हो जाता है। इसी को सामान्यतया प्रदूषित जल कहते है |

प्रदूषक पदार्थो की प्रकृति के आधार पर जल प्रदूषण भौतिक, रासायनिक और जैव श्रेणियों में विभक्त किया जाता है। भौतिक जल प्रदूषण के अन्तर्गत जल का रंग, गन्ध, स्वाद, तापक्रम प्रभावित होता है जबकि रासायनिक जल प्रदूषण में अनेक हानिकारक रसायनों का जल में सम्मिश्रण हो जाता है। जैव प्रदूषण में जीवाणु जल में उद्भुत हो जाते है। अधिकांशत: जल प्रदूषण मानव द्वारा विभिन्न पदार्थो का जल में निस्तारण है किन्तु कतिपय प्राकृतिक स्रोत भी जल प्रदूषण के कारक होते है। जल प्रदूषण के स्त्रोत निम्नांकित है :–

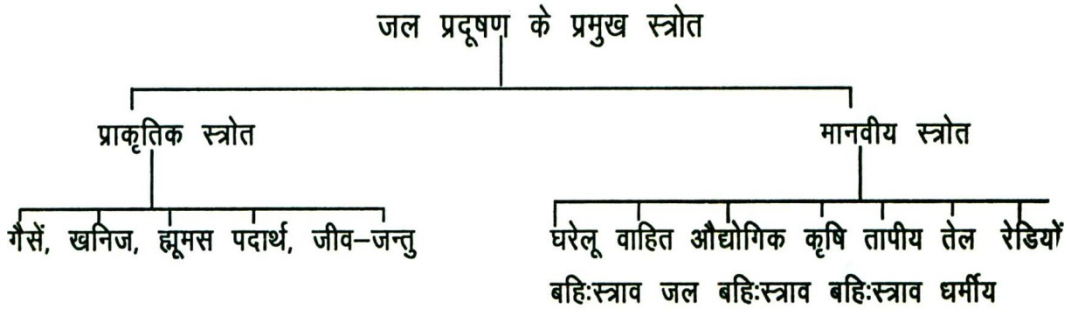

(अ) जलु प्रदूषण के प्राकृतिक स्त्रोत :–

इस प्रदूषण का कारण जल में मिश्रित होने वाली विभिन्न गैसें, खनिज, ह्यूमस पदार्थ, जीव जन्तुओं का मल मूत्र आदि होती है। यह प्रदूषण मंद और कभी-कभी सामयिक होता है जैसे वर्षाकाल में, नदियों, तालाबों का जल मृदा के कणों के मिश्रण से अत्यधिक मटमैला हो जाता है जो कुछ समय पश्चात स्वत: ठीक हो जाता है। जल में प्राकृतिक रूप से शुद्ध होने की क्रिया होती रहती है। प्राकृतिक अशुद्धियाँ, निलम्बित, कोलॉइडी, अथवा घुलित रूप में रहती है। यह जैव अथवा अजैव, कार्बनिक अथवा अकार्बनिक, रेडियो सक्रिय अथवा निष्क्रिय विषैले अथवा हानिरहित हो

सकती है। प्रमुखत: धूल के कण, मृतिका, सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, लौह, मैग्नीज आदि का दुष्प्रभाव नहीं होता किन्तु यदि इनकी मात्रा अधिक हो जाती है तो जल प्रदूषण हो जाता है। इस प्रकार अत्यधिक मात्रा में जलीय, वनस्पति भी प्रदूषण का कारण बन सकती है।

(ब) जल प्रदूषण के मानवीय स्त्रोत :–

वर्तमान युग के जल प्रदूषण और इससे उत्पन्न विभिन्न समस्याओं को यदि मानव की देन कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। विश्व की जनसंख्या में तेजी से वृद्धि, तेजी से होता औद्योगिकीकरण विभिन्न साधनों से विद्युत उत्पादन, तैलीय एवं रासायनिक पदार्थो के उपयोग में वृद्धि आदि ।

निम्नलिखित मानवीय क्रियाऐं जल प्रदूषण के लिए उत्तरदायी है।

1. घरेलू बहि:स्त्राव :–

मानव जल का विविध घरेलू कार्यो में उपयोग करता है, जैसे भोजन पकाने के लिए, नहाने के लिए, सफाई के लिए, पेयजल के रूप में आदि ।

मानव इस प्रयोग किये जल का लगभग 75 से 80 प्रतिशत भाग विविध उपयोग के पश्चात वह बहा देता है। यह जल घर की नालियों में बहता हुआ मौहल्ले तत्पश्चात् किसी नदी, झील अथवा सरोवर में चला जाता है अथवा भूमि द्वारा सोख लिया जाता है। यह उपयोग कर बहाया हुआ जल अनेक प्रकार की अशुद्धियों से मुक्त होता है। इनमें कूडा करकट, घर की गन्दगी का मिश्रण हेता है।

वर्तमान समय में, घरों में सफाई तथा कपडे धोने के लिए डिटरजेंट या प्रहनालक के अत्यधिक प्रयोग भी जल प्रदूषण का कारण है क्योंकि यह दूषित जल, जल स्त्रोत के जल की प्राकृतिक संरचना में परिवर्तन ला देता है।

इसी प्रकार प्लास्टिक के अत्यधिक घरेलू उपयोग नें भी अवाशष्ट की समस्या उत्पन्न कर दी है। ये न तो पानी में गलती है न सड़ती है। अत: इनका नि:स्तारण हो जाता है।

2. वाहित मल :–

जल प्रदूषण का एक प्रमुख कारण वाहित मल है। जनसंख्या में वृद्धि, ग्रामों का कस्बों में तथा नगरों का महानगरों में परिवर्तित होना इस समस्या को ओर अधिक गम्भीर बना रहा है।

वाहित मल का निस्तारण वर्तमान में विश्व समस्या है। विकसित देशों में मल निस्तारण की समुचित व्यवस्था है तथा उसे किटाणुविहीन करने की प्रक्रिया द्वारा गुजारा जाता है। इस मल का उर्वरक अथवा उर्जा उत्पादन में उपयोग किया जाता है। किन्तु विकासशील देशों में, जिनमें भारत भी सम्मिलित है, इस प्रकार की व्यवस्था का अभाव है जो जल प्रदूषण का प्रमुख कारण है।

3. औद्योगिक बहिस्त्राव :–

वर्तमान औद्योगिक विकास ने जहां मानव को अनेक सुविधाएं प्रदान की है वहीं प्रदूषण भी दिया है। जल प्रदूषण में उद्योगों की भूमिका अत्यधिक है। उद्योगों में पर्याप्त मात्रा में जल का उपयोग होता है। यह जल उत्पादन प्रक्रिया में चलता हुआ अन्त में अनेक कार्बनिक एवं अकार्बनिक हानिकारक तत्व मिले होते है। अनेक उद्योग गर्म जल को नदियों या जलाशयों में प्रवाहित कर देते है। जो जल जीवों के लिए संकट उत्पन्न करता है। जब कभी यह जल 30^{o} सैं. उच्च तापमान पर चला जाता है तो जलीय जीव मरने लगते है और वहां जैविक मरूस्थल बन जाता है।

4. कृषि बही:स्त्राव :–

कृषि बही:स्त्राव के अन्तर्गत, कृषि उपजों की वृद्धि हेतु उर्वरकों, रसायनों कीटनाशक दवाओं आदि का मिट्टी के साथ बहकर जल में मिश्रित हो जाना और उसे प्रदूषित कर देना ।

5. रेडियोधर्मी अवशिष्ट द्वारा जल प्रदूषण :–

वर्तमान में विश्व में उर्जा प्राप्त करने एवं हथियारों के निर्माण में रेडियोधर्मी पदार्थो का उपयोग हो रहा है। इन पदार्थो के अवशिष्टों को समाप्त करना एक जटिल समस्या है। जब परमाणु हथियारों से लैस जहाज अथवा परमाणु चलित पनडुबी सागर में डूब जाती है तब वह जल को दूषित कर देती है।

6. तापीय प्रदूषण :–

तापीय प्रदूषण से तात्पर्य है जल के तापमान में इतनी वृद्धि हो जाना कि वह जल जीवों के लिए हानिकारक हो। जल के तापमान में वृद्धि का एक कारण समुद्रो में किये जाने वाले परमाणु विस्फोटक परीक्षण है। इसके अतिरिक्त तापीय प्रदूषण का एक प्रमुख कारण विभिन्न उद्योगों द्वारा गर्म जल का जल स्त्रोतों में छोडा जाना है।

7. तेल प्रदूषण :–

इसमें तेल ले जाने वाले टैंकरों से रिसाव, समुद्र के किनारे स्थित तेल शोधक कारखानों से रिसाव तथा सागरीय तत्व से तेल निकालने की प्रक्रिया के दौरान तेल का फैलना प्रमुख कारण है। तेल पानी में तैरता रहता है तथा दूरवर्ती क्षेत्रों तक फैल जाता है।

6.7 जल प्रदूषण के प्रभाव :–

प्रदूषण के निम्न प्रभाव है

1. औद्योगिक अपशिष्टों का प्रभाव :–

उद्योगों सें निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थो में अनेक जहरीले पदार्थ जैसे – पलोराइड्स, फीनोल्स साइनाइड, अम्ल, क्षार आदि होते है। विभिन्न प्रकार के अम्ल एवं क्षार जल के pH का मान बदल देते है। जलीय जीव जल की pH के प्रति अति संवेदनशील होते है।

पारा एक गम्भीर प्रदूषक एवं संचयी जहर है। तालाब या जलाशय के पैंदे में अवायवीय जीवाणुओं की उपापचयी क्रियाओं के फलस्वरूप मिथाइल मर्करी में परिवर्तित हो जाता है। यह अत्यधिक चिरस्थाई प्रदूषक है। एक बार खाद्य श्रृंखला में प्रवेश करने के पश्चात् इसकी मात्रा प्रत्येक पोषण स्तर में सघनता से बढ़ती जाती है। पारा बच्चों में अविकसित मस्तिष्क, लकवा, मिर्गी, पैरों का सुन्न होना जैसे रोग उत्पन्न करता है।

सीसा भी एक संचयी जहर है। यह एन्जाइमों को प्रभावित कर कोशिका उपापचय में बाधा डालता है।

फ्लोराइड्स के प्रदूषण से फ्लोरोसिस द्वारा कुबडापन हो जाता है। हड्डियों एवं उनके जोडों में दर्द होने लगता है तथा पैर घुटने से बाहर की तरफ मुड जाते है। राजस्थान के कई जिलों मे यह समस्या विकट रूप लिए हुए है।

2. वाहित मल के प्रभाव :–

सामान्यत: प्रकृति में अपशिष्ट पदार्थो की सीमित मात्रा का तो वायुजीवी जीवाणु विघटन कर देते है। परन्तु इनकी मात्रा अधिक होने पर जल निकाय की स्वत: शुद्धिकरण क्षमता समाप्त हो जाती है तथा जल प्रदूषित हो जाता है।

घरेलू वाहित मल में फॉस्फेट एवं नाइट्रोजन एवं फॉस्फेट की मात्रा अत्यधिक होती है। अपमार्जकों का मुख्य घटक फॉस्फेट अति सूक्ष्म मात्रा में उपस्थिति होने पर भी शैवालों की वृद्धि को प्रोत्साहित करते है। शैवालों की तीव्र वृद्धि के कारण जल की सम्पूर्ण सतह ढक जाती है तथा यह मानव तथा पशुओं के लिए अनुउपयोगी हो जाता है। जल में धुलित ऑक्सीज़न की मात्रा कम होने लगीती है। फलस्वरूप अनेक जीव मरने लगते है। इस जल के प्रयोग से मनुष्य में पेचिश, पीलिया, मोतीझरा हैजा तथा एमीबायोसिस जैसे रोग हो जाते हैं।

3. कृषि रसायनों के प्रभाव :–

कृषि में रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से नाइट्रेटस जल में संचित होने लगते है' इस जल को पीनी पर आतों में रहने वाले जीवाणु नाइट्रेटस को विषैले नाइट्राइटस में परिवर्तित कर देते है। नाइट्राइटस रुधिर की हीमोग्लोबिन के साथ मिलकर मैटहीमोग्लोबिन बना देते है जो रूधिर की ऑक्सीजन ले जाने की क्षमता में अवरोध उत्पन्न करता है। फलस्वरूप मैटहामोग्लोबिनेमिया नामक गम्भीर रोग हो जाता है।

कीटनाशक जैसे DDT, PCBs, 2–4D आदि वर्षा के जल के साथ खेतों से नदी तालाब, आदि में पहुंचते हैं।

DDT पादप प्लवकों में प्रकाश संश्लेषण की दर कम कर देती है। मनुष्य में कैंसर के आपतन में वृद्धि करती है। यह स्तनधारियों एवं पक्षियों में लिंग हारमोनों को प्रभावित करती है।

4. रेडियोधर्मी पदार्थो के प्रभाव –

नाभकीय विस्फोट के फलस्वरूप रेडियोधर्मी पदार्थ वायुमण्डल की विभिन्न परतों में प्रवेश कर धीरे धीरे ठण्डे एवं संघनित होकर ठोस बूंदों का रूप लेकर पृथ्वी पर पहुंच जाते है। इसे रेडियोधर्मी फाल आउट कहते है। ये पदार्थ वायु, जल एवं मृदा में पहुंच जाते है तथा खाद्य श्रृंखला कि माध्यत से विभिन्न जीवों के शरीर में प्रवेश कर जाते है। नाभिकीय संयंत्रों से सीधे भी रेडियोधर्मी अपशिष्ट जल में छोडे जाते है। ये प्रदूषक अनेक गम्भीर रोग जैसे कैन्सर अधिश्वेत रक्तता जीनों में उत्परिवर्तन भी उल्पन्न कर देते है। वृक्क, नेत्र, त्वचा, तंत्रिका तंत्र, फेफडे, रक्त निर्माण करने वाले उत्तक अस्थि आदि सभी गम्भीर रूप से प्रभावित होते है।

5. तापक्रम के प्रभाव –

नाभकीय एवं तापीय उर्जा केन्द्रों में यंत्रों को ठण्डा करने के पश्चात् उष्ण जल को पुन: जल स्त्रोत में छोड़ दिया जाता है। फलस्वरूप उच्च तापक्रम के प्रति कम सहनशीलता वाले पादपों एवं जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है।

भूमिगत जल संसाधन भी प्रदूषण से अछूते नहीं रहे हैं। यह समस्या वही अधिक गम्भीर है। जहां भूमिगत जलस्तर ऊँचा है। सामान्यत: कारखानों से निकला अपशिष्ट गड्डों में एकत्रित किया जाता है। इन गड्डों, मल को बहाने की भूमिगत पाइप लाईनों, डीजल एवं रिक्त रासायनिक उर्वरकों का भी धीरे धीरे भूमिगत जल तक रिसाव हो जाता है। अत: भूमिगत जल संसाधन भी प्रदूषण की समस्या से सुरक्षित नहीं है।

6.8 प्रदूषण के नियत्रंण के उपाय :–

जल प्रदूषण को रोकने के लिए निम्न उपाय है :–

1. जल प्रदूषण को रोकने के लिए सरकार द्वारा बनाये गये जल प्रदूषण नियत्रंण कानूनों (Water prevention control of pollution act 1974) का सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।
2. प्रदूषण तथा प्रदूषण से होने वाले प्रभावों के बारे में संगोष्ठियों, सम्मेलनों, चलचित्रों के माध्यम से जन चेतना पैदा की जानी चाहिए।
3. अपशिष्टों का पुन: उपयोग एवं पुन:र्चक्रण – विभिन्न प्रकार के अपशिष्ट जैसे कागज की लुगदी, नगरीय एवं औद्योगिक इकाइयों से निकलते बहिस्त्राव, घरेलू वाहित मल एवं तापीय प्रदूषक पुन: चक्रीय हो सकते है। उदाहरण के लिए शहरी अपशिष्टों का पुन: चक्रण ईधन गैस तथा बिजली उत्पादन में किया जा सकता है। नागपुर की नीरी (NEERI) संस्थान के वैज्ञानिकों ने रेडियोधर्मी तथा परमाणु शक्ति संयत्रों के रासायनिक अपशिष्टों के प्रबन्ध से सस्ती गैस एवं विद्युत प्राप्त करने के उपाय विकसित किए हैं।
4. प्रदूषकों को अलग करना – रासायनिक, जैविक तथा रेडियोधर्मी प्रदूषकों को अलग करने के लिए अनेक भौतिक एवं रासायनिक विधियां विकसित की गई है। इनके अर्न्तगत अधिशोषण, इलेक्ट्रोलिसिस, आयन विनिमय तथा प्रतिगामी परासरण विधियां आती है। इन विधियों के द्वारा ओद्यौगिक इकाईयों के अपशिष्टों से प्रदूषकों का पृथक्करण तथा उनका पुन: उपयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

नाभिकीय एवं परमाणु संयत्रों के अपशिष्टों से रेडियोधर्मी प्रदूषक पृथक करने के बाद ही जलीय पारिस्थितिक तंत्र में छोड़ा जाना चाहिए। निलम्बित कणों को छानकर तथा विषाक्त पदार्थों को रासायनिक विधि द्वारा पृथक किया जा सकता है।

5. प्रदूषक नियंत्रण के साथ साथ उपचार भी अति आवश्यक हे। (NEERI) नागपुर ने वाहित जल के उपचार के लिए विशेष जलाशय या स्थिरिकरण जलाशय बनाए है। घरेलू एवं औद्योगिक अपशिष्ट कार्बनिक पोषकों के साथ कुछ दिनों के लिए इन जलाशयों में तनु सान्द्रता में भर दिये जाते है। सूर्य के प्रकाश तथा कार्बनिक पोषकों की उपस्थिति में शैवाल तथा जीवाणु विकसित हो जाते है। जीवाणु कार्बनिक अपशिष्ट का अपघटन कर जल को शुद्ध करते है। इस जल में नाइट्रोजन फॉस्फोरस तथा पोटेशियम की मात्रा अधिक होने से इसे सिंचाई के उपयोग में लिया जाता है।
6. पीने योग्य जल के गुणों पर सख्त जांच निरन्तर बनी रहनी चाहिए।
7. जल स्त्रोतों में मृत लाशों को बहाने पर पूर्ण रोक लगनी चाहिए। जल में यदि अनावश्यक शैवाल व अन्य पौधे हो तो उनकी सफाई नियमित रूप से की जानी चाहिए। पेयजल स्त्रोतों में समय समय पर पोटेशियम परमेंगनेट जैसी दवा डालकर सामान्य जीवाणुओं से मुक्त किया जा सकता है।
8. सरकारी स्तर पर जल की नियमित जांच होनी चाहिए। इस कार्य पर समुचित निगरानी करके नियमों का उल्लंघन करने वालों को कठोर दण्ड दिया जाना चाहिए।
9. इन सबसे महत्वपूर्ण है इस दिशा में जन चेतना जागत करना क्योंकि यदि हम इसे अपना उत्तरदायित्व मान लेगें तो यह समस्या स्वत: ही कम हो जायेगी ।

10. नगरों एवं महानगरों में शौच हेतु पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए। नदी अथवा जलाशयों के निकट शौच पर रोक लगाकर जलाशयों के निकट शौच पर रोक लगानी चाहिए।
11. घरेलू बहि:स्त्राव एवं वाहित मल को अपचारित करने के पश्चात् ही किसी जल स्त्रोत में डाला जाये। उपचारित गन्दे पानी का उपयोग सिंचाई के लिए किया जा सकता है। क्योंकि इसमें उर्वरकता होती है। विशेषकर सब्जियों के उत्पादन में इसे उपयोग में लाया जा सकता है।

भारत सरकार एवं राज्य सरकारें इस दिशा में पर्याप्त कार्य कर रही है। इसे 1974 में एक केन्द्रीय जल प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की स्थापना की गई तथा अनेक राज्यों में मण्डल स्थापित किये गये हैं। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1988 में जल प्रदूषण नियंत्रित करने की पर्याप्त व्यवस्था है।

बोध प्रश्न-1

1.प्रदूषण से क्या तात्पर्य है।
2.विभिन्न प्रदूषकों की सूचि बनाइये।
3.जल प्रदूषण के मुख्य स्त्रोत बताइये।
4.जल प्रदूषण से प्रभावों की जानकारी दीजिये।
5.जल में प्रदूषण को कैसे रोका जा सकता है?

6.9 ध्वनि प्रदूषण :–

परिचय:–

जीवन में हमें कई प्रकार की ध्वनियों के अनुभव होते है जैसे घड़ी की टिक–टिक, ट्रांजिस्टर पर गाने की आवाज, चिडियों का चहचहाना, शादी में बैण्ड–बाजे की आवाजें, कारखाने में मशीनों की ध्वनि, चलते वाहनो या उडते वायुयानों की ध्वनि आदि, परन्तु कुछ ध्वनियां कानों को सुहाती है तो कुछ कानों को असुविधाजनक लगती है।

ओर यही असुविधाजनक ध्वनि शोर कहलाती है। शोर ध्वनि प्रदूषण का जनक है।

'अनुपयुक्त स्थान और अनुसूचित समय पर उत्पन्न अवांछनीय ध्वनि के कारण उत्पन्न प्रदूषण को ध्वनि प्रदूषण कहते है।.

खुली सड़क पर बस या ट्रक के हॉर्न की ध्वनि सामान्य लगती है परन्तु अस्पताल के निकट या रात के समय घर के निकट या ध्वनि प्रदूषण का रूप ले लेती है। इसी प्रकार दिन में लाउड स्पीकर का बजना निश्चित रूप से कष्टदायक होता है और ध्वनि प्रदूषण की श्रेणी में आ जाता है।

6.10 ध्वनि प्रदूषण का मापन :–

ध्वनि प्रदूषण का मापन ध्वनि की तीव्रता से किया जाता है। इस तीव्रता मापन की इकाई डेसिबल (Decibel) है। जिसे dB से प्रदर्शित किया जाता है।

इसका नामकरण प्रसिद्ध वैज्ञानिक ए.ग्राहम बेल के सम्मान में किया गया।

डेसिमल पैमाना एक तुलनात्मक पैमाना है। शून्य डेसिबल उस ध्वनि को कहते है। जो एक स्वस्थ कान के सुनने की न्यूनतम सीमा एक डेसीबल मानी गयी है।

डेसीबल पैमाने पर ध्वनि प्रदूषण $=10\times\log\frac{I}{I_0}db$

I = मापी जाने वाली ध्वनि की तीव्रता

I_0 = वह कम से कम तीव्रता है जिसे हमारा कान सुन सकता है।

उक्त सूत्र में I का मान I_0 रखने पर ध्वनि तीव्रता का मान शब्द डेसीबल आता है।

अत: 0 से 1 dB ध्वनि तीव्रता वह कम से कम माप है जिसे एक साधारण व्यक्ति सुन सकता है।

साधारण बातचीत ध्वनि की तीव्रता 35 से 60 dB के मध्य रहती है।

6.11 ध्वनि प्रदूषण के प्रकार :–

ध्वनि प्रदूषण के प्रभावों को मुख्यत: दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है –

(i) श्रवण संबंधी प्रभाव (ii) अश्रवण संबंधी प्रभाव

(i) श्रवण संबंधी प्रभाव :–

90 dB तीव्रता एवं 400 Hz आवृति की ध्वनि श्रवणीय थकावट का कारण होती है। 65 dB तीव्रता एवं 4000 से 6000 Hz आवृति की ध्वनि अस्थायी बहरेपन के लिए उत्तरदायी है।

परन्तु 100 dB की तीव्रता की ध्वनि के निरन्तर सम्पर्क में रहने से श्रवण तंत्र को स्थायी हानि कॉर्टी के अंग का क्षतिग्रस्त हो जाती है।

इसी कार 160 dB से तीव्रता एवं 6000 Hz से अधिक आवृति की ध्वनि से कान का पर्दा (Tympanic membrane) फट जाता है। जो स्थायी बहरेपन का कारण है।

(ii) अश्रवण संबंधी प्रभाव :–

इन प्रभावों में सामान्य वार्तालाप में व्यवधान, कार्यक्षमता का प्रभावित होना, कार्यकीय दुष्प्रभाव तथा सरदर्द, रक्तचाप बढना, हृदय गति बढना, मिचली आना आदि प्रमुख है।

भूमि प्रदूषण, रेडियोधर्मी विकिरण प्रदूषण, तापीय प्रदूषण आदि भी मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते है।

6.12 ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव :–

मनुष्य बिना किसी असुविधा के जो शोर सह सकता है। उसकी अधिकतम सीमा 80कठ के लगभग है। इससे अधिक तीव्रता की ध्वनि, प्रदूषण की श्रेणी में आ जाती है।

जीवों पर ध्वनि प्रदूषण के प्रभावों का संक्षिप्त वर्णन निम्न बिन्दुओं में किया जा रहा है।

(i) श्रवण सम्बन्धी प्रभाव :–

90 dB तीव्रता वाले ध्वनि प्रदूषण से कानों में थकावट उत्पन्न होती है और कानों में निरन्तर एक गूंज बनी रहती है। लगभग 100 dB के शोर में लगातर या बार बार रहने से व्यक्ति बहरा हो जाता है। परन्तु आराम मिलने से बहरेपन में सुधार होता है। यदि ध्वनि की तीव्रता बहुत अधिक हो और स्त्रोत कान के निकट हो तो कान का परदा फट सकता है और व्यक्ति स्थाई रूप से बहरा हो सकता है। दीपावली पर तेज आवाज के पटाखों से यह भय बना रहता है।

(ii) शारीरिक प्रभाव :

ध्वनि प्रदूषण हमारी आंख की दृष्टि, हृदय, श्वसन तंत्र, लीवर और मस्तिष्क पर विपरीत प्रभाव डालता है। ध्वनि प्रदूषण से सिरदर्द, आतों की बिमारियां त्वचा में जलन, उल्टी, चक्कर आना, आदि उत्पन्न हो सकते है।

(iii) मनोवैज्ञानिक प्रभाव :–

ध्वनि प्रदूषण का जीवों पर मानसिक प्रभाव पडता है जिससे उनके आचरण और व्यवहार में परिवर्तन होता है। स्वभाव में चिडचिडापन आ जाता है और मानसिक तनाव उत्पन्न होता है। मनुष्यों में आपसी मन मुटाव पैदा होता है। घरेलू झगडे जन्म लेते है।

(iv) अन्य प्रभाव :–

ध्वनि प्रदूषण वार्तालाप अथवा भाषण में व्यवधान उत्पन्न करता है। यह कक्षा में होने वाले अध्यापन कार्य में भी बाधा पहुंचाता है। ध्वनि प्रदूषण नींद में बाधा पहुंचाता है और इसका स्वास्थ्य पर विपरित प्रभाव पड़ता है। बैंकों और दफ्तरों में ध्वनि प्रदूषण वहां के कर्मचारियों की कार्यक्षमता को कम करता है। ध्वनि प्रदूषण जानवरों और पक्षियों के कार्यकलापों को भी प्रभावित करता है। पक्षी शोर वाले स्थल को छोड़कर शांत स्थलों पर अपने घोंसले बनाते है।

उक्त बिन्दु को ध्यान में रखते हुए हमें चाहिए कि ध्वनि प्रदूषण को कम करने के पूरे प्रयास किये जाये। ये प्रयास सरकारी, गैर सरकारी और व्यक्तिगत स्तर पर निरन्तर किये जाने चाहिये जिससे समाज ध्वनि प्रदूषण से उत्पन्न विकारों से बच सके ।

ध्वनि प्रदूषण व मानव स्वास्थ्य :–

मानव पर्यावरण में अवांछनीय ध्वनि का स्तर निरन्तर बढ रहा है। ध्वनि प्रसारण यंत्र, परिवहन के साधन, कारखानों से आती मशीनों की आवाज, घरेलू साधनों का शोर जीन प्रदूषण का कारण है।

ध्वनि की तीव्रता का मात्रक डेसीबल (Decible) है। मानव कर्ण 20 से 2000 Hz है। आवृति की ध्वनि को सुन सकते है।

80 dB (Decible) से अधिक तीव्रता की ध्वनियाँ प्रदूषण वाली मानी जाती है।

स्वीकार्य ध्वनि मानक

क्षेत्र	ध्वनि का स्तर (**dB**) अधिकतम स्वीकार्य
औद्योगिक एवं व्यावसायिक स्त्रोत	60
आवासीय स्त्रोत	40
संवेदनशील क्षेत्र	35

6.13 वायु प्रदूषण : –

समस्त जीवधारियों के जीवन के लिए वायु एक आवश्यक तत्व है। पृथ्वी के चारों ओर स्थित गैसीय आवरण वायुमण्डल कहलाता है और यह गैसों के मिश्रण से युक्त होता है। इस गैसीय मिश्रण को वायु कहते है। प्राणियों एवं पादपों को विभिन्न जीवदायिनी गैसें वायुमण्डल से प्राप्त होती है। वायु अनेक गैसों का आनुपातिक सम्मिश्रण है।

वायुमण्डल में स्थित गैसों का संघटन निम्न प्रकार से है।

जल वाष्प के अतिरिक्त वायुमण्डल में विभिन्न गैसों का आपेक्षिक अनुपात (80 किमी. ऊँचाई तक)

गैसें	प्रतिशत आयतन
नाइट्रोजन	78.084
ऑक्सीजन	20.9476
आर्गन	0.934
कार्बन डाइ ऑक्साइड	0.0314
हिलियम	0.00052
नीऑन	0.0018
क्रिप्टॉन	0.0010
मीथेन	0.00015
हाइड्रोजन	0.00005
नाइट्रोजन ऑक्साइड	0.00005
ओजोन	0.000007
जीनान	0.000009

इसके अतिरिक्त पृथ्वी का वायुमण्डल जो गैसों का एक आवरण है, को अनेक परतों में विभक्त किया जा सकता है –

1. क्षोभमण्डल :–
   पृथ्वी से 5 किमी. ऊपर तक का क्षेत्र एवं वायुमण्डल की सबसे नीची परत जिसमें ऊंचाई के साथ साथ तापक्रम घटता है।
2. समताप मण्डल :
   ट्रोपोस्फीयर से ऊपर का क्षेत्र (5 किमी. से वह किमी. तक) इसमें ऊँचाई के साथ साथ तापक्रम बढता है।
3. मध्यम मण्डल :–
   यह वायुमण्डल के स्ट्रटोस्फीयर एवं थर्मोस्फीयर के बीच की परत है। इसका क्षेत्र 45 से 80 किमी. तक है।
4. ताप मण्डल :–
   वायुमण्डल का सबसे उपरी भाग (80 किमी. से उपर) जिसमें ऊँचाई के साथ साथ तापक्रम बढता है।

वायुमण्डल पृथ्वी का सुरक्षात्मक अवरोधी (Insulating Cover) है जो आवश्यक गैसे प्रदान करने के साथ रेडियो तरंगों के लिए उचित माध्यम तथा दिन एवं रात्रि के तापक्रम मे अन्तर बनाये रखने के लिए उत्तरदायी है। पराबैंगनी विकिरणो (UV radition) से बचाव के लिये वायुमण्डल पृथ्वी के चारों ओर एक आवरण (Shield) की भांति कार्य करता है।

अनेक प्रकार की प्राकृतिक क्रियाओं जैसे – बिजली चमकना, बादल बनना, वर्षा का होना, हवा चलना, आग जलाना, बर्फ का बनना आदि वायुमण्डल के अभाव में संभव नहीं है।

अत: वायुमण्डल जीवन के लिए परमआवश्यक है। वायुमण्डल में गैसें एक निश्चित मात्रा एवं अनुपात में होती है लेकिन औद्योगिकरण, शहरीकरण, जनसंख्या वृद्धि, वनों का सफाया आदि

के कारण गैसों के अनुपात में असन्तुलन हो गया है। वायु के दूषित होने की यह प्रक्रिया वायुप्रदूषण कहलाती है।

वायु के सामान्य संगठन में परिमाणात्मक (Quantitative) या गुणात्मक (Qualitative) परिवर्तन जो जीवनतंत्र विशेषकर मानव जीवन पर दुष्प्रभाव (Adverse effect) डालते हैं वायुप्रदूषण कहलाता है।

वायु प्रदूषण को अनेक विद्वानों ने परिभाषित क्रिया हे :–

1. पार्किन्स के अनुसार – वायुमण्डल में बाह्य स्त्रोतों से एक या अधिक प्रदूषक जैसे धूल, धुआ, गैस, दुर्गन्ध अथवा जलवायु आदि इतनी मात्रा तथा अबधि तक उपस्थित हो जाए कि मानव, पादप तथा जंतु जगत के लिए हानिकारक हो अथवा जिससे सुखी जीवन और सम्पति में अनुचित बाधा उपस्थित हो जाए, वायुप्रदूषण कहलाता है।
2. के. कानन के अनुसार – वायुमण्डलीय संघटकों में मात्रात्मक परिवर्तन अथवा अवधि व मात्रा में प्रदेश की मानव, पादप तथा प्राणीजगत को हानि पहुचाए उसे वायुप्रदूषण कहते है।
3. विश्व स्वास्थ्य संगठन – वायुप्रदूषण एक ऐसी स्थिती है जिसमें बाह्य वायुमण्डल में मानव ओर उसके पर्यावरण को हानि पचाने वाले तत्व सघन रूप से एकत्रित हो जाते है। सारांश में हम कह सकते है जीव जगत तथा उसके पर्यावरण को हानि पंहुचाने वाले पदाथों के वायुमण्डल में प्रदेश को वायुप्रदूषण कहते है।

6.14 वायुप्रदूषण के स्त्रोत :–

वायु में उपस्थित ऑक्सीजन पर ही जीवन निर्भर है। प्राणी व पौधे वायुमण्डल में श्वसन क्रिया के अंतर्गत O_2 ग्रहण करते है और CO_2 निष्कासित करते है, जिसे हरे पौधे प्रकाश संश्लेषण हेतु ग्रहण कर लेते है। इस प्रकार संतुलित चक्र चलता रहता है।

इस संतुलन में उस समय बदलाव आ जाता है जब उद्योगों, वाहनों एवं अन्य घरेलू उपयोगों से निकलता धुआँ एवं अन्य सूक्ष्म कण, विषैली गैसे, धूल के कण, रेडियोधर्मी, पदार्थ आदि वायु में प्रवेश कर इसे जीव जगत के लिए हानिकारक बना देते है।

वायुप्रदूषण के मुख्य स्त्रोत निम्नलिखित है :–

1. उद्योग :– वायु को प्रदूषित करने में सबसे अधिक योगदान विभिन्न प्रकार के उद्योगों का है। उद्योगों में उत्पादन प्रक्रिया के अन्तर्गत किये जाने वाले दहन और विविध पदार्थो का धुंआ दोनों ही वायु प्रदूषक है। So_2, Co, Co_2, H_2S, हाइड्रोकार्बन्स एवं धूल के कण, धुंआ आदि विभिन्न कारखानों एवं ऊर्जा इकाईयों की चिमनियों से निकलने वाले सामान्य प्रदूषक है। इनके अतिरिक्त Hcl, CL_2, NO_2 तथाCu, Zn, Pb, oa, As के ऑक्साइड भी वायुमण्डल में छोडे जाते है।

   रासायनिक उद्योगों द्वारा निसृत गैसे तो ओर भी विषैली तथा घातक होती है। भोपाल गैस काण्ड इस तथ्य का जीता जागता उदाहरण है। इस काण्ड में अमरीका की यूनियल कार्बाइड कम्पनी के भोपाल स्थित कीटनाशक कारखाने में आइसोमिथइल आइसोसाइनाइड गैस का रिसाव हुआ। इस विषैले गैस ने 3000 से अधिक व्यक्तियों की जान ली तथा असंख्य लोगों को चक्षु, चमडी, सांस तथा अन्य रोगों की चपेट में फेंक दिया।

कुछ उद्योगों जैसे चीनी, कांच, कपडा, तेल शोधन, उर्वरक, धातु एवं रसायन आदि में वायुप्रदूषण अधिक मात्रा में होता है। लास एंजिल्स शहर पर सदैव ही धुएं के बादल छाये रहते है। जापान में प्रदूषण की तीव्रता बढ जाने पर स्कूली बच्चों को मुंह पर जाली पहना दी जाती है।

2. स्वचालित वाहन :– पेट्रोल व डीजल से चलने वाले तीव्र गति के वाहन जैसे स्कूटर, मोटरसाइकिल, बस, ट्रक, कार, डीजल, के रेल इंजन, वायुयान आदि की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इन वाहनों के कारण वायुप्रदूषण की मात्रा तीव्र गति से बढ रही है।

   इन वाहनों से निकलने वाले धुएं में विषैले गैसे तथा हानिकारक तत्व होते है। इनमें हाइड्रोजन, C, N, व S के विभिन्न ऑक्साइड मिले होते है तथा Co व सीसे के कण होते है जो वायुप्रदूषण को संवर्धित करते है। पेट्रोल व डीजल से निकलने वाले नाइट्रोजन के ऑक्साइड धूम कुहरे (Smog) को जन्म देते है। जो सूर्य के प्रकाश में Hydrocarbon से क्रिया कर घातक प्रकाश (रासायनिक धूम) कोहरे (Photochemical Smog) को जन्म देता है।

   Smog का सबसे भयानाक उदाहरण 1952 की 'लन्दन स्मोग घटना है। जिसमें 5 दिन तक लगातार घूम कोहरा छाया रहा। इस कोहरे के कारण हजारों लोग काल कवलित हो गए और सैकडों लोग श्वांस व हृदय रोग से ग्रसित हुए।

   स्वचालित वाहनों द्वारा प्रदूषण वाहनों के साइलेन्सर से निकलने वाली गैसों और अन्य पदार्थो पर आधारित होता है। इन पदार्थो को निम्नांकित श्रेणियों में विभाजित क्रिया जा सकता हैं।

(i) प्रथम वर्ग - N,O,H व पानी की माप समिश्रण जिसे विषैला नही कहा जा सकता है। इस वर्ग में co_2, को भी सम्मिलित किया जा सकता है पर वह भी अधिक विषैले नही है।

(ii) द्वितीय वर्ग – CO जो अत्यधिक विषैले है तथा 12 प्रतिशत तक विस्तृत होती है।

(iii) तृतीय वर्ग - N के Oxide जिनमें नाइट्रोजन मोना ऑक्साइड, No_2 आदि विषैले गैस सम्मिलित है।

(iv) चतुर्थ वर्ग – अनेक कार्बोहाइड्रेट पदार्थ जैसे इथइलीन, एसिटिलीन, मीथेन, प्रोपेन, टोन्यून, व वेन्जीपाइरीन कैंसर कारक होता है।

(v) पंचम वर्ग – एल्डीहाइड श्रेणी का अत्यन्त विषैला पदार्थ पार्मेलीन इस श्रेणी में आता है।

(vi) षष्ठम वर्ग – डीजल से चलने वाले वाहनों द्वारा विसृत कार्बान जो कैंसर कारक है, इस वर्ग में आता हैं।

3. रेडियोधर्मी पदार्थ :– विश्व के अनेक देशों में परमाणु विखण्डन द्वारा उत्पन्न ऊर्जा के आधार पर विद्युत उत्पादन किया जा रहा है। यद्यपि इन संयंत्रों में रेडियाधर्मी पदार्थो के बाहर न निकल सकने हेतु कडे सुरक्षा प्रबंध किए जाते है तो भी मानवीय भूलों तथा तकनीकी त्रुटियों के कारण यह रेडियोधर्मी कभी कभी बाहर निकल ही जाती है।

   आणिवक विस्फोटक एवं आणिवक शस्त्रों के परीक्षण में रेडियोधर्मी पदार्थ निकलते है। इन पदार्थो सें α, β तथा γ किरणों जैसे विकिरण निकलते है। ये मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक हानिकारक है।

सोवियत संघ में हुई चेरनोबिल परमाणु संयंत्र दुर्घटना में हुए रिसाव के फलस्वरूप हजारों व्यक्ति असमय ही काल ग्रसित हो गये। हिरोशिमा और नागासाकी पर हुए परमाणु हमलों के रेडियोधर्मी अवशेष अभी भी स्थिती को सामान्य नही होने दे रहे है।

8.15 वायु प्रदूषक :–

वायु प्रदूषण के प्रदूषक के रूप में गैसे, ठोस एवं तरल कण सम्मिलित होते है जो कार्बनिक एवं अकार्बनिक श्रेणी के होते है। वायुप्रदूषकों को निम्न प्रकार वर्गीकृत कर सकते है।

उत्पति के आधार पर – उत्पति के आधार पर इसे दो भागों में विमाजित किया जा सकता है।

(1) प्राकृतिक (2) मानवीय

मानवीय स्त्रोतों को पुन: दो भागों में विभक्त कर सकते है।

(1) प्राथमिक (2) द्वितीयक

प्राथमिक प्रदूषक वे है जो विभिन्न मानवीय क्रियाओं द्वारा वायुमण्डल में छोडे जाते है जिनमें दहन क्रिया द्वारा छोडे गए कण, औद्यौगिक अपशिष्ट, खनन क्रिया द्वारा उत्पन्न कण आदि।

द्वितीयक प्रदूषक रासायनिक क्रिया का परिणाम होते है जो विभिन्न प्रकार की गैसों एवं प्रकाश रासायनिक क्रियाओं द्वारा उत्तन्न होकर वायु प्रदूषण के कारक होते है।

वायुप्रदूषण के प्राकृतिक स्त्रोत: –

प्राकृतिक क्रियाओं के फलस्वरूप वायुप्रदूषण सीमित व क्षेत्रीय होता है। इसमें जालामुखी का उद्गार एक प्रमुख प्राकृतिक क्रिया है जिसमें विस्फोट से क्षेत्र का वायुमण्डल प्रदूषित हो जाता है। वनों में लगने वाली आग भी वायुप्रदूषण का कारण बनती है। इसी प्रकार समुद्री लवण के कण खनिजों के कण भी वायु प्रदूषण में योग देते है। दलदली प्रदेशों में पदार्थो के सडने से CH_4 गैस प्रदूषण फ़ैलाती है।

कुछ पौधों से उत्पन्न हाइड्रोजन के यौगिक तथा परागकण भी प्रदूषण का कारण है। कोहरा प्रदूषण का एक प्रमुख कारण है। प्राकृतिक स्त्रोतों से होने वाला वायुप्रदूषण सीमित व कम हानिकारक होता है। क्योंकि प्रकृति स्वयं विभिन्न क्रियाओं से इसमें संतुलन बनाए रखती है।

वायुप्रदूषण के मानवीय स्त्रोत :–

मानव ने अपनी विभिन्न क्रियाओं से वायुमण्डल को अत्यधिक प्रदूषित क्रिया है। ऊर्जा के विविध उपयोग, उद्योग, परिवहन, रसायनों के प्रयोग में वृद्धि आदि ने जहां मानव को अनेक सुविधाएं प्रदान की है वही वायु प्रदूषण के रूप में संकट को भी जन्म दिया है। वायु प्रदूषण के विभिन्न मानवीय स्त्रोत दहन क्रियाएं, उद्योग धन्धे, कृषि कार्य, विलायकों का उपयोग तथा रेडियोधर्मिता आदि है।

1. प्राथमिक वायु प्रदूषक –

वे सभी पदार्थ जो पहचान योग्य स्त्रोतों (Identifiable source) से सीधे ही उत्सर्जित किए जाते है, प्राथमिक वायु प्रदूषक कहलाते है। इस श्रेणी के मुख्य प्रदूषक निम्नलिखित है।

(i) कार्बन यौगिक: –

इनमें Co_2 एवं Co मुख्य प्रदूषक है। कोयला, डीजल, पेट्रोल, केरोसीन, लकड़ी इत्यादि के जलने, स्वचालित वाहनों से निकलने वाले धुएं तथा जीवों की श्वसन क्रियाओं के फलस्वरूप Co_2

की काफी मात्रा वायुमण्डल में जुडती है। Co का 80 प्रतिशत उत्पादन मोटर वाहनों से निकलने वाले धुएं से होता है। इसके अतिरिक्त स्टील उद्योग, तेल शोधक कारखाने, ऊर्जा उत्पादन इकाईयां भी Co के स्त्रोत है। पौधों विशेषकर शैवालों में पर्णहरित वर्णको के टूटने से Co निकलती है।

(ii) सल्फर यौगिक: –

सल्फर यौगिक में sa SO_2, H_2S, H_2SO_4, CS_2, कार्बोनिल सल्फाइड (COS), डाइ मिथाइल सल्फाइड आदि मुख्य प्रदूषक है। इनमें से S के Oxide अत्यधिक हानिकारक है। ये सल्फरयुक्त कोयला और पेट्रोलियम पदार्थो के जलने से उत्पन्न होते है। ये यौगिक प्रारम्भ में SO_2 गैस के रूप में निकलते है जो वायुमण्डल में SO_2, में परिवर्तित हो जाते है। SO_2, जल वाष्प की उपस्थिति में H_2SO_4 का निर्माण करती है।

$$H_2S \xrightarrow{O_2} SO_2$$

$$SO_2 + H_2O \longrightarrow H_2SO_3 \quad \text{(सल्फयूरस अम्ल)}$$

$$H_2SO_3 + O \longrightarrow H_2SO_4 \quad \text{(सल्फयूरिक अम्ल)}$$

लगभग 75% SO_2 उद्योगों से कोयले तथा पेट्रोलियम के जलाने से उत्पन्न होती है। शेष मात्रा धातु शोधक कारखानों में कच्ची धातुओं को पिघलाते समय ऑक्सीकरण होने तथा पेट्रोलियम के शोधन से उत्पन्न होती है। SO_2की सर्वाधिक मात्रा पेट्रोलियम शोधक एवं धातु पिघलाने वाले कारखाने के आस पास के वायुमण्डल में पाई जाती है।

हाइड्रोजन सल्फाइड के मुख्य स्त्रोत जलीय वातावरण में जंतुओं और पौधों के सडते हुए मृत शरीर, गंदी नालियों, गंदे जल से भरे स्थान, ज्वालामुखी गैसे, कोयले की खाने तथा दलदली स्थल है। सल्फर युक्त ईधन का उपयोग करने वाले उद्योग भी H_2S उत्पन्न करते है।

(iii) नाइट्रोजन यौगिक :–

नाइट्रोजन के ऑक्साइड अधिकतर NO, N_2O, NO_2 के रूप में पाए जाते है। मोटर वाहनों में उच्च तापक्रम पर गैसोलिन के दहन से निकलने वाला धुंआ, विद्युत उत्पादन, नाइट्रिक अम्ल के उत्पादन से सबंधित कारखाने नाइट्रोजन ऑक्साइड के मुख्य स्त्रोत है।

(iv) क्लोराइड यौगिक :–

क्लोराइड यौगिकों के मुख्य स्त्रोत फास्फेट उर्वरक कारखाने ऐल्यूमिनियम उत्पादन, क्लोरिनेटेड प्लास्टिक, यूरेनियम तथा कुछ अन्य धातुओं के शोधन से संबंधित कारखाने, कीटनाशी पदार्थो का छिडकाव आदि है।

(v) हाइड्रोकार्बन्स –

हाइड्रोकार्बन्स H व C युक्त यौगिक है। C_6H_6 ए बेन्जीपाइरीन CH_4 सामान्य हाइड्रोकार्बन प्रदूषक है। स्वचालित वाहनों से निकलने वाला धुआ इनका मुख्य स्त्रोत है।

(vi) धातुएं :–

सीसा, पारा, Cd, Ni, As, Sn, V, Ti आदि धातुएं ठोस कणों द्रव बूंदों या गैसों के रूप में वायुमण्डल में पाई जाती है। धातुशोधक कारखाने, कवकनाशी (Fungicides), रंग (paints) प्रसाधन सामग्री इनके मुख्य स्त्रोत है।

(vii) कणीय यौगिक :–

कणीय पदार्थो (Particular matter) में भिन्न भिन्न परिमाण के कण वायु में निलम्बित रहते है। 100μ से कम व्यास के सूक्ष्म कण अधिक पाए जाते है। कणीय पदार्थों के अंतर्गत धातुओं C, टार, रेजिन के कण, परागकण, कवक, बैक्टिरिया के बीजाणु आदि आते है।

2. द्वितीयक वायु प्रदूषक :–

ये प्राथमिक प्रदूषकों की आपस में प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न होते है। सूर्य के प्रकाश में, Nitrogen Oxide, Oxygen, गैसोलिन से निकले हाइड्रोकार्बन्स के बीच अभिक्रिया होती है। फलसरूप द्वितीयक प्रदूषक Peroxy Acety Nitrate (PAN) तथा ओजोन (O_3) का निर्माण होता है। इसी प्रकार Peroxy Benzyl Nitrate (PBN) भी द्वितीयक प्रदूषक है। लगभग सभी औद्योगिक क्षेत्रों में Smog में द्वितीयक प्रदूषक होते है। 'उवह शब्द का गठन किस प्रकार से होता है।

Smog = Smog + Fog

Smo + og = Smog

प्राथमिक वायुप्रदूषकों के प्रभाव :–

ये निम्न प्रकार से मानव, जंतु व पादप जीवन को प्रभावित करते है।

(I) Effect of Carbon Compound

कार्बन यौगिकों में Co_2 एवं Co मुख्य प्रदूषक है जो विभिन्न स्रोतों से वायुमण्डल में आते है।

(i) **Co_2**, – प्रकृतिक में Co_2, व Co का संतुलन बनाए रखने में पादप जगत की महत्वपूर्ण भूमिका है परन्तु भूमि से वनों के विनाश एवं तेजी से बढते औद्यौगीकरण के कारण पर्यावरण में Co_2 की मात्रा बढ़ती जा रही है। Bray (1965) के अनुसार 100 वर्षो में Co_2, की मात्रा 249ppm से बढकर 319ppm हो गई है। अधिक मात्रा में Co_2, गम्भीर प्रदूषक का कार्य करती है।

Co_2 वृद्धि के प्रभाव – इससे फोटोसिन्थेसिस की दर प्रभावित होती है। Fertilizing effect के माध्यम से कार्बनडाई ऑक्साइड पादप वृद्धि को प्रभावित करती है।

Green House Effect– ये कार्बनडाई ऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि से वायुमण्डलीय तापक्रम में वृद्धि से संबंधित है। Bray के अनुसार विगत 100 वर्षा में Co_2, की मात्रा में वृद्धि से पृथ्वी का तापमान 0.56^0C बढ गया है। पृथ्वी का तापक्रम इसकी सतह से टकराने वाली सूर्य की किरणों एवं पुन: अंतरिक्ष में विकीरत होने वाली उष्मा के उर्जा संतुलन द्वारा नियंत्रित होता है। वायुमण्डल में Co_2 की मात्रा अधिक होने पर यह एक परत का निर्माण करती है। सूर्य की किरणों की Wave Leanth सूक्ष्म एवं भेदन क्षमता (Pentration power) अधिक होने के कारण ये Co_2 की परत को भेद कर वापस बाहर नही आ पाते वरन् Co_2 व जलवाष्प द्वारा शोषित कर लिए जाते है। जिससे पृथी की सतह का तापमान बढ जाता है।

इस प्रकार Co_2 की परत ग्रीन हाउस का कार्य करती है। जिस प्रकार ग्रीन हाउस के अंदर की उष्मा बाहर विसरित नही होती ।

उसी प्रकार Co_2 की परत से सूर्य की किरणें इसमें प्रवेश कर जाती है। परन्तु Heat Radiation बाहर नही निकल सकते। इस प्रभाव को ही ग्रीन हाउस इफैक्ट कहते है।

(ii) कार्बन मोनो ऑक्साइड :–

कार्बन मोनो ऑक्साइड का 80 प्रतिशत उत्पादन मोटर वाहनों से होता है। दिल्ली, कलकत्ता, मुम्बई जैसे महानगरों की व्यस्त सड़कों के वायुमण्डल में इस विषाक्त गैस की अत्यधिक मात्रा होती है।

Co रंगहीन, गंधहीन, स्वादहीन तथा उत्तेजनाहीन गैस है। अत: पता लगने से पूर्व ही इसके गंभीर प्रभाव होते है। इस गैस की 600.1000ppm सान्द्रता पर मनुष्य को लगभग एक घण्टे में मूर्छा आ जाती है तथा 4 घण्टे के भीतर ही मृत्यु हो जाती है।

Co श्वसन के द्वारा शरीर में प्रवेश करती है। यह रूधिर हीमोग्लोबिन के साथ जुडकर Carboxy haemoglobin बना देती है। इससे रूधिर कोशिकाओं की o_2 ले जाने की क्षमता कम हो जाती है। o_2 की इस कमी को Hypoxia कहते है।

Carboxy haemoglobin की मात्रा में 1–2 प्रतिशत से 3–4 प्रतिशत वृद्धि से Cerobrat Anoxia हो जाता है। यह गैसे श्रवण एवं दृष्टि पर कुप्रभाव डालती है।

(II) Effect of Sulphur Componunds सल्फर यौगिकों मे SO_2, H_2S तथा H_2SO_4 मुख्य प्रदूषक है। H_2SO_4 का निर्माण SO_2, तथा जलवाष्प द्वारा किया जाता है।

(i) SO_2, आखों तथा श्वसन तंत्र में जलन उत्पन्न करती है। नमी की उपस्थिती में इसके H_2SO_4 में पीरवर्तित हो जाने के कारण Skin disease हो जाते है।

0 इस गैस की अधिक मात्रा से कोशिकाओं का Necrosis होता है जिससे पत्तियाँ नष्ट हो जाती है। क्लोरोफिल विलुप्त होने लगता है। फलस्वरूप Chlorosis रोग हो जाता है।

SO_2, की अधिक अर्थात 50 ppm सान्द्रता अनेक पौधों जैसे Alfalfa (रिजका) कपास, सेव आदि में अत्यधिक हानिकारक प्रभाव डालती है। SO_2 पौधों में रन्ध्रों के माध्यम से प्रवेश करती है तथा उत्तको में H_2SO_4 या SO_4 के रूप में ऑक्सीकृत हो जाती है। SO_2, के यह क्षतिकारक प्रभाव (Damaging Effect) SO_2, के ऑक्सीकारी एवं अपचयनकारी गुणों के कारण उभरते है।

SO_2, इमारती सामान जैसे मार्बल, स्लेट, लाइमस्टोन, के अपरदन के लिए उत्तरदायी है। अनेक ऐतिहासिक स्मारकों तथा मूर्तियों पर H_2SO_4 की क्रिया में इनकी सुंदरता नष्ट हो जाती है।

हाइड्रोजन सल्फाइड – यह रंगहीन, सडे अण्डे जैसी दुर्गन्धयुक्त गैस है। H_2S की विभिन्न सान्द्रता पर सिरदर्द (Headache), उल्टी आना (Nausea), शिथिलता (Lastitude) हृदयावसाद (Collapse) मूर्छा तथा मृत्यु भी हो जाती है।

(III) Effectof Oxides of Nitrogen:–

यह पर्यावरण में N_O, N_2, व एवं NO_2 मुख्य रूप से पाये जाते है। N_O गैस जीवों में श्वसन तंत्र से संबंधित रोग उत्पन्न करती है। N_2, फेफडों की Alvcoli को क्षुब्ध (Irrate) करती है। उच्च सान्द्रता पर फेफड़ों में सूजन (Inflamation) के बाद जल शोध (Edeam) होने लगता है तथा अन्त में मृत्यु हो जाती है।

Acide Rain, (अम्ल वर्षा) – विभिन्न स्त्रोतों से निकली SO_2 तथा N के ऑक्साइड वायुमण्डल से पृथ्वी की सतह तक पंहुचने वाले ये हजारों किलोमीटर की यात्रा कर सकते है। ये दोनो ऑक्साइड्स वायमुण्डल में ऑक्सीकृत होकर गन्धक अम्लों व नाइट्रिक अम्लों का निर्माण

करते है जो वायुमण्डल में उपस्थित जल के साथ घुलकर पृथ्वी पर आते है तथा वायुमण्डल में ही कोहरे व बादल के रूप में रह जाते है। इसे ही Acid Rain कहते है।

इससे मृदा की pH कम हो जाती हैं। इससे फसल व जंगल नष्ट हो रहे है। जलीय जीवन भी प्रभावित होता है। इस वर्षा के कारण स्वीडन, नार्वे, न्यूयॉर्क की अनेक झीलें मछलियां रहित हो गई है। उन्हें मछलियों का कब्रिस्तान (Fish Graveyard) कहा जाने लगा है।

(IV) Effect of Metal Polluatant:–

वायुमण्डल में cd, Pd, व Hg अत्यधिक हानिकारक प्रदूषक है। Cd अल्पमात्रा में भी विषाक्त होती है। यह Kidney व Liver में संचित हो जाता है और अतितनाव एवं Rental damage उत्पन्न करता है। cd से Bone व joint की भी अत्यधिक पीडादायक बीमारी itai–itai या ouch–ouch हो जाती है।

Pd, RBC को नष्ट करता है। फलस्वरूप किडनी व लीवर में संक्रमण हो जाता है। यह शिशुओं में वृद्धि को प्रभावित करता है।

द्वितीयक वायु पदूषको का प्रभाव :–

प्रकाश रासायनिक क्रियाओं द्वारा निर्मित द्वितीयक प्रदूषक PBN, PAN, O_3 आदि है जो अत्यधिक हानिकारक है। इनसे पौधों में श्वसन दर एवं प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कम हो जाती है। मनुष्य की आखों में पानी आने लगता है तथा दृष्टि कमजोर हो जाती है। PBN अत्यधिक तेज आंख उत्तेजक (Eye irriatant) एवं अश्रुजनक (Lachryonator) है।

इन प्रदूषकों से Asthama Bronchitis,रोग हो जाते है।

O_3 यह स्ट्रेटोस्फीयन में पृथ्वी से 25 किमी. उपर पाई जाती है। यह पराबैगनी विकिरणों को पृथ्वी पर आने से रोकती है। अत: O_3 में कमी होने से पूरे जैव तंत्र पर हानिकारक प्रभाव हो सकते मानव द्वारा फ्रीन, शीतभण्डारों में Chloro fluoro Carbon (CFC) के अधिक उपयोग के कारण O_3, की सांद्रता में कमी आई है।

O_3, में कमी के कारण UV तले के पृथ्वी पर पंहुचने से त्वचा का कैंसर आदि रोग हो जाते है। O_3 की उच्च मात्रा से नाक तथा गले में उत्तेजना हो जाती है।

6.16 वायु प्रदूषण के दुष्प्रभाव :–

वायु प्रदूषण का प्रभाव स्थानीय क्षेत्रीय एवं विश्वव्यापी होता है। वास्तव में वायुप्रदूषण वर्तमान युग की औद्योगिक एवं तकनीकी सभ्यता की एक ऐसी देन है जो न केवल पारिस्थितिक तंत्र को असंतुलित बनाकर विभिन्न हानिकारक प्रभाव उत्पन्न कर रहा है अपितु मानव, वनस्पति तथा अन्य जीवों के लिए भी संकट का कारण बनाते जा रहा है।

मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव :–

सर्वाधिक प्रभाव श्वसन तंत्र पर पडता है। क्योंकि श्वास के साथ ग्रहण की गई वायु रक्त में घुलती नही अपितु Hb के साथ संयुक्त होकर समूर्ण शरीर में भ्रमण करती रहती है। यह फेफडों द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में पहुंचकर अनेक रोगों का कारण बनती है। इससे श्वास संबंधी रोग जैसे ब्रोकाइटिस, विलिनोसिस, गले का दर्द, निमोनिया, फेफडों का कैंसर आदि हो जाते है।

So_2, से Emphysema रोग हो जाता है। वाहनों के धुएं में उपस्थित Pb कण शरीर में पंहुच कर यकृत, आहारनाल, बच्चों में मस्तिष्क विकार, bones का गलना आदि रोगों का कारण बनते है।

परिवहन एवं उद्योगों से निकले हुए धुएं के फलस्वरूप बना Smog वायुमण्डल में छा जाता है तथा मृत्यु का कारण बनाते है।

वनस्पति पर प्रभाव :–

वनस्पति पर भी हानिकारक प्रभाव पड़ता है। अम्लीय वर्षा, धूम कोहरा, O_3, CO, SO_2, CO_2, पलोराइड्रू आदि का हानिकारक प्रभाव होता है।

वायुप्रदूषण के कारण प्रकाश कम प्राप्त होता है जिसे फोटोसिन्थेसिस की दर प्रभावित होती है।

घूम कोहरे O_3, के कारण पत्तियां विकृत एवं सफेद होकर गिरने लगती है। अधिक वायु प्रदूषण से पौधे परिपक्व नही हो पाते तथा फल भी पूर्ण रूप से परिपक्व नही होते।

जीव जन्तुओं पर प्रभाव :–

मानव के समान पशुओं एवं अन्य जीवों पर भी हानिकारक प्रभाव पडता है। जीव वायुग्रहण करते है। अतः प्रदूषण से विषाक्त पदार्थ शरीर में पहुच जाते है जो हानिकारक होते है। अनेक प्रकार किट जैसे मधुमक्खी, शलभ आदि प्रदूषण से मर जाते है।

6.17 वायु प्रदूषण के नियंत्रण के उपाय :–

वायुप्रदूषण को नियंत्रित करने के दो प्रकार के प्रयत्न आवश्यक है :–

(i) वर्तमान में हो चुके प्रदूषण को नियंत्रित करना।

(ii) इस प्रकार के उपाय किए जाए ताकि भविष्य में प्रदूषण न हो।

वायुप्रदूषण को नियंत्रित करने के निम्न उपाय है :–

(1) वाहनों द्वारा प्रदूषण न हो निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्य है – वाहन का इंजन पुराना न हो। वाहनों से उत्पन्न धुएं पर छलती तथा पश्च ज्वलक लगाया जाए। डीजल में संयोजी पदार्थ मिलाकर, पेट्रोल से Pb व S निकालकर प्रदूषण कम किया जा सकता है।

(2) परम्परागत ईधन का प्रयोग समाप्त करना आवश्यक है।

(3) रेलवाहनों में कोयले, डीजल के स्थान पर विद्युत चलित इंजन का प्रयोग किया जाए।

(4) अनेक उद्यम जैसे ईट का भट्टा, मिट्टी के बर्तन पकाना आदि को आबादी से दूर स्थापित करना चाहिए।

(5) वनों में लगने वाली आग तथा अग्निकाण्ड पर नियंत्रण करना आवश्यक है।

(6) उद्योगों की स्थापना घने बसे भागों व नगरी से दूर करनी चाहिए।

(7) उद्योगों की चिमनियों की ऊँचाई निर्धारित मापदण्ड के अनुसार होनी चाहिए।

(8) वायुप्रदूषण रोकने के लिए पर्याप्त वृक्षारोपण आवश्यक है। प्रत्येक नगर, ग्राम व उद्योग के चारो ओर हरित बेल्ट (Green belt) का विकास किया जाना आवश्यक है।

(9) घरेलू रसोई से निकलने वाले धुंए को निर्धम चूल्हा, सोलर कुकर्स तथा बायोगैस के उपयोग से कम किया जा सकता है।

(10) जहरीली गैसों का वायुमण्डल में पंहुचने से पूर्व स्त्रोत पर ही रासायनिक विधियों द्वारा पृथक्करण करना चाहिए।

(11) केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा बनाए गए पर्यावरण संरक्षण कानूनों का सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।

(12) अनेक प्रकार के प्रदूषकों को रूपान्तरण की क्रिया द्वारा कम हानिकारक बनाया जा सकता है। ऐसी क्रियाओं के विकास हेतु सस्ते साधनों के विकास के लिए श्रम करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक देश में वायुप्रदूषण को रोकने के लिए कुछ नियम व कानून बनाये गए है। उन नियमों व कानूनों की परिकल्पना करके जनसाधारण को सरकार का सहयोग करना चाहिए ताकि मानव जाति का भविष्य सुरक्षित रह सके।

बोध प्रश्न-2

1. आप प्रदूषण को किस प्रकार परिभाषित करेंगे?
2. पर्यावरणीय प्रदूषण से आप क्या समझते हैं तथा ये कितने प्रकार का होता है?
3. जल प्रदूषण के प्रमुख स्त्रोत कौन से है?
4. कृषि रसायन पर्यावरण को किस प्रकार प्रभावित करते है?
5. औद्योगिक अपशिष्टों का मानव शरीर पर क्या प्रभाव पडता है?
6. जल प्रदूषण रोकने के लिए कौन से उपाय किये जा सकते है?
7. ध्वनि प्रदूषण के प्रभावों को कितनी श्रेणियों में में विभेदित किया जा सकता है?
8. वायु प्रदूषण के प्रमुख स्त्रोतों का वर्णन कीजिये।
9. स्वचालित वाहनों से कौन सी गैसें उत्सर्जित होती हे?
10. वायु प्रदूषण के प्राकृतिक स्त्रोतों को बतलाइये ।
11. प्राथमिक वायु प्रदूषक क्या होते हैं तथा ये कितने प्रकार के होते है?
12. वाहनों से निकलने वाले प्रमुख प्रदूषक कौन से है?
13. वायु प्रदूषकों का मानव जीवन पर क्या प्रभाव पडता है?
14. खनन अपशिष्ट किस प्रकार प्रदूषण फैलाने में मदद करते है?

6.18 कूडे–कचरे से प्रदूषण :–

औद्योगिक प्रक्रिया में अनेक पदार्थो का जैविक अपघटन हो जाने से वे पदार्थ अपने मूल रूप में नहीं रह पाते हैं तथा वे दूसरे रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। कुछ पदार्थ जैसे एल्यूमिनियम के डिब्बे, पारा तथा अनय धातुऐं भौतिक, रासायनिक या जैविक क्रियाओं से विघटित नहीं होते हैं तथा ये अविघटनीय प्रदूषण कहलाते हैं।

6.19 प्रदूषण के कारण –

(1) घरेलू अपशिष्ट – यह प्रदूषण इस प्रकार की सामग्री से होता है जो घर में अथवा अन्य कार्यस्थल पर बेकार हो गई तथा उपयोग में ले ली गई वस्तुओं से शेष रही चीजों को

कूडे के रूप में फैंक दी जाती है। इनमें मुख्यत: शीशियां, क्रॉकरीं के दुकडे, प्लास्टिक के डिब्बे, पॉलीथीन के बैग्स आदि हैं। इसके अतिरिक्त कागज के दुकडे, पैकिंग में ओय पुट्ठे के कार्दून्स, घरेलू साइकिल के स्पेयर्स व अन्य लोहे–पत्तियों दुकडे आदि भी इस प्रकार कूडे का भाग बनते हैं। मकानों का मलवा, कृषि कार्यो से बचा अवशेष, किन्हीं फैक्टरियों से निकला कचरा व अपशिष्ट ओर न जाने कितनी प्रकार की चीजें होती है, जो किसी काम की नहीं मानकर कूडे–कचरे का माग बनती हैं। यह अब विश्वव्यापी समस्या हो गई है। अमेरिका जैसा धनाढ्य देश तो अब मोटरकार जैसी चीजों को खराब होने पर नष्ट करने के लिये कूडे में डाल देता है। इससे स्थान की कमी होती है, गंदगी बढ़ती है तथा इनका कहीं ले जाकर पहुंचाना भी काफी व्यय वाला और सरदर्द बन जाता है

(2) औद्योगिक अपशिष्ट :– औद्योगिक संयंत्रों से भारी मात्रा में परित्यक्त सामग्रियाँ निस्तारित की जाती है, जिनमे चीनी उत्पादन के समय चीनी कारखाने से भारी मात्रा में खोई (Bagasse) का उत्पादन होता है। तापीय ऊर्जा संयन्त्रों (Thermal Power Station) से उत्पादित राख, ताम्बा एवं एल्यीमीनयम गलाने के कारखानों से परित्यक्त हानिकारक अपशिष्ट भी समस्यामूलक पदार्थ है।

(3) खनन अपशिष्ट – औद्योगिक कच्चे माल एवं अन्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रकृति से अनेक खनिजों का खनन किया जा रहा है, खनन के उपरान्त भूमिक को खुला ही 'छोड दिया जाता है, जिससे काफी मात्रा में उपजाऊ भूमि बीहडों में बदल जाती है, खनिज खनन अन्य प्रकार के प्रदूषण भी उत्पन्न करता है। दून घाटी में स्थित देहरादून क्षेत्र में चूना पत्थर के खनन द्वारा प्रतिवर्ष 390000 हैक्टेयर भूमि प्रभावित हो रही है। इस घाटी में में 175 से अधिक चूना पत्थर की खानें चल रही हैं, जिससे यहाँ की प्राकृतिक वनस्पति पर भी बुरा प्रभाव पड रहा है और भूमि–क्षरण की समस्या विकराल रूप धारण कर रही है।

(4) कृषि अपशिष्ट :– कृषि कार्य के दौरान फसलों की कटाई के समय झड़ने वाले फूँस, शेष बचे पत्ते, डंठल, घांस–फूँस, बीज इत्यादि कृषि अपशिष्टयों में सम्मिलित किये जाते हैं। खेतों में पडा रहने वाला ये अपशिष्ट पदार्थ वर्षा जल से मिलकर सड जाता है तथा समस्या उत्पन्न कर देता है। इनके अतिरिक्त सर्वाधिक हानिकारक पदार्थ खेतों में प्रयोग में लिये जाने वाले रासायनिक उर्वरक, कीटनाशी तथा पीडानाशी हैं जो अत्यधिक भूमि प्रदूषण करते हँ, यद्यपि रासायनिक उर्वरक, फसलों के लिये पोश्ज्ञक तत्व प्रदान करते हैं, किन्तु इनका प्रयोग अधिक मात्रा में किया जाये तो इनके कारण मृदा की मौलिक भौतिक एवं रासायनिक गुणों में भारी परिवर्तन आ जाते हैं। इसी प्रकार जैबनाशियों कीटनाशी, रोगनाशीद्ध के सर्वाधिक प्रयोग के कारण जीवाणु सहित सूक्ष्म जीव नष्ट हो जाते हैं, जिससे मृदा गुणवत्ता में हास होता है

6.20 कूडे–कचरे से प्रदूषण के दुष्प्रभाव :–

(1) कूडे–करकट से स्वच्छ भूमि गन्दगी के ढेरो से ढक जाती है तथा सर्वत्र इन ढेरों के सडने से दुर्गन्ध फैलती है। विभिन्न प्रकार के मच्छर, मक्खी कीड़े–मकोड़े आदि भी पनप जाते हैं जो पर्यावरण में विभिन्न प्रकार की गन्दगी तथा बीमारियों का कारण बनते हैं। इनसे

होने वाली बीमारियों में पेचिस, प्रवाहिका, हैजा, आत्रशोध आखों के रोग तथा तपेदिक प्रमुख है।

(2) भूमि प्रदूषण अन्य पर्यावरणीय प्रदूषकों को जन्म देता है।

(3) औद्योगिक अपशिष्ट विभिन्न जल स्त्रोतों में मिलकर उन्हें प्रदूषित कर मानव एवं अन्य जीव–जन्तुओं के उपयोग के अयोग्य बना देते हैं।

(4) विभिन्न प्रकार के अपशिष्ट पदार्थो को सर्वप्रथम समुद्रों में डालना उपयुक्त मानते हैं। जिससे सामुद्रिक पारिस्थितिक तन्त्र असंतुलित हो जाता है, जिसे पुन: पूर्व की संतुलित अवस्था में लाना न केवल कठिन है, बल्कि असम्भव भी होता है।

(5) कृषि में प्रयोग में लाने वाले जैवनाशी रसायनों तथा उद्योगों के निस्तारित हानिकारक अपशिष्टों के कारण उत्पन्न भूमि प्रदूषण से भूमि उर्वरा शक्ति नष्ट होती है।

(6) मानव मल का निष्कासन तथा विनिक्षेपणसमुचित ढंग से नहीं करने पर मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पडते हैं। इससे पर्यावरण दूषित होने के साथ ही अनेक प्रकार की बीमारियाँ हो जाती है।

(7) भूमि प्रदूषण के प्रदूषक तत्वों द्वारा प्रकृति के कई पारिस्थितिक तन्त्र अपन सन्तुलन खो देते हैं। औद्योगिक तथा नगरीय अपशिष्टों के विभिन्न शुद्ध क्षेत्रों–नदियों, झीलों, समुद्रों तथा साफ भू–क्षेत्रों आदि में पहुँचने पर ये अनेक विकृतियाँ उत्पन्न कर देते हैं।

6.21 कूडा–कचरा प्रदूषण का नियन्त्रण :–

कूडा–कचरा प्रदूषण की प्रक्रिया में विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त अपशिष्ट से भूमि अपनी प्राकृतिक संरचना खोती जा रही है तथा विभिन्न दुष्परिणाम परिलक्षित होने लगे हैं। भूमि विभिन्न प्राकृतिक तथा मानव संसाधनों का आधार है, जो इन्हें पोषण प्रदान करती है। अत: भूमि प्रदूषण पर प्रभावी नियन्त्रण अत्यावश्यक है। भूमि प्रदूषण का प्रमुख तत्व ठोस अपशिष्ट है। भूमि प्रदूषण का प्रमुख तत्व ठोस अपशिष्ट है। इसको व्यवस्थित स्थान पर निस्तारित क्रिया जाये तथा जहां तक सम्भव हो सके इसका चक्रीकरण करके पुन: उपयोगी पदार्थो में बदला जाये।

6.22 सारांश:–

सृष्टि के प्रारम्भ से ही पर्यावरण एवं मानव का अटूट सम्बन्ध रहा है। प्रदूषण एवं प्राकृतिक संसाधनों का विघटन एवं विनाश आज एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन गई है। किसी भी लोक कल्याणकारी राष्ट्र के विकास के लिए पर्यावरण संरक्षण एक आम आवश्यकता है। आज के विभिन्न स्तरों पर पर्यावरण प्रदूषित हो कर हमें विनाश की ओर धकेल रहा है।

प्राचीनकाल में मनुष्य यज्ञ– जप–तप आदि के द्वारा वायुमण्डल को शुद्ध रखते थे। शुद्ध पर्यावरण के ही कारण प्राचीनकाल में व्यक्ति की औसत आयु लगभग 120 हुआ करती थी जो प्रदूषण बढने के साथ साथ आधी रह गई है।

6.23स्व मूल्यांकयान प्रश्न

1.प्रदूषण को मुख्य रूप के कितने भागों मे बांटा जा सकता है?

2.जल प्रदूषण क्या है? इसके कारण तथा विवरण के उपाय बताइये।

3.जल प्रदूषण के प्रमुख स्त्रोतों के बारे मे बताइये।

4.डेसिबल पैमाने पर ध्वनि प्रदूषण का सूत्र लिखिए।

5.ध्वनि प्रदूषण के मापन कि इकाई डेसिबल का नामकरण किस वैज्ञानिक के सम्मान मे किया गया है

6.ध्वनि प्रदूषण क्या है? ध्वनि प्रदूषण के स्त्रोत इस प्रदूषण पर नियंत्रण किस प्रकार किया जा सकता है

7.ध्वनि प्रदूषण और मनुष्य पर इसके प्रभावों का वर्णन कीजिए?

8.वायु प्रदूषण के प्रमुख स्त्रोतों का वर्णन कीजिए।

9.वायु प्रदूषण के कारण क्या है? तथा उनके कैसे बचा जा सकता है?

10.कूड़े-कचरे से प्रदूषण किस प्रकार फैलता है।

11.कूड़े-कचरे से हुए प्रदूषण के दुष्प्रभावों का विस्तार से वर्णन कीजिये।

6.24 संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Agarwal, K.C.Environmental Biology, Bikaner (India); Agrobotanical Publisher, 1987
2. वोल्कोव, अ. धरती और आकाश, मास्को. विदेशी भाषा प्रकाशन गृह, 1966
3. हमारा पर्यावरण, पर्यावरण कक्ष, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान विज्ञान और पर्यावरण केन्द्र नई दिल्ली, 1988

इकाई–7

Delection of Natural Resources: Causes and Measures for Conservation of Forest ans Wild life

प्राकृतिक संसाधनों का विलोपन : वन एवं वन्य जीवों के विलोपन के कारण एवं संरक्षण के उपाय

इकाई की रूपरेखा

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 संसाधनों का वर्गीकरण

बोध प्रश्न–1

7.4 संसाधन संरक्षण की आवश्यकता

बोध प्रश्न–2

7.5 वन संसाधन विलोपन के कारण एवं संरक्षण के उपाय

7.5.1 वनोन्मूलन के कारण

7.5.2 वनोन्मूलन के प्रभाव

7.5.3 वन संरक्षण के उपाय

बोध प्रश्न–3

7.6 वन्य जीव विलोपन कारण एवं संरक्षण के उपाय

7.7 वन्य जीवों का संरक्षण

7.8 भारतीय परिदृश्य

बोध प्रश्न–4

7.9 सारांश

7.10 स्व मूल्यांकन प्रश्न

7.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

7.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई अर्थात प्राकृतिक संसाधनों का विलोपन के अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं:–

(i) संसाधनों का अर्थ एवं प्रकृति स्पष्ट करना।

(ii) संसाधनों के प्रकार एवं प्राकृतिक संसाधनों के स्वरूप से परिचित कराना।

(iii) प्राकृतिक संसाधनों के विलोपन का संकट एवं संरक्षण की आवश्यकता।

(iv) वन विनाश (वनोन्मूलन) के कारण।

(v) वन संरक्षण के हेतु उपाय।

(vi) वन्य जीवों के विलोपन की समस्या एवं

(vii) वन्य जीवों के संरक्षण हेतु उपायों की जानकारी देना ।

7.2 प्रस्तावना :–

मानव जीवन का व्यक्तित्व प्रगति एवं विकास संसाधनों पर निर्भर है। आदिकाल से मनुष्य प्रकृति से विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त कर अपनी आवश्यकताओं को पूरा करता रहा है। वास्तव में संसाधन वे हैं जिनकी उपयोगिता मानव के लिये हो। कोई भी जैविक एवं अजैविक पदार्थ या वस्तुएँ या ऊर्जा जो मानव की सहायता के लिये या किसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये प्रयोग किये जाते हैं संसाधन कहलाते हैं। संसाधनों के साथ उनकी उपयोगिता (Utility) एवं कार्यात्मकता (Funtionability) जुडी हुई है। संसाधन की शब्दकोषीय परिभाषा है :–

(i) जिस पर कोई, सहायताए पोषण और आपूर्ति हेतु आश्रित हो।

(ii) दिये गये साधनों को प्राप्त करने का ढंग।

(iii) अनुकूल परिस्थितियों से लाभ उठाने की क्षमता।

संसाधनों का परिभाषित करते हुए जिमरमेन ने अपनी प्रसिद्ध प्रस्तुत 'वर्ल्ड रिसोर्सेज एण्ड इण्डस्ट्रीज' में लिखा है :–

"The World resource does note refer to a thing or a substance but to a function which a thing or a substance may perform or to an operation in which it may take part"–

अर्थात् संसाधन वस्तु. या पदार्थ न होकर एक क्रिया है जिसके माध्यम से उस पदार्थ की उपयोगिता सम्भव हो। वास्तव में प्राकृतिक वातावरण के तत्व संसाधन तभी बन सकते हैं जब मनुष्य उसकी उपयोगिता न केवल समझता हो अपितु उनका उपयोग भी करता हो।

मानव सभ्यता के विकासए आवश्यकताओं में वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि तथा वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास से संसाधनों का उपयोग अधिक से अधिकतम होने लगा। फलस्वरूप संसाधनों में कमी आने लगी। संसाधन क्योंकि असीमित नहीं होते और उनका अनियोजित शोषण उन्हें समाप्त कर सकता है। अतः संसाधनों के संरक्षण (conservation of resource) का प्रश्न उपस्थित हुआ। इसमें भी प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण का प्रश्न आज के विश्व में प्रमुख है क्योंकि इसके अभाव में परिस्थितिक संकट उपस्थित हो सकता हैए जिसका परिणाम भविष्य में सम्पूर्ण मानव जाति के लिये हाँनिकारक होगा। प्रस्तुत इकाई में प्राकृतिक संसाधनों के विलोपन (विशेषकर वन एवं वन्य जीवो) के कारणों एवं संरक्षण का विवेचन किया जा रहाए इससे पूर्व संसाधनों के प्रकार एवं संरक्षण की आवश्यकता का संक्षिप्त विवेचन अपेक्षित है।

7.3 संसाधनों का वर्गीकरण :–

संसाधन अनेक प्रकार के होते हैं, जिनका वर्गीकरण विशेषज्ञों ने अध्ययन की सुविधा हेतु अनेक प्रकार से किया है। संसाधनों का सामान्य वर्गीकरण निम्न रूपों में किया जा सकता है –

संसाधनों का वर्गीकरण

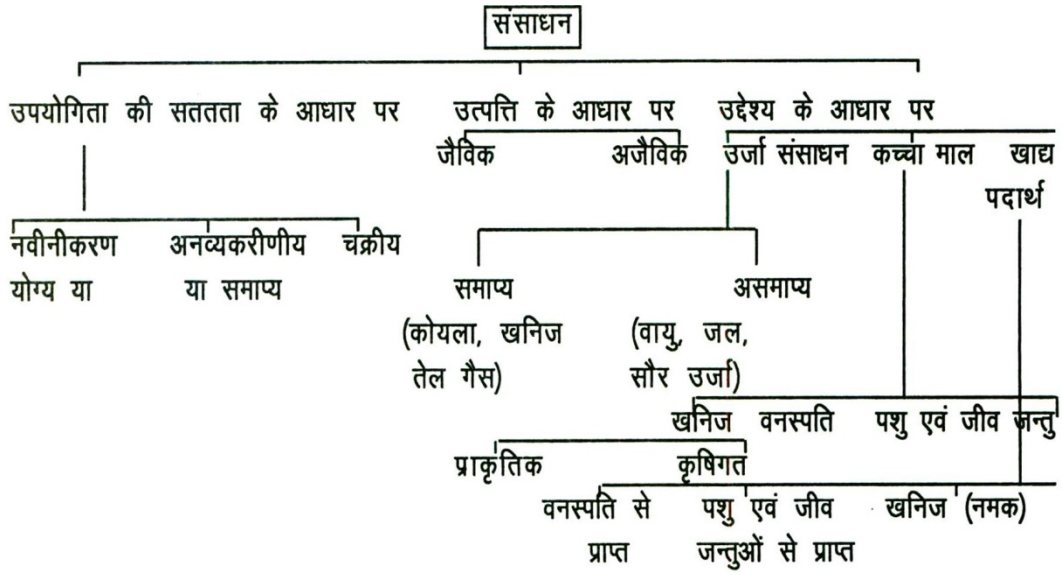

उपर्युक्त वर्गीकरण में विचारणीय है :

(i) नवीनीकरणीय संसाधन (Renewable Resource), एवं

(ii) अनव्यकरणीय संसाधन (Non– Renewable Resource)

नवीनीकरणीय संसाधन वे हैं जो पुन: प्रयोग में लिये जा सकते हैं अर्थात् इनका निर्माण निरन्तर होता रहता है, जैसे जल, सौर ऊर्जा, ज्वार–भाटा ऊर्जा, पवन ऊर्जा, मृदा, वनस्पति एवं प्रजननरत् जैव संसाधन। इसके अन्तर्गत जल शक्ति भी सम्मलित की जाती है तथा उसे प्रवाही संसाधन (Flow Resource) कहा जाता है।

अनव्यकरणीय संसाधनों को निवर्तनीय (Exhaustible) संसाधन भी कहते हैं, क्योंकि इनका पुन: निर्माण निकट भविष्य में संमव नहीं है और जिनका एक बार उपयोग कर लेने पर वे नष्ट हो जाते हैं। इसमें सभी प्रकार के धात्विक एवं अधात्विक खनिज, पेट्रोलियम, कोयला आदि सम्मलित हैं। एक सामान्य वर्गीकरण के अनुसार संसाधनों को दो वृहत् वर्ग अर्थात् प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधन में विभक्त किया जाता है।

प्राकृतिक संसाधन से तात्पर्य वे संसाधन हैं जो प्रकृति ने हमें प्रदान किये हैं तथा हम उनका विविध प्रकार से उपयोग करते हैं। ये हैं – वायु सौर ऊर्जा, भूमि, मृदा, जलीय संसाधन – (नदियाँ झीलें जल प्रपात सागर महासागर भूमिगत जल), खनिज संसाधन, शक्ति के साधन, प्राकृतिक वनस्पति एवं जन्तु संसाधन। दूसरी ओर मानव संसाधन (Human resources) में मानव स्वयं एक संसाधन है। मानव अपने श्रम, ज्ञान एवं तकनीक से विविध संसाधनों का उपयोग करता है।

प्रश्न बोध -1

1. प्रकृतिक पदार्थ कब संसाधन बनते हैं?
2. संसाधनों की आवश्यकता कब होती है?
3. क्या संसाधन मानवोपयोगी होते हैं?
4. संसाधन एक क्रिया है, यह किसने कहा?
5. क्या प्रकृतिक संसाधन असीमित होते हैं?
6. संसंधानों के वर्गीकरण का आधार क्या है?
7. जिन संसाधनों का निरंतर निर्माण होता रहता है उन्हे क्या कहते हैं?
8. अनव्याकरण संसाधन कौन से हैं?
9. प्रकृति प्रदत संसाधनों को किस नाम से पुकारा जाता है?
10. वायु एवं जल किस प्रकार के संसाधन हैं?
11. क्या वन्स्पति प्रकृतिक संसाधन है?

7.4 संसाधन संरक्षण की आवश्यकता :–

मानव अनादिकाल से प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग एवं उपभोग करता रहा है और आज भी कर रहा है। निरन्तर उपयोग से किसी भी वस्तु अथवा पदार्थ की कमी आ जाना अथवा समाप्त हो जाना स्वाभाविक है। यदि उसका पुन: निर्माण नहीं हो रहा है तो यह अवश्यम्भावी है। यही नहीं, अपितु कुछ संसाधनों का अनियमित तथा अवैज्ञानिक शोषण के कारण उनका विलोपन भी होता जा रहा है। यही कारण है कि आज विश्व से अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो गई हैं तथा अनेकों संकटाग्रस्त हैं। यद्यपि प्रकृति में यह क्षमता होती है कि वह अनेक संसाधनों का पुन: निर्माण करती रहती है किन्तु अत्यधिक शोषण एवं व्यापारिक प्रवृति के कारण उनका यथा समय पुन: निर्माण नहीं हो पाताए अत: उनका विलोपन तीव्र गति से हो रहा है। यदि इसी प्रकार से संसाधनों का शोषण होता रहा तो हमारी भावी पीढ़ी न केवल उनके उपयोग से वंचित हो जायगी अपितु परिस्थितिकी संतुलन भी खतरे में पड जायगा। इसी कारण संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता अनुभव की गई।

संरक्षण से तात्पर्य है, संसाधनों का उचित उपयोग। वास्तव में संरक्षण वे प्रयास हैं जिनसे प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग (Rational use), परिरक्षण (Preservation) तथा नवीनीकरण (Renewal) संमव है। संरक्षण से यह तातर्य कदापि नहीं कि उनका उपयोग रोक दिया जाय, अपितु उसका उचित एवं आवश्यक उपयोग ही संरक्षण है, जिसके माध्यम से हम न केवल वर्तमान में उनका उपयोग कर सकते हँ अपितु भविष्य में भी उनके उपयोग हेतु आश्वस्त हो सकते हैं।

प्राकृतिक संसाधन संरक्षण के विचार का प्रारम्म सर्व प्रथम संयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ। अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने व 1908 में प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण अमियान का श्रीगणेश किया तथा प्राकृतिक संसाधनों पर सम्मेलन आयोजित कर सम्पूर्ण विश्व का ध्यान आकृष्ट किया। 1929 में सोवियत संघ में प्रकृति के संरक्षण से सम्बन्धित कांग्रेस का आयोजन किया गया, जिसमें संसाधनों के विवेकपूर्ण तथा नियंत्रित उपयोग पर बल दिया गया। इसके पश्चात संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वाधान में पर्यावरण संरक्षण के अनेक कार्यक्रम नियमित

रूप से चलाये जा रहे हैं। आज समूर्ण विश्व के देश प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के प्रति सचेष्ट हैं, क्योंकि इसी के माध्यम से विश्व के संसाधनों का उचित उपयोग संभव है।

प्रश्न बोध -2

1. क्या प्रकृतिक संसाधन असीमित हैं?
2. प्रकृतिक संसाधन क्यों समाप्त होते है?
3. संसाधन संरक्षण की आवश्यकता क्यों हैं?
4. यदि संसाधनों का वर्तमान मे अत्यधिक दोहन होगा तथा उसका परिणाम क्या होगा?
5. संरक्षण किसे कहते हैं?
6. क्या भावी पीढ़ी के लिये संसाधन बचाये रखना संरक्षण है?
7. क्या संसाधन का विवेकपूर्ण उपयोग संरक्षण है?
8. किस देश मे सर्वप्रथम प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण का विचार प्रारम्भ हुआ?

7.5 वन संसाधन विलोपन के कारण एवं संरक्षण के उपाय :–

प्राकृतिक वनस्पति अथवा वन प्रकृति प्रदत्त सम्पदा है जो एक ओर मानव के अनेक उपयोग में आते हैं तो दूसरी ओर पर्यावरण संतुलन बनाये रखने में सहायक होते हैं। वनों से अनेक प्रकार की उपयोगी वस्तुएँ जैसे इमारती लकड़ी, जलाऊ लकड़ी, लकड़ी का कोयला, प्लाईवुड, बाँस, बेंत, सेल्यूलाज, गोंद, लाख कत्था रबर, अनेक प्रकार की औषधियाँ आदि प्राप्त होती हैं तथा अनेक उद्योगों जैसे कागज, दियासलाई, लाख, पेन्ट, वार्निश कत्था फर्नीचर आदि के लिए कच्चा माल भी प्राप्त होता है। वन परिस्थितिकी संतुलन बनाने में सहायक होते हैं। ये तापमान को नियंत्रित करते हैं तथा वर्षा में सहायक होते हैं। भूमि के कटाव को रोकना तथा मृदा को उर्वरक बनाने में वनस्पति की महती भूमिका है, साथ ही अनेक वन्य जीव–जन्तुओं एवं पक्षियों के प्राकृतिक आश्रय स्थल होते हैं। एक समय था जब पृथ्वी के 70 प्रतिशत अर्थात 12 अरब 80 करोड हेक्टेयर पर वन थे जो वर्तमान में 16 प्रतिशत अर्थात लगभग 2 अरब हेक्टेयर भूमि पर रह गये हैं। भारत में वनों का क्षेत्र 19.47 प्रतिशत है। वनों का निरन्तर विनाश हो रहा है। वनों के विलोपन को वनोन्मूलन (Deforestation) कहा जाता है।

7.5.1 वनोन्मूलन के कारण :–

वनोन्मूलन मानव की विकास यात्रा का परिणाम है, यद्यपि यदा-कदा प्रकृतिक कारण या वनाग्नि भी इन्हें नष्ट करती है किन्तु यह उतनी हानिकारक नहीं जितना कि मानव द्वारा विनाश। वन विनाश/विलोपन के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं –

1. कृषि हेतु – निसंदेह विश्व में आज जहाँ हम कृषि क्षेत्र देख रहे हैं, उन्हें अधिकांशत: वनो को काटकर प्राप्त किया गया। यह आवश्यक भी था क्योंकि कृषि से ही भोजन प्राप्त होता है। किन्तु जनसंख्या की तीव्र वृद्धि के फलस्वरूप कृषि क्षेत्र के लिये जो वनोन्मूलन प्रारम्म हुआ वह आज एक समस्या बन गया है और व वनोन्मूलन का प्रमुख कारण भी। अनेक आदिवासी क्षेत्रों में स्थानान्तरित कृषि (Shifting Cultivation) में वनो को जलाकर या नष्ट कर कृषि क्षेत्र प्राप्त किया जाता है, इससे भी वन नष्ट होते हैं।
2. निर्माण कार्यो हेतु वनोन्मूलन – जनसंख्या वृद्धि, नगरों का फैलाव, आवासीय भूमि की आवश्यकता में वृद्धि, उद्योगों, सडकों, रेल लाइनों एवं अन्य ढांचागत सुविधाओं के

विस्तार के लिये निरन्तर वनों को काटा जा रहा है। बडे बाधों का निर्माण भी वनों के नष्ट होने का कारण है, क्योंकि बांधों से हजारों किलो मीटर का क्षेत्र जलमग्न हो जाता तथा वहाँ स्थित वन नष्ट हो जाते हैं।

3. काष्ठ, ईधन एवं अन्य उपयोग हेतु वनोन्मूलन – वनों से प्राप्त लकडी के विभिन्न उपयोग मानवीय प्रवृति रही है। लकडी का उपयोग गृह निर्माण, फर्नीचर, जहाज, रेल के डिब्बों, रेल लाइनों के स्लीपर, कागज, सेल्योलाज आदि के लिये किया जाना आम है और इन सबके लिये वनों को काटा जाता है। वनों की लकडी का उपयोग ईधन के रूप में आज भी भारत तथा अन्य विकासशील देशों में हो रहा है। वनों का व्यापारिक दृष्टि से कटाई के कारण आज उष्ण कटिबंधीय वन भी खतरे में हैं। एक अनुमान के अनुसार विश्व में प्रतिवर्ष 216 अरब रूपयों का लकडी उत्पादों का व्यापार होता है। इसी कारण वनों का तीव्र गति से विनाश हो रहा है।
4. खनिज खनन हेतु वनोन्मूलन – खनिजों के लिये विस्तृत भूमि में खुदाई की जाती है जिनके कारण वहाँ स्थित वनों का विनाश होता है। विश्व में जहाँ–जहाँ व्यापारिक होता है, वनों के क्षेत्र में कमी आ रही है। भारत में उडीसा, पश्चिमि बंगाल, मध्य प्रदेश के खनिज क्षेत्र इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।
5. अन्य कारण – उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त बनाग्निए बाढ़, भू–स्खलन, हिम– स्खलन, अनियंत्रित पशु चारण तथा सूक्ष्म जीवाणु जैसे डिंक आदि भी वन विनाश के कारण हैं।

7.5.2 वनोन्मूलन के प्रभाव –:

वनों के विलोपन या निरन्तर कम होने के प्रभाव अनेक प्रकार से पर्यावरण, मानव जीवन एवं जैव विविधता पर पड रहे हैं। संक्षेप में वनों के विनाश के प्रभाव निम्नलिखित हैं :–

(i) पारिस्थितिक असंतुलन उत्पन्न होना,
(ii) वायु मंडल में नमी धारण करने की क्षमता में कमी,
(iii) तापमान में वृद्धि,
(iv) वर्षा में कमी,
(v) मृदा अपरदन में वृद्धि
(vi) बाढ़ प्रकोप में वृद्धि
(vii) पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि
(viii) भूमि की उर्वरता में कमी,
(ix) वन्य जीव–जन्तुओं की प्रजातियों का नष्ट होना,
(x) वनों से उपलब्ध उपयोगी पदार्थो का उपलब्ध न होना, आदि।

7.5.3 वन संरक्षण के उपाय :–

वन संरक्षण आज विश्व की प्राथमिक आवश्यकता 'कि उपजाऊ मिट्टी का कटाव, भूस्खलन, बाढ़, भयावह सूखे, वर्षा में कमी, पर्यावरण प्रदूषण से आज सभी त्रस्त हैं जो वन उन्मूलन का परिणाम है। इस दिशा में सभी प्रयत्नशील हैं, किन्तु वन निरन्तर कटते जा रहे हैं अत: उनका संरक्षण अति आवश्यक है। इसके लिये नियोजित प्रयास न केवल सरकारी स्तर पर

अपितु सामाजिक तथा व्यक्तिगत स्तर पर मी करने होंगे। वन संरक्षण से भी सम्बन्धित कतिपय उपाय निम्नांकित हैं :–

1. नियंत्रित एवं उचित विधि से कटाई – वनोन्मूलन का एक प्रमुख कारण विभिन्न उपयोगों हेतु लकड़ी की कटाई है। समूर्ण विश्व में प्रतिवर्ष 1600 मिलियन घन मीटर लकडी का उपयोग विविध कार्यो में किया जाता है। ईधन के अतिरिक्त लकड़ी के व्यापारिक एवं आवसायिक उपयोग में निरन्तर वृद्धि हो रही है, फलस्वरूप वनों का तीव्रगति से विनाश हो रहा है। अत: वन संरक्षण हेतु प्राथमिक उपाय नियंत्रित एवं उचित विधि से कटाई करना है, जिससे उनका अनवरत उपयोग सम्भव हो सके। सामान्यतया लकडी की कटाई की तीन विधियों का प्रयोग उचित प्रबन्धन किया जाता है :–

(i) निर्वृक्षीकरण (Clear Cutting)

(ii) वरणात्मक कटाई (Selective Cutting)

(iii) परिरक्षित कटाई (Shelter Cutting)

निर्वृक्षीकरण उन क्षेत्रों में किया जाता है जहाँ एक ही प्रकार की लकडी का विस्तृत क्षेत्र में विस्तार होता है। एकं समान आयु के वृक्षों को व्यावसायिक दृष्टि से एक खण्ड विशेष में काट लिया जाता है, तत्पश्चात् उन्हें पुन: अंकुरित होने को छोड दिया जाता है। वरणात्मक कटाई में परिपय वृक्षों का चयन कर उन्हें क्रमानुसार काटा जाता है। जबकि परिरक्षित कटाई में निकृष्ट गुणवत्ता वाले वृक्षों को पहले काटा जाता है, जिससे उत्तम काष्ठ प्रदान करने वाले वृक्षों की वृद्धि हो सके। ततश्चात् द्वितीय श्रेणी के वृक्षों को काटा जाता है और अन्त में उत्तम श्रेणी के।

2. वनों का आग से वचाव – वनो में यदा–कदा लगने वाली आग भी कभी–कभी अत्यधिक विनाशकारी रूप ग्रहण कर लेती है, जिससे सैंकडों वर्ग किमी. का क्षेत्र वृक्ष रहित हो जाता है। वनों में प्रचण्ड आग के कारणें में प्राकृतिक रूप से घर्षण द्वारा उत्पन्न चिगारियाँ प्रमुख होती हैं। गर्म, शुष्क एवं हवायुक्त मौसम में अनेक वृक्षों की शाखाएँ या बाँस जैसे वृक्ष आपसी घर्षण से आग का कारण वन जाते हैं। साथ ही मानव की लापरवाही जैसे वन में केम्प फायर के पश्चात् लकड़ी जलती छोड़ना, जलती तीली, सिगरेट आदि को फेंकना या कभी–कमी जान–बूझकर किसी वृक्ष को जलाना वन में आग लगने के कारण बनते हैं। वन में प्रारम्म हुई आग शुक घास, झाड़ियाँ एवं वृक्षों के जलने से इतनी तेजी से फैलती है कि उसको नियंत्रित करना सम्भव नहीं होता। वनों को आग से बचाने के लिये जो सावधानी रखनी आवश्यक है उसमें वन क्षेत्र में जलती वस्तुओं को न छोडना प्रमुख है क्योंकि जरा सी असावधानी समूर्ण क्षेत्र के वनों को समाप्त कर सकती है। साथ ही आग पर नियंत्रण करने वाले दस्तों की व्यवस्था तथा हेलिकोपटर से किये छिडकाव की सहायता से ही बुझाया जा सकता है।

3. कृषि एवं आवास हेतु वनों के विनाश पर रोक – कृषि क्षेत्रों के विस्तार एवं विकास हेतु वनों को काटना एक सामान्य प्रक्रिया रही है और प्रारम्म में यह आवश्यक भी था, किन्तु आज हम ऐसे सोपान पर हैं कि अब इस प्रवृत्ति पर रोक लगाना आवश्यक है क्योंकि अब वनों का क्षेत्र इतना सीमित रह गया है कि यदि इसे और अधिक सीमित किया गया तो पारिस्थितिक–संकट गहरा जायेगा। अत: वन भूमि की कीमत पर कृषि विस्तार नहीं किया जाना चाहिये। कृषि के साथ–साथ अधिवासों के विस्तार के लिये भी वनों को साफ कर दिया जाता है। अनेक बार नये नगरों के विकास से विशाल क्षेत्र में वनों का विनाश हो जाता है। इस प्रवृत्ति को समाज किया

जाना चाहिये, क्योंकि वन. व्यर्थ न होकर प्राकृतिक सम्पदा है जिनका संरक्षण हमारे जीवन को सुखद बनाने एवं पर्यावरण को सन्तुलित रखने हेतु आवश्यक है।

4. वन रक्षण – वन संरक्षण हेतु वन रक्षण करना आवश्यक है क्योंकि अनेक बार पर्यावरणीय कारकों से वनों का विनाश हो जाता है। इसमें जंगली आग का विवेचन किया जा चुका है इसके अतिरिक्त बाढ़ए चक्रवातीय तीव हवा अथवा आधियाँए सूखा आदि से भी वनों को हानि होती है। अनियंत्रित पशुचारण भी वन का कारण होता है। अत: वनों में पशुचारण नियंत्रित क्रिया जाना आवश्यक है। इसके लिये क्षेत्र निर्धारण होना आवश्यक है, जो समयानुसार बदलता रहे। विशेषकर नवीन पौधों की पशुओं से रक्षा आवश्यक है जिससे वे वृक्ष वन सकें। इसी प्रकार अनेक प्रकार के पादप रोगों से भी वनों की रक्षा आवश्यक है। इनमें अधिकांश रोग परजीवी फफूँदी के द्वारा होते हैं। रोग ग्रस्त वृक्ष समूहों का पता लगाना तथा उन्हें नष्ट करना या रोपाणुओं को फैलने से रोकना आवश्यक है। यह कार्य सीमित क्षेत्रों में ही सम्भव है, फिर भी जहाँ सम्भव हो सके पादप रोगों से रक्षा आवश्यक है।

5. बांधों से वनों के जल–मग्न होने से बचाव – विश्व में जहाँ कहीं भी नदियों पर बांध बनाये जाते हैं, उसके अन्तर्गत विशाल क्षेत्र के वन जल–मग्न हो जाते हँ। भारत के विशाल बांध जैसे भाकडा नांगल, गांधी सागर, तुंगभद्रा, नागार्जुन सागर, दामोदर, हीराकुण्ड, रिहन्द आदि से हजारों वर्ग कि. मी. का वन क्षेत्र जल–मग्न हो गया है। टिहरी बांध एवं साइलैन्ट वैली प्रोजेक्ट के विरोध का एक कारण वनो के विनाश से पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव है। किन्तु इसका तात्पर्य नहीं कि बांध नहीं बनाये जायें, अपितु बांध स्थलों का चयन इस प्रकार किया जाय कि उनसे कम से कम वन जल–मग्न हो। साथ ही बांध निर्माण के पश्चात् अन्य विकास कार्यो के साथ इस बात पर भी बल दिया जाय कि उस क्षेत्र में पुन: वृक्षारोपण किया जाय जिससे पारिस्थितिक सन्तुलन बना रह सके।

6. वनों का पर्यटन स्थलों के रूप में विकास – वन संरक्षण का एक सफल उपाय इनका पर्यटन स्थलों के रूप में विकास है। वन प्राकृतिक सुन्दरता एवं सुरम्यता से युक्त होते हैं जो सहज ही में पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। इनसे वन संरक्षण तो होता ही है साथ ही विदेशी मुद्रा भी प्राप्त होती है। इस दिशा में अनेक देशों में राष्ट्रीय पार्क एवं अभ्यारणों के विकास के प्रयत्न किये जा रहे हैं। इनके विकास से विभिन्न पादप प्रजातियों की रक्षा के साथ–साथ वन्य जीवों का भी संरक्षण होता है। वन प्रदेशों की सुरक्षा हेतु इनका पर्यटन स्थलों के रूप में विकसित करना दोहरा लाभप्रद होता है।

7. पुन: वन लगाना : वृक्षारोपण (Reforestation) – वन संरक्षण हेतु जहाँ एक ओर वनों की रक्षा करना आवश्यक है वहीं दूसरी ओर वृक्षारोपण की भी आवश्यकता है। यह एक नियमित प्रक्रिया के रूप में होना चाहिये, क्योंकि एक ओर विविध उपयोग हेतु वन को जिस अनुपात में काटा जाता है उसके साथ ही यदि उसी अनुपात में नये वृक्ष लगा दिये जायें तो वनोन्मूलन की समस्या से बचा जा सकता है। भारत में वृक्षारोपण कार्यक्रम राष्ट्रीय स्तर पर चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम की सफलता के लिए आवश्यक है कि वृक्ष लगाने के साथ–साथ यह भी ध्यान रखा जाय कि वे विकसित हों अन्यथा मात्र आँकडों में ही अंकित रहते हैं।

8. वन संरक्षण में प्रशासनिक भूमिका – वनों के सरक्षण में सरकार एवं स्थानीय प्रशासन की महती भूमिका है क्योंकि सरकारी नियमों के अन्तर्गत ही वन संरक्षण सम्भव है। विश्व के

प्रत्येक देश में वन संरक्षण हेतु नियम हैं तथा सरकारें उपयोगिता एवं अर्थ व्यवस्था की आवश्यकता के अनुरूप नियम बनाकर उन्हें संरक्षित करने का प्रयास करती हैं। इसके लिये प्राथमिक आवश्यकता यह है कि नियमों के अन्तर्गत वनों का संरक्षण हो किन्तु सार्थी तत्वों द्वारा नियमों के विरूद्ध कार्य से वनोन्मूलन की प्रवृत्ति में निरन्तर वृद्धि हो रही है। प्रशासन वन संरक्षण हेतु निम्न प्रमुख कार्य सम्पादित कर सकता है :–

1. वनों के संरक्षण हेतु कानून (एक्ट) बनाना, भारत में वन संरक्षण अधिनियम 1980 (The Forest Protection) Act – 1980) में पारित किया गया,
2. देश के वनों का सर्वेक्षण करवाना,
3. वनों के विभिन्न प्रकारों या श्रेणियों को सूचीबद्ध करना एवं सुरक्षित वन क्षेत्रों (Reserved Forest Area) का निर्धारण करना,
4. ऐसे क्षेत्रों का पता लगाना जहाँ वन विकास की आवश्यकता है और जहाँ वृक्षारोपण सम्भव है,
5. आर्थिक दृष्टि से उपयोगी वनों का निर्धारण एवं संचालन,
6. वनो की अग्नि या अन्य प्राकृतिक कारणों से रक्षा करना,
7. वन अनुसंधान हेतु प्रयोगशालाओं की स्थापना करना,
8. राष्ट्रीय पार्क एवं अभ्यारणों की स्थापना,
9. वृक्षारोपण कार्यक्रम का क्रियान्वयन,
10. सतत् निरीक्षण द्वारा वनोन्मूलन को बचाना तथा नियम विरूद्ध कार्य करने पर सजा दिलाना,
11. वन संरक्षण हेतु प्रोत्साहन एवं पुरस्कार देना,
12. वन उत्पादकों पर सरकारी नियंत्रण,
13. देश के वन विकास हेतु राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय योजनाओं को तैयार करना, आदि।

9. सामाजिक एवं स्वयसेवी संस्थाओं द्वारा वन संरक्षण – वन संरक्षण एवं वृक्षारोपण जैसे कार्यक्रम मात्र सरकारी नियमों अथवा प्रशासन से ही सफल हों यह सम्भव नहीं है अपितु इसके लिये जन चेतना या सामाजिक चेतना जाग्रत करना आवश्यक है। जब समाज का प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव करे कि वन उसके तथा भविष्य की पीढ़ियों के लिये आवश्यक है तो संरक्षण स्वत: होने लगेगा। भारत में वन संरक्षण की स्वस्थ सामाजिक परम्परा रही है, हमारे यहाँ अनेक वृक्षों जैसे पीपल, बरगद आदि की पूजा की जाती है। यह वृक्षों के संरक्षण का अपूर्व उदाहरण है। भारत में विश्नाई जाति के धर्म का एक प्रमुख सिद्धान्त वनों की रक्षा है।

वन संरक्षण में स्वयंसेवी अथवा गैर प्रशासनिक संसथाओं की भी महती भूमिका होती है और आज विश्व में अनेक ऐसी संस्थायें विद्यमान हैं। ग्रीन पीस नामक संस्था जैसी संस्थाएँ अनेक देशों में कार्यरत हँ। भारत में चिपको आन्दोलन इसका अपूर्व उदाहरण है जो वन संरक्षण हेतु जन जागृति में लगा है। इसी प्रकार दक्षिणी भारत में अप्पिको है जो पर्यावरण संरक्षण के कार्य में सलग्न है। बिगत दशक से स्थानीय स्तर पर भारत में अनेक स्वयंसेवी संस्थाएँ इस दिशा में कार्यरत हैं। इनमें कुछ वन संरक्षण एवं वन विकास के महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। प्रशासन द्वारा प्रारम्भ किया गया सामाजिक वानिकी (Social Forestery) कार्यक्रम कुछ प्रदेशों

में पर्याप्त सफल हो रहा है। इसमें स्थानीय ग्रामीणों के माध्यम से वानिकी कार्यक्रम इस प्रकार चलाया जाता है कि उनको लाभ भी प्राप्त हो और वन विकास भी हो सके।

10. वन प्रबन्धन – (Forest Managament) द्वारा वन संरक्षण – वन संरक्षण हेतु वन प्रबन्धन का अत्यधिक महत्व है आज के युग में प्रत्येक तथ्य का सुनियोजित उपयोग एवं नियोजन उचित प्रबन्धन द्वारा ही संभव है। यह तथ्य वन संरक्षण एवं वृक्षारोपण पर भी सत्य है। वन प्रबन्धन के अन्तर्गत अनेक तथ्य विचारणीय है जैसे –

1. वन सर्वेक्षण,
2. वनों का वर्गीकरण,
3. वनों का अर्थिक उपयोग
4. वनों की प्रशासनिक व्यवस्था,
5. पर्यटन हेतु वन क्षेत्रों का उपयोग,
6. सामाजिक वानिकी,
7. वन उपयोगिता के अवबोध कार्यक्रम ओर सामाजिक चेतना जागत करना,
8. वन संरक्षण हेतु नवीन विधियों का विकास,
9. वन अनुसंधान,
10. भविष्य की वानिकी योजना तैयार करना एवं उनका क्रियान्वयन आदि ।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि वन संरक्षण वर्तमान युग की प्राथमिक आवश्यकता हैए क्योंकि इसका सम्बन्ध न केवल वर्तमान से ही अपितु भविष्य से भी ।

बोध प्रश्न–3

1. वनों से कौन–कौन से पदार्थ प्राप्त होते हँ?
2. जहाँ आप रहते हैं उसके निकट क्या वन है?
3. आप स्वयं वनों से प्राप्त किन पदार्थो का उपयोग करते हैं?
4. वनों के विनाश को क्या कहते हँ?
5. आपके मत में वन विनाश के क्या कारण हैं?
8. नगरों के विस्तार से वनो पर क्या प्रभाव पड़ता है?
7. बांध बनने से क्या वन नष्ट होते हैं?
8. वनों के विनाश के क्या प्रभाव होते हें?
9. वन संरक्षण क्यों आवश्यक है?
10. सामाजिक / स्वयंसेवी संस्था किस प्रकार वनों की रक्षा कर सकता है।
11. चिपको आन्दोलन का सम्बन्ध किससे है?
12. भारत में वन संरक्षण अधिनियम कब पारित किया गया?

7.6 वन्य जीव विलोपन कारण एवं संरक्षण के उपाय :–

वन्य जीव हमारे जैव परिमण्डल का एक अभिन्न अंग है अत: उनकी उपस्थिति का परिस्थितिकी तन्त्र में महत्वपूर्ण है। वनो में निवास करने वाले जंगली जानवर तथा अन्य जीव क्षेत्रीय परिस्थितिकी तन्त्र की उपज होते हैं और प्राकृतिक पर्यावरण से सामन्तस्य कर न केवल स्वयं का व्यक्तित्व बनाये रखते है, अपितु परिस्थितिकी – तन्त्र को परिचालित रखने में भी सहायक होते है। एक समय था जब वन्य जीवों की संख्या पर्याप्त थी और वे स्वच्छन्दता से

विचरण करते थे किन्तु जनसंख्या वृद्धि, आवासीय एवं कृषि विस्तार, औद्योगीकरण, शहरीकरण एवं मानव की स्वार्थपरता ने आज इनके व्यक्तित्व को संकट में डाल दिया है। यही नहीं अपितु अनेक वन्य जीव प्रजातियाँ समाप्त हो गई हैं और अनेक संकट में हैं। अत: यह आवश्यक है कि इनके विनाश के कारणों को जाने तथा इनके संरक्षण के समुचित उपाय किये जाये।

वन्य जीवों के विलोपन के कारण :–

वन्य जीवों के विलोपन के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं –

1. वनोन्मूलन से वन्य जीवों के आवास की हानि – वन्य जीवों के विनाश अथवा विलोपन का एक प्रमुख कारण आवास (Habitat) का समाप्त होना है। तीव्र गति से हो रहे वनोन्मूलन से जंगलों में रहने वाले जीवों के प्राकृतिक स्थल समाप्त हो गये हैं तथा होते जा रहे हैं। इसके कारण वन्य जीज़ें का विनाश हो रहा है। वन न केवल वन्य जीवों के आश्रय स्थल है अपितु अनेक जीवों का भोजन भी इन्हीं से मिलता है। उपयुक्त वातावरण नहीं मिलने के कारण वन्य जीवों की संख्या में कमी हो रही है तथा उनकी वृद्धि भी कम हो गई तथा अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो गई हैं।

2. वन्य जीवों का अनाधिकार शिकार – विश्व में वन्य जीवों के अवैध शिकार के कारण उनके तीव्रता से विलुप्त होने का संकट पैदा हो गया है। वन्य जीवों का मांस, खाल, सींग, समूर आदि अनेक वस्तुओं के लिये उनका शिकार किया जा रहा है। यह कार्य न केवल स्थानीय स्तर पर अपितु राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किया जा रहा है। इससे वन्य जीवों की कमी हो रही है, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण राजस्थान के अलवर जिले का सरिस्का अभयारण्य है जो बाघों के लिये प्रसिद्ध रहा है, किन्तु वर्ष 2004–05 में वहां के सभी बाघ समाप्त हो गये हैं जिसका कारण अवैध शिकार है।

3. वन्य जीवों से प्राप्त पदार्थो की मांग – वन्य जीवों से प्राप्त समूर, खालें, सींग, हाथीदांत, हड्डियां, जीवित नमूने तथा चिकित्सा उपयोग की गौण वस्तुओं की विश्व में पर्याप्त माँग है। एशिया अफ्रीका तथा लेटिन अमरीकी देशों में पाये जाने वाले वन्य जीवों का विनाश व्यापारिक स्वार्थपरता के कारण हो रहा है।

4. प्राकृतिक आपदाएँ – कभी–कभी वन्य जीवों का विनाश प्राकृतिक आपदाओं के कारण भी होता है। बाद, भू–स्खलन, ज्वालामुखी विस्फोट से लाश फैलाव तथा वनाग्नि से भी वन्य जीवों का विनाश होता. रहता है।

7.7 वन्य जीवों का संरक्षण :–

वन्य जीव प्राकृतिक धरोहर है तथा पारिस्थितिक दृष्टि से उनका अत्यधिक महत्व है। प्रत्येक वन्य प्रजाति आनुवांशिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है तथा अप्रीतस्थापनीय है जो यदि एक बार लुप्त हो गई तो उसे पुन: उत्पन्न करना असंभव है। बचे प्राणियों के विलुप्त होने का संकट आज गहराता जा रहा है, जिसके प्रति न केवल जीव शास्त्री अपितु सभी चिंतित हैं। विश्वभर में इनको संरक्षित करने के उपाय किये जा रहे हैं जिससे न केवल दुर्लभ प्रजातियों की अपितु सभी की रक्षा की जा सके। अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन इस दिशा में पर्याप्त प्रयास कर रहे हैं इनमें विश्व वन्य जीवकोश (World wild life Fund) अग्रणी है। प्रत्येक देश भी अपने–अपने क्षेत्रों के वन्य जीवों को संरक्षित करने में प्रयत्नशील है। इसके लिए अनेक नियम भी बनाये गये हैं तथा दण्ड की भी व्यवस्था है, फिर भी यह समस्या दिन–प्रतिदिन अधिक होती जा रही है। राष्ट्रीय उद्यानों एवं

अभयारण्यों की स्थापना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। वन्य जीवों के संरक्षण हेतु कतिपय कदम निम्नलिखित हैं :–

(i) वन्य जीवों सम्बन्धी सम्पूर्ण जानकारी एकत्र करना, विशेषकर उनकी संख्या एवं वृद्धि की।

(ii) वनों के विनाश को रोकना जो वन्य जीवों के आश्रय स्थल हैं।

(iii) सुरक्षित एवं अनुकूल आवासीय स्थल को बनाये रखना।

(iv) प्रदूषण तथा अन्य प्राकृतिक आपदा से वन्य जीवों की रक्षा।

(v) वन्य जीवों के शिकार पर पूरी तरह रोक लगाना।

(vi) क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वन्य जीवों से प्राप्त वस्तुओं के क्रय–विक्रय पर प्रतिबन्ध लगाना तथा दोषी व्यक्ति को कठोर दण्ड की व्यवस्था करना।

(vii) अभयारण्यों की स्थापना कर वन्य जीवों को उनके प्राकृतिक वातावरण में रहने की सुविधा प्रदान करना और साथ में उन्हें पर्यटन स्थलों के रूप में विकसित करना।

(viii) वन्य जीवों की विलुप्त होती प्रजातियों का समुचित ज्ञान प्राप्त करना तथा उनकी विशेष संरक्षण की व्यवस्था करना।

(ix) अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर वन्य जीवों के संरक्षण हेतु जन–चेतना जाग्रत करना।

(x) वन्य जीवों का उचित प्रबन्धन करना, आदि।

7.8 भारतीय परिदृश्य:–

भारत मे वन्य जीवों का महत्व प्राचीनकाल से स्वीकार किया गया है।यहाँ विभिन्न प्रकृतिक प्रदेशों में विशिष्ट जीव–जन्तु पाये जाते हैं। भारत में 500 से अधिक प्रकार के वन्य जीव 2,100 प्रकार के पक्षी तथा लगभग 20000 प्रकार की मछलियाँ तथा रेंगने वाले जानवर पाये जाते हैं। हिमालय क्षेत्र कस्तूरी मृग और मोनाल पक्षी के लिये प्रसिद्ध है तो प. बंगाल में गेंडा, असम में हाथी और जंगली भैंसे, मध्य प्रदेश व दक्षिणी भारत के वनों में शेर आदि प्रसिद्ध है। राजस्थान के भरतपुर में स्थित घना पक्षी बिहार साइबेरिया से आने वाले पक्षियों के लिये प्रसिद्ध है। तात्पर्य यह है कि भारत में अनेकानेक प्रकार के जीव जन्तु हैं जो आज संरक्षण की अपेक्षा करते हैं। एक अध्ययन के अनुसार ईसा सम्वत के प्रारम्भ से अब तक भारत में लगभग 200 जन्तु तथा पक्षी प्रजातियाँ नष्ट हो चुकी हैं और लगभग 2500 अन्य विनाश के कगार पर हैं। विलुप्त होने के संकट से ग्रस्त कुछ प्रजातियाँ हैं – कृष्ण सार (Black Buck) चीतल (Chinkara), भेड़िया (Wolf) अनूपमृग (Swamp Deer), नील गाय (Nilgai), भारतीय कुरंग (Indian Gazelle), बारहसिंगा (Antelope), चीता (Tiger), गैंडा (Rhinoceros), गिर सिंह (Girlion) मगर (Crocodile), हसावर (Flamino) हवासिल (Pelican), सारंग (Bustard), श्वेत सारस (White Crane), घूसर वगला (Brey Heron) पर्वतीय वटेर (Mountain quail) आदि ।

वन्य प्राणियों के संरक्षण के प्रति भारत में अनेक प्रयत्न किये जा रहे हैं। यद्यपि स्वार्थी तत्वों के कारण वन्य जीवों की संख्या में निरन्तर कमी हो रही है। हमारे देश में केन्द्र तथा राज्य सरकारें वन्य जीव संरक्षण को समुचित महत्व दे रही है। इस सम्बन्ध में वन्य प्राणी संरक्षण अधिनियमए 1972 Wildlife Protection) Act – 1972) लागू किया जा चुका है। वन्य

प्राणियों तथा उनके आवासों को संरक्षण देने हेतु देश भर में 165 अभयारण्य तथा 21 राष्ट्रीय उद्यानों की स्थापना की जा चुकी है। वन्य प्राणियों से सम्बन्धित शौध को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। यह कार्य वन दिमाग एवं पर्यावरण विभाग के तत्वावधान में सम्पन्न किया जाता है। राष्ट्रीय उद्यानों की स्थापना से वन जीव संरक्षण तथा वनस्पति की दुर्लभ प्रजातियों के संरक्षण को नई दिशा मिली है। भारत में स्थापित राष्ट्रीय उद्यानों का विवरण निम्नांकित तालिका में अंकित है –

भारत में राष्ट्रिय उद्यान

राज्य केन्द्र शा.प्रदेश	राष्ट्रिय उद्यान का नाम	मुख्य वन्य जीव प्रजातियाँ
असम	काजीरंगा	गैंडे
अरूणाचल प्रदेश	नामदाफा	हाथी
मणीपुर	केबुल लामजाओ	थामिन हिरण
उत्तर प्रदेश	(i) जिम कार्बेट	–
	(ii) कस्तुरी मृग राष्ट्रीय उद्यान	कस्तुरी मृग बाघ बाघ
	(iii) दुधवा राष्ट्रीय उद्यान	बाघ
बिहार	(i) हजारी बाघ	–
	(ii) पलामू	बाघ
राजस्थान	(i) रणथम्मौर	बाघ
	(ii) सरिस्का (अलवर)	बाघ
	(iii) केवाला देव (घना)	पक्षी विहार
उड़ीसा	सिमलोपाल	बाघ
गुजरात	गिर	एशियायी शेर
केरल	(i) पेरियार	हाथी
	(ii) बाँदी	बाघ तथा हाथी
पश्चिमी बंगाल	(i) जलदापारा	गैंडे
	(ii) सुन्दर वन	हाथी
तमिलनाडु	मुडमलई	हाथी
जम्मु एवं कश्मीर	डाँचीजम	कश्मीरी हिरण
महाराष्ट्र	(i) तरोबा	–
	(ii) बोरोवली	–

राष्ट्रिय उद्यानों के अतिरिक्त अभयाण्यों की स्थापना इस दिशा में विशेष महत्व रखती है। देश में प्रतिवर्ष एक से सात अक्तूबर तक वन्य जीव संरक्षण सप्ताह (Wild life Conservation) मनाया जाता है। इसके माध्यम से वन्य जीवों के प्रति जन जागृति उत्पन्न करने का प्रयास किया जाता हैं। वास्तव में वन संरक्षण का एक प्रभावशाली तरीका जन – चेतना है। यदि सामान्य जन वन्य जीवों की रक्षा के प्रति सचेष्ट हो जायें तो सहज ही यह कार्य हो सकता है। हमारे देश में इसकी परम्परा भी रही है जिसका उदाहरण विश्नोई समाज की परम्परा है जो वृक्ष एवं वन्य जीवों की रक्षा को एक धार्मिक तथा सामाजिक कृत्य मानते है। अन्य धर्मो में

भी जीव हिंसा निषेध है, आवश्यकता है इस दिशा में वास्तविक कार्य करने की। वन्य जीव संरक्षण आज की आवश्यकता है और सामूहिक प्रयास ही इसे सफल बना सकते हैं।

बोध प्रश्न-4

1. वन्य जीवों का आश्रय स्थल कहाँ होता है?
2. आपको कौन-कौन से वन्य जीवों के नाम ज्ञात हँ, बताइये?
3. वन्य जीवों का नाश क्यों हो रहा है?
4. वनों के विनाश से वन्य जीव कम हो रहे हैं, क्या यह सत्य है?
5. सरिस्का अभयाण्य से कौन सा वन्य जीव समाप्त हो गया?
6. वन्य जीवों का शिकार क्यों किया जाता है?
7. क्या अनाधिकार शिकार वन्य जीवों के विनाश का प्रमुख कारण है?
8. वन्य जीव संरक्षण की दिशा में विश्व में कौन सी संस्था कार्यरत है?
9. भारत के वन्य जीव संरक्षण कानून कब लागू किया गया?
10. राजस्थान में कौन से राष्ट्रीय उद्यान स्थित हैं?

7.9 सारांश :–

प्रस्तुत इकाई में प्राकृतिक संसाधनों के विलोपन, विशेषकर वन एवं वन्य जीवों के विलोपन के कारण एवं संरक्षण के उपायों का विवेचन किया गया है। संसाधन विलोपन से पूर्व यह स्पष्ट किया गया है कि संसाधन किसे कहते हैं तथा उनके प्रकार क्या हैं तथा उनके विलोपन के क्या कारण हैं ? संरक्षण के उपायों की विस्तार से विवेचना की गई है।

प्रकृति में उपलब्ध विभिन्न पदार्थ संसाधन तभी बनते हैं जब वे मानवोपयोगी हो। अत: विभिन्न प्रकार के संसाधन विकसित हुए हैं। संसाधनों का वर्गीकरण उनके उपयोग की सततता, उत्पत्ति एवं उद्देश्यों के आधार पर किया जाता है। सामान्यतया नवीनीकरण एवं अनव्यकरणी संसाधन एक ऐसा विभाजन है जो संसाधनों के संरक्षण का आधार प्रस्तुत करता है।

प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता का मूल कारण इनका तीव्र गति से विनाश है। यह विनाश जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, उपभोक्तावाद, व्यापारीकरण एवं मानव के स्वार्थपरता का परिणाम है। अत: भविष्य के लिये भी प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध हो सके, उनका संरक्षण आवश्यक है। वनों का विनाश अथवा वनोन्मूलन के प्रमुख कारण है – कृषि एवं निर्माण कार्यो हेतु वनो को काटना काष्ठ, ईधन एवं अन्य उपयोग हेतु वनोन्मूलन, खनिज खनन, वनाग्नि, बाढ़, भू–स्खलन, अनियंत्रित पशुचारण आदि। वनों का संरक्षण नियन्त्रित कटाई, आग से बचाव, कृषि एवं आवास हेतु वनों के काटने पर रोक, वन रक्षण, सामाजिक जागरूकता एवं उचित वन प्रबन्धन द्वारा किया जा सकता है।

वन्य जीवों के विलोपन का प्रमुख कारण वनोन्मूलन से वन्य जीवों के आवास (Habitat) का निरन्तर समाप्त होना है। इसके अतिरिक्त वन्य जीवों का अनाधिकार शिकार, वन्य जीवों से प्राप्त पदार्थों की मांग तथा प्राकृतिक आपदायें हैं। वन्य जीवों के संरक्षण हेतु एक ओर वनों की रक्षा आवश्यक है, वही इनके शिकार को प्रतिबंधित करना भी आवश्यक है। राष्ट्रीय उद्यान एवं अभयारण्यों की स्थापना इस दिशा में उचित कदम है। भारत में इस दिशा में पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है। राष्ट्रीय उद्यान एवं अभयारण्यों की स्थापना कर वन्य जीवों की रक्षा का

प्रयत्न किया जा रहा है। फिर भी अवांच्छित तत्वों क्षरा अनाधिकृत शिकार से वन्य जीवों पर संकट मंडरा रहा है जिसे उचित प्रबन्धन एवं जन सहभागिता के आधार पर रोका जा सकता है।

7.10 स्व मूल्याकन प्रश्न:–

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1.The products useful to mankind are known as–

(a) Minerals (b) Soil

(c) Vegetation (d) Resources

मानवोपयोगी पदार्थ कहलाते हैं :

(अ) खनिज (व) मृदा

(स) वनस्पति (द) संसाधन

2. Which of the following is not a non–renewable resource–

(a) Forest (b) Coal

(c) Oil (d) Minerals

निम्न में से अनवीकरणीय प्राकृतिक संसाधन नहीं हैं :

(अ) वन (व) कोयला

(स) तेल (द) खनिज

3. Main causes of deletion of natural resources is are–

(a) Urbanisation (b) Rapid growth of population

(c) Commercilisation (d) all the abave

प्राकृतिक संसाधनों के विलोपन के प्रमुख कारण हैं :

(अ) नगरीकरण (ब) तीव्र जनसंख्या वृद्धि

(स) व्यापारीकरण (द) उपर्युक्त सभी

4.The main cause of deforestation is–

(a) Commercial use of wood (b) Industrial development

(c) Settement (d) Slow growth of trees

वनोन्मूलन का प्रमुख कारण है:

(अ) काष्ठ का व्यापारिक उपयोग (व)औद्योगिक विकास

(स) अधिवास (द)वृक्षों की मंद गति से विकास

5. Which of the following is not a cause of forest deletion–

(a) Fire (b) Flood

(c) Mining (d) Rainfall

निम्न में से कौन–सा वन विलोपन का कारण नहीं है :

(अ) आग (व) बाढ़

(क्ष) खनन (द) वर्षा

6. 'Chipko' movement is related with–

(a) Forest protection (b) Wildlife protection

(c) Soil protection (d) Energy conservation

चिपको आन्दोलन सम्बन्धित है :

(अ) वन रक्षा से (व) वन्य जीव रक्षा से

(स) मृदा रक्षा से (द) उर्जा संरक्षण से

7. 'Sariska Sanctuary' is located in which district of Rajasthsn–

(a) Sawai Madhopur (b) Alwar

(c) Kota (d) Bharatpur

सरिस्का अभयारण्य राजस्थान के किस जिले में स्थित है :

(अ) सवाई माधोपुर (व) अलवर

(क्ष) कोटा (द) भरतपुर

8. The main cause of the deletion of wildlife is–

(a) Un–authorised hunting (b) flood

(c) Soil erosion (d) Forest fire

वन्य जीव विलोपन का प्रमुख कारण है :

(अ) अनाधिकार शिकार (व) बाढ़

(स) मृदा अपरदन (द) वनाग्नि

9. The'National Park'are established to conserve–

(a) Plants only (b) Animals only

(c) Both(a)&(b) (d) For pollution control

राष्ट्रीय उद्यान किसके संरक्षण हेतु स्थापित किये गये हँ :

(अ) केवल वनस्पति को (व) केवल जन्तुओं को

(स) (अ)एवं(व) दोनों के लिये (द) प्रदूषण नियंत्रण के लिये

10.In which year Wild Life Protection Act was introduceted in india–

(a) 1982 (b) 1972

(c) 1974 (d) 1980

भारत में वन्य जीव सुरक्षा अधिनियम किस वर्ष लागू या गया :

(अ) 1928 (व) 1972

(स) 1974 (द) 1980

उत्तर :–

1.(d) (द) 2.(a) (अ) 3. (d) (द) 4. (a) (अ) 5.(d) (द)

6. (a) (अ) 7. (b) (इ) 8. (a) (अ) 9.(c) (स) 10.(b) (ब)

<u>लघु उत्तरात्म्क प्रश्न:</u>

1. Explain the term 'National Resources'
   प्राकृतिक संसाधन शब्दावली को स्पष्ट कीजिये ।

2. Explain the difference between renuewable and non-renewable resource
   नवीनीकरण एवं अनव्यकरणी संसाधनों में अन्तर स्पष्ट कीजिये ।
3. What is the need of the Conservation of natural resource?
   प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता क्यों है?
4. Write the name of causes of the deletion of farest resource?
   वन संसाधनों के विलोपन के कारणों के नाम लिखिये ।
5. What are the effects of deforestation?
   वनोन्मूलन के क्या प्रभाव होते हैं?
6. What do you understand by forest management?
   वन प्रबन्धन से आप क्या सामझते हैं?
7. What are the causes of wildlife deletion
   वन्य जीवों के विलुप्त होने के क्या कारण हँ?
8. Describe the causes of Wildlife conservation
   वन्य जीव संरक्षण के उपायों का वर्णन कीजिये ।

<u>निबन्धात्मक प्रश्न :</u>

1. Describe the nature of natural resources and discuss their need of conservation.
   प्राकृतिक संसाधन की प्रकृति स्पष्ट कीजिये तथा उनके संरक्षण की आवश्यकता की विवेचना कीजिये ।
2. Describe the detail of the classification of resource.
   संसाधनों के वर्गीकरण का विस्तार से वर्णन कीजिये ।
3. What are the causes of the deletion of Forest Resource? Explain
   वन संसाधनों के विलोपन के क्या कारण हैं? विवेचन कीजिये ।
4. Describe the measures of forest conservation.
   वन संरक्षण के उपायों का वर्णन कीजिये ।
5. Write the essay on wildlife deletion conservation in india.
   भारत में वन्य वन संरक्षण पर एक निबन्ध लिखिए।
6. What are the causes of wildlife deletion? Also describe measures of their conversation.
   वन्य जीव विलोपन के क्या कारण हैं? उनके संरक्षण के उपायों का भी वर्णन कीजिये।

7.11 संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Bharuchcha,E.(2005) : Environmental Studies, University Press Hyderabad.
2. Chookar,Kiran B.,Pandaya : Understanding Environment.

Manta & Raghunathan Meena.,Eds.(2004) Saga Pulication, New Delhi.

3. Dasseman,R.F.(1976) : Environmental Conservation, Jhon Wiley, New York.
4. Dogra, Bharat (1980) : Forest and People, Himalaya Darshan Prakash Samiti, Rishikesh.
5. रघुवंशी, अरूण एवं चन्द्रलेखा (1987) : पर्यावरण एवं प्रदूषण, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ–अकादमी भोपाल ।
6. Saxena H.M(2004) : Environmental Geography, Rawat Publilcation, Jaipur.
7. Saxena H.M(2004) : Environmental Studies Rawat Publilcation, Jaipur.
8. सक्सेना, हरि मोहन (1999) : पारिस्थितिकी भूगोल, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर
9. Zimmermann, E.W.(1951) : World Resources and Industries. Harper and Raw, London.

इकाई–8

Water,Energy and Soil Management

जल, ऊर्जा एवं मृदा प्रवन्यन इकाई की रूपरेखा :–

इकाई की रूपरेखा :–

8.। उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 जल प्रबन्धन

8.3.। जल प्रबन्धन की आवश्यकता एवं महत्व

8.3.2 जल प्रबंधन के उपाय

बोध प्रश्न–।

8.4 उर्जा प्रबन्धन

8.4.। ऊर्जा–महत्त्व एवं आवश्यकता

8.4.2 ऊर्जा प्रबन्धन के उपाय

बोध प्रश्न–2

8.5 मृदा प्रबन्धन

8.5.1 मृदा प्रबंधन–आवश्यकता व महत्व

8.5.2 मृदा प्रबंधन के उपाय

बोध प्रश्न–3

8.6 सारांश

8.7 स्व मूल्यांकन प्रश्न

8.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

8.1 उद्देश्य:–

इस इकाई के अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं:–

1. इसके अध्ययन से आप समझ पायेंगे कि जल, ऊर्जा एवं मृदा प्रबधन की आवश्यकता क्यों है।
2. आप यह जान पायेंगे कि जल, उर्जा एवं मृदा प्रबंधन किस प्रकार किया जाना चाहिये।

8.2 प्रस्तावना:–

पर्यावरण जीवन का आधार है। पर्यायरण की वे सभी वस्तुयें जो मानव की भौतिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है, संसाधन कहलाती हैं। संसाधन प्रकृति की अनमोल विरासत है। मनुष्य द्वारा अपनी आवश्यकतानुसार प्रकृति प्रदत्त विभिन्न संसाधनों का दोहन किया जा रहा है। प्रकृति के विपरीत जाकर अपनी लालसा निरंतर बढ़ाये जाते रहने के कारण संसाधनों की समाप्ति होते जाने से गंभीर पर्यावरणीय संकट उत्पन्न होते जा रहे हैं। ये पर्यावरणीय संकट मानव सभ्यता को ही विनाश की ओर अग्रसरित कर रहे हैं। इसीलिये विश्व स्तर पर पर्यावरण प्रबंधन के सामूहिक प्रयास किये जा रहे हैं। सामान्य रूप में पर्यावरण प्रबंधन

का तातर्य है कि प्रकृति के विभिन्न घटकों का अनुसूलतम आनुपातिक उपयोग करते हुए मनुष्य व प्रकृति के मध्य उचित समायोजन बनाया रखा जाये।

जल, ऊर्जा एवं मृदा महत्त्वपूर्ण संसाधन है जो कि स्वास्थ्य पर्यावरण के आधार हैं। इनका अत्यधिक दोहन व प्रदूषित होना मानव सभ्यता के व्यक्तित्व लिए खतरनाक साबित हो सकता है। जल, मृदा एवं उर्जा के बिना आधुनिक जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। जल एवं मृदा ने सभ्यताओं को जन्म दिया जबकि ऊर्जा ने इनके आर्थिक विकास हेतु मार्ग प्रशस्त किया था। उर्जा औद्योगिक विकास ही नहीं मानव के दैनिक जीवन का प्रमुख तत्व बन चुकी है। तीव्र जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण व नगरीयकरण से इनका उपयोग दिन पर दिन बढता जा रहा है। अविवेकपूर्ण दोहन से इनके समाप्ति की संभावना है। इसलिए इनका संरक्षण व प्रबन्धन अतिआवश्यक है। जल, ऊर्जा एवं मृदा के समुचित प्रबंधन के विभिन्न उपाय किये जाकर उनकी ठोस एवं व्यवहारिक रूप में लागू किया जाना समय की सबसे बड़ी मांग है।

8.3 जल प्रबन्धन:–

8.3.1 जल प्रबंधन की आवश्यकता एवं महत्व :–

जल प्रकृति का अनुपम उपहार है। यह प्रकृति प्रदत्त एक सीमित संसाधन है। मानव विकास के साथ जल के विभिन्न उपयोग निरन्तर बढ रहे हैं। पेय जल के साथ अन्य उपयोगों में वृद्धि से इसकी मात्रा में निरन्तर कमी आती जा रही है। वर्तमान में विश्व में 26 ऐसे राष्ट्र हैं जो कि जल संकट (Water crisis) से त्रस्त हैं। जल की मात्रा के साथ ही प्रदूषित तत्वों के कारण उसकी गुणवत्ता में भी हास आया है। विश्व जल सम्मेलन में बताया गया कि प्रदूषित जल की वजह से 30 गंभीर बीमारियाँ एवं उनसे पूरे विश्व में 62 प्रतिशत मौतें हो रही हैं। जल के अत्यधिक दोहन से गंभीर जल संकट उपस्थित होता जा रहा है। जल संकट के लिए मुख्यत: तीव्रगति से जनसंख्या वृद्धि, तीव्र औद्योगिक विकास व नगरीकरण तथा सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि उत्तरदायी है। हमारे देश में स्वतंत्रता के समय जहाँ प्रति व्यक्ति 5277 घनमीटर पानी उपलब्धता थी वह अब घटकर मात्र 1889 घनमीटर से भी कम रह गया है। तालाबों व जलाशयों की निरंतर कमी आने वाले समय में इसे ओर भी भयावह बना देगी । वाशिंगटन स्थित वर्ल्ड वाच संस्थान की एक रिपोर्ट अनुसार भारत में 58 प्रतिशत व्यक्तियों की पीने का स्वच्छ जल उपलब्ध नहीं है। भूमिगत जल के अत्यधिक दोहन से देश के 4272 लॉकों में से 231 अत्यधिक दोहन वाले वर्ग में तथा 107 ब्लॉक "डार्क" हैं जिनके भूमिगत जल का 65 प्रतिशत से अधिक दोहन हो चुका।

मानव विकास रिपोर्ट, 2001 के अनुसार देश में पंजाब व दिल्ली के ही सर्वाधिक लोग स्वच्छ व सुरक्षित पेयजल का प्रयोग करते हैं। स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता में केरल सबसे पिछडा राज्य पाया गया है, जबकि साक्षरता की दृष्टि से यह अग्रणी है। भू–जल के अत्यधिक दोहन एवं उसके अवैज्ञानिक प्रयोग से जल में फ्लोराइड, आर्सेनिक एवं रासायनिक प्रदूषकों की मात्रा में निरंतर वृद्धि हो रही है। भारत के 8600 गाव अस्थि सम्बन्धी विकृतियाँ फैलाने वाले फ्लोराइड की चपेट में हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार भारत में 5 करोड व्यक्ति प्रतिवर्ष प्रदूषित जल पीने से बीमार हो जाते हैं। जल की मात्रात्मक एवं गुणात्मक अभिवृद्धि बनाने के लिए इसका उचित प्रबंधन अत्यंत आश्श्यक है अन्यथा विश्व बैंक के उपाध्यक्ष रहे इस्माइल सेरेगंल्डीन की यह भविष्यवाणी सही साबित होगी कि अगली सदी में युद्ध तेल के लिए नहीं, पानी के लिए लडे जायेंगे। जैसा कि आप सभी जानते हैं कि वर्तमान में ऐसा परिदृश्य स्थानीय स्तरों

पर सामने आ रहा है। उचित जल प्रबंधन ही भावी विकास का आधार है। जल के अत्यधिक भण्डारण, उसके विवेकपूर्ण उपयोग (Wise use) के साथ ही उसकी शुद्धता पर भी ध्यान दिया जाना परमावश्यक है। उचित जलप्रबंधन हेतु इसके संरक्षण के उपायों को अपनाया जाना चाहिये।

8.3.2 जल प्रबंधन के उपाय :–

जल की सतत उपलभदता एवं शुद्धता बनाये रखना समय की मांग है। भावी पीढ़ी के उपयोग हुए इसका उचित प्रबंधन आवश्यक है। बेहतर जल प्रबंधन हेतु निम्नलिखित उपायों पर ध्यान दिया जाना चाहिये ।

1. भूमिगत जल का विवेकपूर्ण उपयोग किया जाना चाहिये। वर्षा जल से प्राप्त बहते हुए जल को नियंत्रित किया जाकर कृत्रिम पुर्नभरण की व्यवस्था बनायी जाये। भूमिगत जल के अनियंत्रित दोहन को रोकने, सार्वजनिक जल आपूर्ति उपलब्धि वाले क्षेत्रों में नलकूपों व पम्पसेटों के लगाने पर रोक हो।
2. वर्षा जल का अधिकतम संग्रहण व संरक्षण किया जाना आवश्यक है। इस हेतु परम्परागत तकनीकों को अपनाया चाहिये। वर्षा जल को रोकने व अधिकतम उपयोग हेतु बाँध, तालाब व चेक डेम बनाने के साथ ही कृत्रिम जलाशयों का निर्माण किया जाये। वर्षा जल संग्रहण प्रत्येक परिवार ग्राम व शहर के लिए आवश्यक हो। यदि वर्षा से प्राप्त कुल जल ही रोक लिया जाये तो 4० करोड हेक्टयर भूमि पर एक मीटर तक जल हो जायेगा।
3. जल प्रदूषण को नियंत्रित किया जाना चाहिये। खेती में अंधाधुंध रसायनों के उपयोग पर प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिये। जल क्षेत्रों में साबुन, डिटर्जेण्ट्स का उपयोग प्रतिबंधित हो उद्योंगों व घरों से निकलने वाले जल को सस्ती विधियों से उपचारित कर प्रयोग में लाया जाये। उद्योगों द्वारा जल प्रदूषण नहीं हो, इसके लिए नवीन प्रौद्योगिकी अपनायी जाये।
4. विद्युत तापगृहों द्वारा विषाक्त किये जाने वाले जल को बचाने हेतु कठोर उपाय आवश्यक हैं। राख के भण्डारण व निस्तारण का उचित प्रबंधन किया जाये।
5. वनों की अनियंत्रित कटाई को रोका जाये जिससे भूमिगत जल के स्तर को नीचे गिरने से रोका जा सके। वनों से पानी का बहाव रूकने के साथ ही मिट्टी अपरदन में कमी तथा भूगर्भिक जल का पुन: भंडारण हो सकेगा।
6. घरेलू कार्यो में जल के उपयोग को प्रति व्यक्ति उपभोग के आधार पर नियंत्रित किया जाकर अधिक उपयोग पर भारी कर लगा दिया जाये।
7. जल प्रबंधन के लिए जलग्रहण क्षेत्र विकास कार्याक्रम के अंतर्गत जलग्रहण प्रबंधन का ठोस व प्रभावी रूप से क्रियान्वयन होने पर जल के संकट से काफी हद तक निजात मिल सकती है। जलग्रहण (Watershed) एक ऐसा भौगोलिक क्षेत्र होता है, जिसमें गिरने वाला जल विभिन्न माध्यमों (जैसे – मुख्य नदी, सहायक नदी, नाला आदि) से इकट्ठा होकर एक ही स्थान से होकर बहता है। इसको तकनीकी ज्ञान व जनसहभागिता के आधार पर विकसित किया जाना श्रेयस्कर होगा।
8. नदियोंका राष्ट्रीय ग्रिड बनाया जानकर उनके अतिरिक्त जल का उपयोग सुनिश्चित किया जाये।

9. जल प्रबंधन में स्वयंसेवी सहायता समूहों के साथ ही वर्तमान इलेक्ट्रोनिक मीडिया भी जनजागति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इनके माध्यम से जल प्रबंधन के उपायों का व्यापक प्रचार–प्रसार करके उनको अपनाने पर जोर दिया जाना चाहिये।

बोध प्रश्न-1

1. जल संकट के तीन प्रमुख कारण बताइये।
2. स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता में सबसे पिछडा राज्य कौन सा है?
3. जलग्रहण क्षेत्र से आप क्या समझते है?

8.4 ऊर्जा प्रबन्धन :–

8.4.1 ऊर्जा–महत्व एवं आवश्यकता :–

ऊर्जा आधुनिक जीवन का आधार है। यह मनुष्य की अनिवार्य आवश्यकता बन चुकी है। वर्तमान में ऊर्जा की पूर्ति, उसके उपभोग की मात्रा विकास का आधार है। ऊर्जा किसी भी भौतिक या जैविक तत्व में विद्यमान तत्व को वैज्ञानिक तरीकों से नियंत्रित तथा संग्रहित करके प्राप्त की जा सकती है।

आप उष्मागतिकी के प्रथम सिद्धांत के बारे में जानते होंगे। इस सिद्धान्त के अनुसार ऊर्जा को न तो उत्पन्न किया सकता है तथा नहीं नष्ट, बल्कि इसे केवल एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। यह परिवर्तन सदैव किसी माध्यम की सहायता से ही संभव होता है। ऊर्जा के उपयोग के माध्यमों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है (1) यांत्रिक ऊर्जा (Machanical–energy) (2) रासायनिक ऊर्जा (Chemical energy) (3) विद्युत ऊर्जा (Electric energy)

आधुनिक समय में ऊर्जा विभिन्न साधनों से प्राप्त की जा रही है। उर्जा साधनों का वर्गीकरण निम्नांकित रूप से है

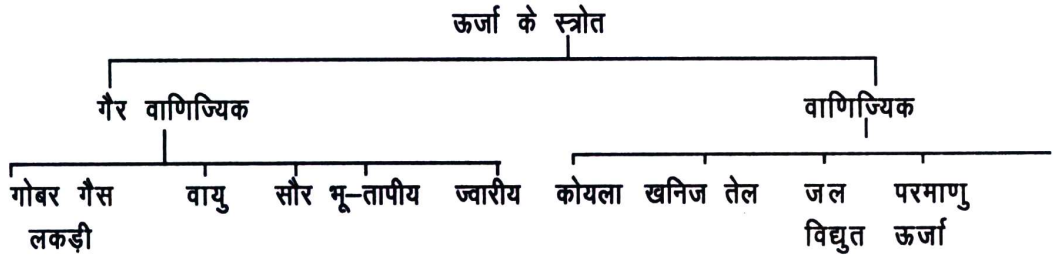

इनमें से कोयला खनिज तेल, गैस व परमागु ऊर्जा आदि समाप्य (Exhaustible) साधन हैं। इनको पुन: प्राप्त नहीं किया जा सकता है, जबकि अन्य को पुन: प्राप्त किया जा सकता है।

ऊर्जा संसाधन किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास के अवलम्बन है। मानवीय जीवन एवं अर्थव्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए ऊर्जा आधारभूत आवश्यकता है। हमारे देश भारत जैसे विकासशील देशों में इसका महत्व एवं आवश्यकता अवर्णनीय है। ऊर्जा के बढते महत्व एवं आवश्यकता के कारण ही तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा अक्टूबर 1974 में पृथक रूप से ऊर्जा मंत्रालय की स्थापना की गई थी। तीव्र औद्योगिकीकरण, नूतन तकनीकी तथा तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के कारण ऊर्जा उपयोग में वृद्धि से आज भारत ही नहीं बल्कि पूरे

विश्व के समक्ष ऊर्जा संकट की स्थिति बनी हुई है। हमारे देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ऊर्जा क्षेत्र में पर्याप्त विकास के बावजूद ऊर्जा प्राप्ति का संकट गहराता जा रहा है। मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकता बनते जाने के कारण प्रति व्यक्ति आवश्यकता में निरंतर वृद्धि हो रही है। भारत में ऊर्जा संकट के प्रमुख कारण हैं – अनियोजित शहरीकारण व औद्योगिकरण, वनों का विनाश, विद्युत निर्माण परियोजना में अनावश्यक विलम्ब व उचित योजनाओं का क्रियान्वयन नही होना, विद्युत उत्पादन संयंत्रों की निम्न उत्पादन क्षमता, मजबूत ग्रिड व्यवस्था के अभाव के कारण परिसंचरण में विद्युत नष्ट होना, राष्ट्रीय चरित्र व नैतिकता के अभाव में विद्युत चोरी होना व आवश्यकता न होने पर भी दुरूपयोग करना तथा शहरी क्षेत्र के साथ ही ग्रामीण क्षेत्र में भी मांग में वृद्धि आदि है।

8.4.2 उर्जा प्रबन्धन के उपाय :–

सभ्यता को बनाये रखने व आर्थिक विकास की गति बनाये रखने के लिए बढते उर्जा संकट का समाधान उचित ऊर्जा प्रबंधन के द्वारा किया जाना आवश्यक है। वर्तमान में ऐसी तकनीकी का उपयोग बढ़ना चाहिये जिससे कि ऊर्जा की कम खपत हो एवम् ऊर्जा के साधनों का अधिक अवधि तक इष्टतम (Optimum) प्रयोग किया जा सके। हमारे देश भारत में ऊर्जा के अनेक वैकल्पिक स्त्रोत पर्याप्त रूप से उपलब्ध है पर आवश्यकता उनको योजनाबद्ध रूप से विकसित करने की है। ऊर्जा के समाप्य संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग तथा सतत् ऊर्जा संसाधनों का प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। संकट को दूर करने हेतु ऊर्जा प्रबन्धन के लिए निम्नलिखित उपाय कारगर सिद्ध हो सकते हैं –

1. समाप्य ऊर्जा संसाधनों कोयला, खनिज व गैस का संरक्षण एवं विवेकपूर्ण उपयोग।
2. तकनीकी आधारित ऊर्जा के वैकल्पिक साधनों का विकास।
3. वृहत्, मध्यम व लघु विद्युत परियोजनाओं का निर्माण निश्चित समय व क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुसार प्रबन्धन।
4. विभिन्न विद्युत उत्पादक संयंत्रों की उचित तकनीकी व्यवस्था व उत्पादन का प्रबंधन।
5. परमणु ऊर्जा संयंत्रों का दीर्घकालीन विकास व प्रबंधन।
6. गैर परम्परागत ऊर्जा साधनों गोबर गैस, सौर ऊर्जा साधनों का ग्रामीण क्षेत्रों में विकास।
7. अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग कर ऊर्जा उत्पादन करना।
8. जैव ईंधन द्वारा उर्जा उत्पादन।
9. प्रदूषणु रहित उर्जा संसाधनों का अधिक विकास व प्रबंधन जैसे वायु ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, सौर ऊर्जा आदि।
10. प्रबंधन कार्यक्रमों में क्षेत्रीय जनता की सहभागिता के साथ संरक्षण के उपायों का जनता में व्यापक प्रचार प्रसार सुनिश्चित किया जाये।

उपरोक्त ठोस उपायों से ऊर्जा प्रबंधन करते हुए काफी हद तक ऊर्जा संकट से मुक्ति पाये जाना सम्भव है। ऊर्जा के नवीन साधनों के विकास व उचित प्रबंधन के द्वारा ही जीवन व आर्थिक विकास के स्तर में सुधार लाया जा सकता है।

बोध प्रश्न -2

1. ऊर्जा से आप क्या समझते हैं।
2. उष्मागतिकी का प्रथम सिधान्त को बताइये।
3. ऊर्जा के समाप्य साधनों से आप क्या समझते हैं।

8.5 मृदा प्रबंधन :–

8.5.1 मृदा प्रबंधन–आवश्यकता व महत्व :–

मृदा पर्यावरण का एक आधारभूत तत्व है। यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण संसाधन है। इससे मनुष्य की सभी अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। मृदा मनुष्य ही नहीं बल्कि सभी जीवों का प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप में पोषण करती है। मृदा मानव सभ्यता व संकृति की जननी है। मृदा खनिज तत्वों एवं जैव तत्वों का समूह है। प्रसिद्ध विद्वान डी. बैनेट (Dr.Benett) 'के अनुसार 'धरातत्व पर मिलने वाले असंगठित पदार्थो की ऐसी परत प्रमुख जो मूल चट्टान व वनस्पतिक अंश के संयोग से बनती है, मिट्टी कहलाती है। इसके दो प्रमुख आवश्यक तत्व है। (1) जैव पदार्थ (2) खनिज। मृदा का निर्माण चट्टानों एवं जैव पदार्थों के अपघटन (Secomposition) एवं विघटन (Disitegration) के उपरांत होता है। इसके निर्माण में चट्टान की प्रमुख भूमिका रहती है।

आप जानते हैं कि आज विश्व में अनेक भागों में मृदा से सम्बन्धित समस्यायें हैं। मृदा में दो प्रकार की समस्यायें प्रमुख हैं। (1) उर्वरता में हास (Decreasing fertility) (2) मृदा अपरदन (Soil Erosion)।

कृषि भूमि के निरन्तर उपयोग तथा कीटनाशकों के बढते प्रयोग से मृदा की उर्वरता में निरंतर हास आता जा रहा है। अत: इस बढ़ती उर्वरता की वनों व जैविक खादों के प्रयोग से उर्वरता की कमी को रोका जा सकता है। मृदा अपरदन मृदा हास से भी गंभीर समस्या है। मृदा अपरदन में मृदा की परतें एक स्थान से हट जाती हैं। मृदा अपरदन के प्रमुख कारक जल व वायु हैं। मृदा का सर्वाधिक कटाव धरातत्व पर होने वाले जल से होता है। वायुद्वारा मृदा अपरदन सामान्यत: शुष्क मरूस्थलों तथा अर्द्धशुष्क भागों में होता है। मृदा अपरदन से धरातल पर बीहड (Ravines) उत्पन्न हो जाते हैं। इससे धरती धीरे–धीरे बंजर होती जाती है। यह परिवर्तन मृदा प्रदूषण का ही रूप है। मृदा के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा अवांछित परिवर्तन जिससे मनुष्य व अन्य जीव प्रभावित होते हैं तथा जिससे भूमि की प्राकृतिक उपयोगिता व गुण नष्ट होते हैं, उसे मृदा प्रदूषण (Soil Pollution) रहते हैं। मृदा प्रदूषण मृदा अपरदन के विभिन्न साधनों के अलावा, रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों के बढते प्रयोग, अपशिष्टों के निष्कर्षण(घरेलू कृषि, औद्योगिक आदि) से दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इस आधारभूत संसाधन को बचाया जाना नितांत आवश्यक है।

8.5.2 मृदा प्रबंधन के उपाय :–

मृदा प्रदूषण की रोकथाम आज की प्रमुख आवश्यकता है। मृदा को वर्तमान में ही नहीं बल्कि भविष्य में भी सतत् रूप से दीर्घकाल तक उपयोग करने हेतु इसका संरक्षण कर उचित प्रबंधन किया जाकर उसको भावी पीढ़ी के उपयोग हेतु बचाये रखा जा सकता है। इस हेतु निम्नलिखित ठोस एवं दीर्घकालिक उपायों को अपनाया जाना चाहिये।

1. फसल चक्र (Crop Rotation) आधारित कृषि की जानी चाहिये। इसके अंतर्गत किसी खेत में लगातार एक ही फसल न बोयी जाकर हेर–फेर कर फसलों की बुवाई की जानी चाहिये। इसमें एक क्रमबद्ध रूप अपनाया जाये जैसे एक वर्ष गेहूँ तथा दूसरे वर्ष मूंगफली, मटर या गन्ना आदि पैदा किये जायें। इससे मृदा व किसान दोनों ही लाभानविन्त होंगे।
2. आवरण फसलों (Cover crops) का उपयोग हो। जिस भूमि को परती छोडना है, उस पर आवरण फसल लगाकर मृदा को बचाया जा सकता है। जैसे वर्षा ऋतु में सनई (Hamp) या ढैंचा लगाने से मृदा कटाव कम होता है।
3. मृदा अपरदन को समोच्च रेखीय जुताई (Contour Ploughing), सीढ़ीनुमा कृषि (Terraced Farming), पलवार बनाना (Mulching), पट्टीनुमा कृषि (Strip cropping) तथा वनावरण द्वारा रोका जा सकता है।
4. उत्पादकता बनाये रखने के लिए भूमि को परती (Fallow) छोडा जाना चाहिये।
5. सिंचाई हेतु अत्यधिक जल का अवांछनीय उपयोग रोकना होगा।
6. विभिन्न अपशिष्टों को उपचारित कर खाद के रूप में प्रयोग लाने की नई तकनीकी विकसित की जाये।
7. फसलों का चुनाव मिट्टी के प्रकार व उर्वरता के आधार पर ही किया जाये।
8. जैविक खादों, हरी खाद, कम्पोस्ट एवं गोबर की खाद का अधिक उपयोग श्रेयस्कर होगा।
9. शुष्क व जल प्लावित क्षेत्रों उपयुक्त जल प्रबंधन किया जाकर कृषि की जाये।
10. अंधाधुंध रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग प्रतिबंधित क्रिया जाना चाहिये।
11. अनियंत्रित पशुचारण को प्रतिबंधित किया जाये।
12. परम्परागत स्थानांतरित कृषि को नियंत्रित किया जाना चाहिये।
13. मृदा प्रबन्धन के विभिन्न उपायों हेतु किसानों को ही नहीं जन सामान्य को भी जानकारी दी जाकर प्रशिक्षित किया जाना चाहिऐ।

इस प्रकार उपरोक्त उपायों को अपनाये जाने पर मृदा का प्रभावी प्रबन्धन हो पायेगा। मृदा के प्रभावी प्रबंधन से ही उसको दीर्धकाल तक उपयोग में लाया जा सकता है इसका प्रभावी प्रबन्धन भावी पीढ़ियों के अस्तित्व के लिए अपरिहार्य है।

बोध प्रश्न-3

1. मृदा के दो प्रमुख आवश्यक तत्व कौन कौन से हैं?
2. मृदा प्रदूषण क्या है?
3. फसल चक्र से आप क्या समझते है।

8.6 सारांश :–

जल, ऊर्जा एवं मृदा भौतिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के महत्वपूर्ण साधन है। इन साधनों के निरन्तर उपयोग से इनके समाप्त होने का संकट दिन–पर–दिन गहराता जा रहा है। भावी सभ्यता को बचाये रखने एवं इन साधनों को संरक्षण प्रदान किये जाने के लिये इनका उचित प्रबन्धन अत्यन्त आवश्यक है। जल, ऊर्जा एवं मृदा के उचित प्रबंधन के द्वारा ही भावी आर्थिक विकास किया जा सकेगा।

जल प्रकृति का एक अनुपम उपहार है। जल के अत्यधिक दोहन से गंभीर जल संकट उपस्थित होता जा रहा है। जल की मात्रा में ही नहीं अपितु गुणों में भी हास आया है। जल संकट के लिये जनसंख्या में तीव्र वृद्धि अत्यधिक औद्योगिक विकास, बढता नगरीकरण प्रमुखत: उत्तरदायी है। जल की निरंतर उपलब्धता एवं शुद्धता बनाये रखने हेतु इसका बेहतर प्रबन्धन अतिआवश्यक है। इसके लिये भूमिगत जल का विवेकपूर्ण उपयोग, वर्षा जल का अधिकतम संग्रहण एवं संरक्षण, जल प्रदूषण नियंत्रण, अशोधित जल का उपयोग, वनो की कटाई पर रोक तथा जलग्रहण क्षेत्रों का विकास किया जाना चाहिए। इन सबके लिये जनजागृति एवं प्रबन्धन के उपायों का व्यापक प्रचार–प्रसार आवश्यक है।

ऊर्जा आधुनिक औद्योगिक युग का आधार स्तम्भ है। यह औद्योगिकी ही नहीं बल्कि मानव जीवन की दैनिक आवश्यकता का एक महत्वपूर्ण अंग बन चुकी है। किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास का यह आधार है। ऊर्जा के उपयोग के माध्यम से इसे यांत्रिक, रासायनिक, विददुत ऊर्जा में बांटा जाता है। तीव्र औद्योगिककरण तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के कारण ऊर्जा आपूर्ति का संकट गम्भीरतम रूप लेता जा रहा है। बढते ऊर्जा संकट का समाधान ऊर्जा प्रबंधन के विभिन्न उपायों को अपना कर किया जाना आवश्यक है। उपलब्ध संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग तथा नवीन वैकल्पिक साधनों का विकास एवं प्रबन्धन किया जाना चाहिए। इसके साथ ही गैर परम्परागत ऊर्जा साधनों, अपशिष्ट पदार्थों से ऊर्जा उत्पादन, जैव ईंधन का उपयोग, तथा विभिन्न स्थापित संयत्रों की उचित देखभाल एवं प्रबंधन आवश्यक है।

मृदा मानव ही नहीं बल्कि समस्त जैव जगत का आधार है। यह खनिज एवं जैव तत्वों का समूह है। इसके निर्माण में चट्टान की प्रमुख भूमिका रहती है। विश्व स्तर पर मृदा की दो प्रमुख समस्यायें है

1. उर्वरता में कमी आते जाना
2. मृदा अपरदन

मृदा अपरदन एक अधिक गंभीर समस्या है जिसमें उपजाऊ मृदा की परतें एक स्थान से हट जाती हैं। मृदा अपरदन प्रमुखत: जल एवं वायु के माध्यम से होता है। जिसके विभिन्न रूप होते हैं। मृदा प्रदूषण से मृदा के मौलिक गुण नष्ट हो जाते हैं। अत: इस संसाधन का प्रबन्धन अपरिहार्य है। मृदा प्रबन्धन हेतु फसल चक्र में हेर–फेर, आवरण फसलों का उपयोग सीढ़ीनुमा कृषी, जैविक खादों का प्रयोग, जल प्रबन्धन तथा इसके साथ ही अंधाधुंध रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग पर रोक लगाई जानी चाहिये। मृदा का प्रभावी प्रबन्धन किया जाकार ही उसको दीर्घकाल तक उपयोगी बनाये रखना सम्भव हो सकेगा।

8.7 स्व मूलांकन प्रश्न

1. जल प्रबन्धन के महत्त्व एवं उपायों को समझाइये।
   Explain the importance and measures for water management.
2. ऊर्जा संकट के कारणों के बारे में लिखिये।
   Write about the causes of energy crisis.
3. ऊर्जा प्रबंधन के उपायों का उल्लेख कीजिये।
   Mention the measures for energy management.
4. मृदा अपरदन के कारणों को बताते हुये इसके प्रबंधन के उपाय बताइये।

To mention causes of soil erosion discuss measures for its management.

8.8 संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. संसाधन भूगोल–एसडी. मौर्य
2. पर्यावरण शिक्षा – एमके. गोयल
3. पर्यावरण अध्ययन–बी.एल. तेली व नाटाणी
4. पर्यावरण भूगोल – सविन्द्र सिंह
5. पर्यावरण अध्ययन–शर्मा व जोशी
6.Global Environmental Chages–Sharma and Puar

इकाई–9

Meaning,objectives,importance and philosophy of Environmental education

पर्यावरण शिक्षा – अर्थ, उद्देश्य, महत्व एवं दर्शन

इकाई की रूपरेखा :

9.1 उद्देश्य
9.2 प्रस्तावना
9.3 पर्यावरण शिक्षा क्या है
9.4 पर्यावरण (अर्थ एवं परिभाषा)
9.5 पर्यावरणीय व्याख्या एवं परिभाषाओं के अर्थ एवं अवधारणा में निम्नांकित तत्व समाविष्ट है
9.6 पर्यावरण शिक्षा (अर्थ एवं परिभाषा)
9.7 पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य
9.8 अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा पर्यावरण शिक्षा के घोषित उद्देश्य
9.9 एन.सी.ई.आर.टी एवं विश्व बैंक के सम्मेलनों में पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य
9.10 पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य
बोध प्रश्न–1
9.11 पर्यावरण शिक्षा का महत्व एवं आवश्यकता
9.12 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में पर्यावरण शिक्षा का महत्व
9.13 पर्यावरण अध्ययन का वर्तमान युग में महत्व
9.14 पर्यावरण शिक्षा का दर्शन
9.15 पर्यावरण शिक्षा में दर्शन का महत्व
बोध प्रश्न–2
9.16 सारांश
9.17 स्व मूल्यांकन प्रश्न
9.18 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.1 उद्देश्य:

शिक्षा एक व्यापक प्रक्रिया है। शिक्षा से तात्पर्य मात्र पुस्तकीय ज्ञान ही नहीं अपितु शिक्षा का उद्देश्य श्रद्धा' समर्पण व सेवा भाव जगाना है। शिक्षा मानव को मानवता के उत्थान के लिये कर्म करने को प्रेरित करती है। गुणवत्ता कर्म के बिना नहीं आ सकती अत: शिक्षा में कर्म का प्रमुख स्थान होना चाहिये। वर्तमान में शिक्षा क्षेत्र में सबसे अधिक महत्वपूर्ण कर्म है पर्यावरण संरक्षण की भावना एवं ज्ञान का विकास करना। यह उद्देश्य पूर्ति तब हो सकती है जब स्वयं शिक्षक पर्यावरण शिक्षा में रूचि लेकर विद्यार्थियों को पर्यावरणीय ज्ञान शिक्षा के माध्यम से प्रसारित करे।

9.2 प्रस्तावना:–

युग कोई भी हो मानव, जीव–जन्तु एवं सृष्टि निर्माण में पर्यावरण के महत्व को नकारा नहीं जा सकता अर्थात सृष्टि निर्माण का आधार एवं संतुलन पर्यावरण है। मानव पंच तत्वों से बना है पांचों तत्व पर्यावरण के महत्वपूर्ण अंग है अत: कहा जा सकता है मनुष्य तब तक सुरक्षित माना जा सकता है जब तक पर्यावरण सुरक्षित है।

9.3 पर्यावरण शिक्षा क्या है:–

पर्यावरण शब्द को अधिक सुस्पष्ट करने के लिये इसकी व्याख्या करना आवश्यक है:– पर्यावरण शब्द दो शब्दों परि, आवरण के योग से निर्मित है। जिसका तात्पर्य है, हमारे चारों ओर का प्राकृतिक भौतिक व सामाजिक आवरण या परिवेश।

वेबस्टर (Webster) शब्दकोष के अनुसार ' पर्यावरण से आशय उन घेरे रहने वाली परिस्थितियों, प्रभावों और शक्तियों से है जो सामाजिक और सांस्कृतिक दशाओं के समूह द्वारा व्यक्ति और समुदाय के जीवन को प्रभावित करती है।

डा. हरिमोहन सक्सेना :–

पर्यावरण हमारी पृथ्वी पर जीवन का आधार है जो न सिर्फ मानव अपितु विभिन्न प्रकार के जीव–जन्तुओं एवं वनस्पति के उद्भव विकास एवं व्यक्तित्व का आधार है। सभ्यता के विकास से वर्तमान युग तक मानव ने जो प्रगति की है उसमें पर्यावरण की महत्ती भूमिका है और यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि मानव सभ्यता एवं संस्कृति का विकास मानव पर्यावरण के समयानुकूल एवं सामन्जस्य का परिणाम है।

हर्सकोविट्स :–

पर्यावरण उन सब बाहरी दशाओं और प्रभावों का योग है जो प्राणी या अवयवो के जीवन और विकास पर प्रभाव डालते हैं।

डी.एच. डेबिस :–

पर्यावरण का अभिप्राय भूमि या मानव को चारों ओर से घेरे उन सभी भौतिक स्वरूपों से है जिनमें न केवल वह रहता है बल्कि जिसका प्रभाव उसकी आदतों एवं क्रियाओं पर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। इस प्रकार के स्वरूपों में धरातत्व भौतिक एवं प्राकृतिक संसाधन, मिट्टी की प्रकृति उसकी स्थिति, जलवायु, वनस्पति, खनिज सम्पदा, जल–थल का वितरण, पर्वत, मैदान, सूर्यताप आदि जो भूमण्डल पर घटित होती है एवं जो मानव को प्रभावित करती है।

9.4 पर्यावरण (अर्थ एवं परिभाषा):–

डा. रघुवंशी के अनुसार पर्यावरण शब्द जीवों की अनुक्रियाओं को प्रभावित करने वाली समस्त भौतिक तथा जैविक परिस्थितियों का योग हैं। हम इसे जैवमण्डल भी कह सकते हैं जो कि जलमण्डल (Hydrosphere) स्थलमण्डल (Lithosphere) तथा वायुमण्डल (Atmosphere) के जीवनयुक्त भागों का योग है।

पर्यावरण का अभिप्राय उस समष्टि से है जो मनुष्य एवं उसकी क्रियाओं को घेरे हुए है। अंग्रेजी के Environment शब्द के विन्यास से यह स्पष्ट है कि इसमें Environment का अर्थ

घेरना (Encircle) है और 'ment" का अर्थ चतुर्दिश अर्थात चारों ओर से है। इस प्रकार पर्यावरण का अर्थ है चारों ओर से घेरना।

9.5 पर्यावरणीय व्याख्या एवं परिभाषाओं के अर्थ एवं अवधारणा में निम्नांकित तत्व समाविष्ट है

(1) पर्यावरण अनेक तत्वों का समूह है जिसका आशय उन समस्त प्राकृतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा भौतिक परिस्थितियों से है जो मानव को चारों ओर से न केवल घेरे रहती है वरन् उसके जीवन को उल्लेखनीय रूप से प्रभावित करती है।

(2) पर्यावरण के प्रमुख अवयव–भूमण्डल (Lithosphere) वायुमण्डल (Atmosphere), जलमण्डल (Hydrosphere), जैवमण्डल (Biosphere) एवं संस्कृति (Culture) है।

(3) उपरोक्त अवयव या घटक अन्त: आश्रित या अंतनिर्भर होते हैं जो परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा एक दूसरे से प्रभावित होते हैं।

(4) पर्यावरण के दो प्रकार है (1) जैविक पर्यावरण (Biotic Environment)
(2) अजैविक पर्यावरण (Abiotic Environment)

(5) मानव सभ्यता एवं संस्कृति का विकास मानव और पर्यावरण के समयानुकूलन रह सामन्जस्य का परिणाम है।

(6) उपरोक्त अनुकूलन एवं सामन्जस्य में जैसे ही व्यक्तिक्रम आता है प्रगति और विकास अवरूद्ध हो जाता है तथा समस्त जीव–जगत के व्यक्तित्व पर संकट उत्पन्न हो जाता है।

इस प्रकार पर्यावरण बोध मानव में जागृत एवं विकसित करने की महत्ती आवश्यकता है यह बोध पर्यावरण अध्ययन या पर्यावरण शिक्षा द्वारा ही सम्भव है।

9.6 पर्यावरण शिक्षा (अर्थ एवं परिभाषा):–

पर्यावरण शिक्षा वस्तुत: विश्व समुदाय को पर्यावरण सबन्धी दी जाने वाली वह शिक्षा हैं जिससे वे पर्यावरणीय समस्याओं से अवगत होकर उनका हल खोज सके और साथ ही भविष्य में आने वाली समस्याओं को रोक सकें।

पर्यावरण शिक्षा पर्यावरण के बारे में जानकारी देने समझने और मानव द्वारा किये जा रहे उसके विविध कार्यकलापों के बारे में गुण और अवगुण के आधार पर जानकारी देने की व्यापक प्रक्रिया है इस प्रकार पर्यावरण शिक्षा प्रत्यक्ष और परोक्ष में पर्यावरण के संरक्षण, रख रखाव तथा सुधार के बारे में सोचने और समझने का अवसर प्रदार करती है।

ममता शर्मा के अनुसार – पर्यावरणीय शिक्षा वस्तुत: विश्व समुदाय को पर्यावरण सम्बन्धी दी जाने वाली वह शिक्षा हैं जिससे वे समस्याओं से अवगत होकर उनका हल खोज सकें और साथ ही भविष्य में आने वाली समस्याओं को रोक सकें।

प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु 'अन्तर्राष्ट्रीय संगठन (IUCN–International Union for Conservation Natural Resaurces) द्वारा आयोजित स्कूली पाठ्यक्रम के लिये पर्यावरणीय शिक्षा एवं अन्तर्राष्ट्रीय बैठक की अन्तिम रिपोर्ट 1970 में पर्यावरणीय शिक्षा को इस प्रकार परिभाषित क्रिया है :–

पर्यावरणीय शिक्षा दायित्वों को जानने तथा विचारों को स्पष्ट करने की वह प्रक्रिया है जिससे मनुष्य अपनी संस्कृति और जैव भौतिक परिवेश के मध्य अपने आपकी सम्बद्धता को पहिचानने और समझने के लिये आवश्यक कौशल तथा अभिवृद्धि का विकास कर सके। पर्यावरणीय शिक्षा पर्यावरण की गुणवत्ता से सम्बन्धित प्रकरणों के लिये व्यावहारिक संहिता निर्माण करने तथा निर्णय लेने की आदत को व्यवस्थित करती है।

9.7 पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य:–

पर्यावरण शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को पर्यावरण का ज्ञान देने के साथ ही ऐसी कुशलताओं को विकसित करना है, जिससे वह पर्यावरण की समस्याओं को समझकर उन्हें दूर करने में सफल हो सके।

एच.टी. हेवावासन (सचिव एन्वायरमेन्टल कौन्सिल सेन्ट्रल एन्वायरमेन्टल अथोरिटी कोलम्बो, श्रीलंका) ने पर्यावरण शिक्षा के मुख्य उद्देश्य पर बल देते हुए कहा है कि, पर्यावरण शिक्षा पर्यावरण के बारे में जानकारी कर अपने कौशल से उसकी समस्याओं का समझने, हल निकालने और मिटाने अथवा दूर करने की शिक्षा है और वे सभी कार्य निष्पादन इस प्रकार किये जाते है कि उसकी पुनरावृति न हो।

9.8 तिबलिसी सम्मेलन (यूनेस्को व यू.एन.इ.पी. 1977) के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में

पर्यावरण शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये:–

(1) जागरूकता (Awareness) :– समग्र पर्यावरण व उसकी समस्याओं के प्रति जागरूक एवं संवेदनशील होने की क्षमता का विकास करना।

(2) ज्ञान (Knowledge) – विभिन्न अनुभवों के माध्यम से यर्यावरण व उससे संबन्धित समस्याओं के प्रति समझ विकसित करना।

(3) अभिवृत्ति (Attitude) :– पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता व नैतिक मूल्यों. का विकास करना जिससे पर्यावरण के संवर्द्धन व संरक्षण के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित हो सके।

(4) कौशल (Skills) :– पर्यावरण समस्याओं को समझने व उनका समाधान कर सकने की योग्यता विकसित करना।

(5) मूल्यांकन (Evaluation) :– पारिस्थितिकीय, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक सौन्दर्यत्मिक व शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में सामाजिक मापदण्डों व शैक्षिक कार्यक्रमों का मूल्यांकन कर सकने की योग्यता विकसित करना।

(6) सहभागिता (Participation) : पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान करने में प्रत्येक स्तर पर दायित्वपूर्ण सक्रिय सहभागिता निभाना।

9.9 एन.सी.ई.आर.टी. एवं विश्व बैंक के सम्मेलनों में पर्यावरण शिक्षा के निम्न उद्देश्य निर्धारित किय गये:–

1. वृक्ष जीव विज्ञान क्षेत्र में अनुसंधान।

2. पेयजल समस्या निवारण।
3. भूजल प्रदूषण को निम्नतर मान्य।
4. वायुप्रदूषण नियन्त्रण के लिए हरित पट्टी का विकास करना।
5. पर्यावरण प्रदूषण की निगरानी और नियन्त्रण के लिए उपकरणों का विकास।
6. देश में पर्यावरण अनुसंधान का सिलसिलेदार प्रबन्ध।
7. संसाधनों का विकास।
8. वित्तीय सहायता देने की अधिक कारगर, कुशल तथा सार्थक प्रक्रियाओं का विकास।
9. अनुसंधान कार्यक्रमों, प्राथमिकताओं तथा प्रक्रियाओं की समीक्षा।
10. पर्यावरण अनुसंधान पर सूचना प्रबन्ध के लिए हार्डवेयर तथा सोफ्टवेयर व्यवस्था।

9.10 पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य :–

पर्यावरण शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते है।

1. पर्यावरण का ज्ञान कराना।
2. पर्यावरण के घटकों का ज्ञान कराना।
3. पर्यावरण शुद्धता के प्रति जागरूक कराना।
4. पर्यावरण शुद्ध रखने के उपायों का ज्ञान देना।
5. पर्यावरण प्रदूषण के नियन्त्रण का ज्ञान देना।
6. पर्यावरण प्रदूषण के नियन्त्रण की तकनीकी के माध्यम से कुशलताओं का विकास करना
7. पर्यावरण प्रदूषण से होने वाली हानियों के प्रति संवेदना विकसित करना।
8. पर्यावरण को स्वच्छ रखने के लिये सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करना।

बोध प्रश्न- 1

1. पर्यावरण को परिभाषित कीजिए ।
2. पर्यावरण के प्रकारों की जानकारी दीजिए ।
3. पर्यावरण शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए ।
4. I.U.C.N क्या तात्पर्य है?
5. एन.सी.आर.टी. द्वारा स्थापित पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में लिखिए ।

9.11 पर्यावरण शिक्षा का महत्व एवं आवश्यकता:–

आधुनिक युग में विज्ञान एवं तकनीकी के विकास से जहां एक ओर मानव जीवन सुखी–सुविधाजनक व समृद्ध हुआ है वहां दूसरी ओर बढ़ती जनसंख्या, बढते हुए औद्योगीकरण, वनो के विनाश, पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों के दोहन एवं इनकी कमी के कारण पर्यावरण प्रदूषण बढता जा रहा है। इस प्रदूषण से जल, वायु, खाद्य पदार्थ, ध्वनि, भूमि आदि प्रदूषित हो रहे है।

पर्यावरण निम्नीकरण के कुछ आधारभूत घटकों यथा :– हवा, जल, मृदा आदि की गुणवत्ता में हास होने से परिस्थितिक संकट पैदा होने लगा है, परिस्थितिक संकट सम्पूर्ण जैव जगत के व्यक्तित्व के लिये खतरा बन गया है जो महाविनाश की चेतावनी है। विषैली गैसों से पृथ्वी की रक्षा कवच ओजोन परत में छिद्र हो गये हैं जिससे सूर्य की पराबैंगनी किरणों से पृथ्वी के समस्त जीवों पर संकट आ गया है |

पर्यावरण प्रदूषण रोकने तथा पर्यावरण की रक्षा हेतु विश्व स्तर पर प्रयास किये जा रहे है। इस हेतु 1972 में स्वीडन के स्टाकहोम में, 1975 में बेलग्रेड यूगोस्लाविया में, 1977 में तिविलिसी (रूस) तथा 1992 में रिथोडीजेनेरो (ब्राजील) में हुए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में पर्यावरण शिक्षा पर बल दिया गया।

आधुनिकता के नाम पर पर्यावरण को अधिक आघात पहुंच रहा है और हमारी भूल का परिणाम दैवीय प्रकोप और सांस्कृतिक समस्याओं के रूप में प्रकट होने लगा है।

शिक्षण के लिये पर्यावरण संबंधी ज्ञान होना आवश्यक है शिक्षक ही छात्रों में पर्यावरणीय जागृति पैदा करने का उत्तम एवं सक्षम साधन हो सकता है, अत: पर्यावरण शिक्षा की पाठ्यक्रम में शामिल करने की महत्ती आवश्यकता है।

पर्यावरण शिक्षा की उपयोगिता आज हमारे जीवन में निरन्तर बढ रही है। पर्यावरण शिक्षा का महत्व निम्न बिन्दुओं से अधिक स्पष्ट हो सकता है :–

1. पर्यावरण शिक्षा हमें वनों के महत्व एवं लाभ का ज्ञान कराकर वन संरक्षण के लिये प्रेरित करती है।
2. पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से बढ़ती हुई जनसंख्या से होने वाले पर्यावरणीय प्रदूषण एवं नुकसान का ज्ञान प्राप्त होता है।
3. पर्यावरण शिक्षा छात्रों में प्रदूषण के खतरों एवं दुष्परिणामो के प्रति सचेत होने की भावना का विकास कर प्रदूषण रोकने की चेतना पैदा करती है।
4. पर्यावरण शिक्षा द्वारा छात्रों में राष्ट्र–प्रेम और अन्तर्राष्ट्रीय भाव उत्पन्न किया जा सकता है।
5. पर्यावरण शिक्षा छात्रों में सामाजिकता की भावना का विकास करती है इसके द्वारा उनमें सहयोग, प्रेम, सहकारिता, सहिष्णुता जैसे गुण पैदा किये जा सकते है।
6. पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से मानव को अपने जीवन मूल्यों पर पुनर्विचार हेतु प्रशिक्षण दिया जा सकता है।
7. पर्यावरण शिक्षा द्वारा पर्यावरण सम्बन्धी सकारात्मक वैज्ञानिक दृष्टिकोण और मनोवृत्तियों का विकास किया जा सकता है।
8. पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं को समझने. उनका विश्लेषण करने तथा उनके समाधान के लिये बौद्धिक क्षमता एवं कौशल का विकास पर्यावरण शिक्षा द्वारा किया जा सकता है।
9. पर्यावरण सम्बन्धी सभी प्रकार की जानकारी प्रदान करना।
10. पर्यावरण शिक्षा छात्रों को जनतांत्रिक नागरिक बनाने में सहायता करती है। उसको अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों का बोध होता है। छात्रों में इस शिक्षा द्वारा चिन्तन तथा स्वनिर्णय लेने की शक्ति का विकास होता है।

9.12 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में पर्यावरण शिक्षा का महत्व:–

पर्यावरण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने की बहुत आवश्यकता है और यह जागरूकता बच्चों से लेकर सभी आयु वर्गो व क्षेत्रों में फैलनी चाहिए। पर्यावरण के प्रति जागरूकता विद्यालयों और कालेजों की शिक्षा का अंग होनी चाहिए। इसे शिक्षा की पूरी प्रक्रिया में समाहित किया जायेगा।

अत: पर्यावरण शिक्षा की महत्वपूर्ण आवश्यकता है इसके महत्व को प्रस्तुत रेखाचित्र के माध्यम से झमझा जा सकता है।

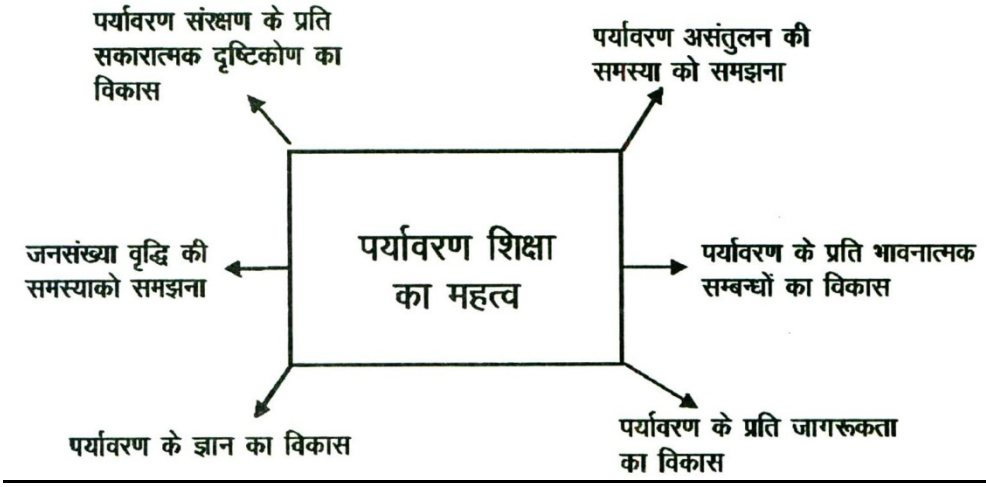

9.13 पर्यावरण अध्ययन का वर्तमान युग में महत्व:–

पर्यावरणीय अध्ययन की वर्तमान युग में आवश्यक्ता को दृष्टिगत रखते हुए इसके महत्व को डा. हरिमोहन सक्सेना ने इस प्रकार स्वीकार किया है – वास्तव में पृथक से पर्यावरण शिक्षा का दौर विगत 25–30 वर्षो से ही प्रारम्भ हुआ है, और विगत दशक में यह अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया है। मानव तकनीकी विकास एवं पर्यावरण के अन्त: सम्बन्धों से जो परिस्थितिकी चक्र बनाते है वह सम्पूर्ण क्रिया–कलापों और विकास को नियन्त्रित करता है। यदि इनमें सन्तुलन रहता है तो सब कुछ सामान्य गति से चलता रहता है किन्तु किसी कारण से यदि इनमें व्यक्तिक्रम आता है तो पर्यावरण का स्वरूप विकृत होने लगता है और इसका हानिकारक प्रभाव न केवल जीव जगत् अपितु पर्यावरण के घटको पर भी होता है। वर्तमान में यह तीव्रता से हो रहा है। औद्योगिक तकनीकी, वैज्ञानिक परिवहन विकास की होड़ में हम यह भूल गये कि ये साधन पर्यावरण को प्रदूषित कर मानव जाति एवं अन्य जीवों के लिये संकट का कारण बन जायेंगे। वास्तविक चेतना का उदय तब हुआ जब विकसित देशों में यह संकट अधिक हो गया और उन्होंने इस दिशा में अपने प्रयासों को तेज कर दिया राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मंचो पर पर्यावरण चेतना एवं इसके खतरों की आवाज उठने लगी। इसके साथ ही पर्यावरण शिक्षा का विचार भी बल पकड़ने लगा। अब यह सभी स्वीकार करते हैं कि पर्यावरण को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाना चाहिए जिससे छात्रों में प्रारम्भिक काल से ही पर्यावरण चेतना जाग्रत की जा सके।

भारत में भी पर्यावरणीय अध्ययन या शिक्षा का महत्व स्वीकार कर राष्ट्रीय नीति 1986 मे इसे शिक्षा का अभिन्न अंग बना दिया गया है। राजस्थान में भी इस नीति के फलस्वरूप प्राथमिक कक्षाओं में इस विषय को शिक्षाकाक्रम का अभिन्न अंग बनाते हुए शिक्षाक्रम में कहा गया है कि यह ज्ञान तथा कौशल उसे (बालक को) पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाते है जिससे वह पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिये प्रयत्नशीन रहता है। पर्यावरण अध्ययन के माध्यम से विद्यालय का कार्य बालक द्वारा सीखने की उस स्वाभाविक प्रक्रिया एवं इसके परिणामों को सुनिश्चित् सुव्यवस्थित एवं उपयोगी बनाता है।"

9.14 पर्यावरण शिक्षा का दर्शन:–

मनुष्य सृष्टि का सर्वोतम प्राणी है। वह अपने जीवन में आत्मविश्लेषण करता है, चिन्तन व मनन करता है। इस संसार के बारे में विचार करता है, प्रकृति के नियमों को जानने का प्रयास करता है। इन्हीं विचारों से दर्शन का जन्म होता है।

दार्शनिक प्लेटो और सुकरात दर्शन का जन्म आश्चर्य और जिज्ञासा से मानते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि भारतीय दर्शन का प्रारम्भ मानसिक अशान्ति अथवा असंतोष से होता है। दर्शन परा विद्या अथवा सबसे लंबी विद्या है। दर्शन के ज्ञान से व्यक्ति सत्य का अनुसरण करता

कौटिल्य के शब्दों में – 'दर्शनशास्त्र सभी विद्याओं का दीपक है। दर्शन सभी कर्मो को सिद्ध करने का साधन है। दर्शन सभी धर्मो का अधिष्ठान है।"

दर्शन वह विद्या है, जिसको जान लेने से अप्रत्यक्ष, प्रत्यक्ष हो जाता है, अविचारित विचारित हो जाता है और अज्ञात, ज्ञात हो जाता है। शिक्षा–दर्शन वह विज्ञान है, जिसमें शिक्षा और दर्शन दोनों का योगदान है। शिक्षा–शास्त्रियों का मानना है कि शिक्षा जगत में दर्शन के सिद्धान्तों का प्रयोग होना चाहिए। पर्यावरण शिक्षा में दर्शन के अनुप्रयोग से पर्यावरण शिक्षा को प्रत्यक्ष रूप में समझा जा सकता प्रकृति के अज्ञात स्वरूप को पहचाना जा सकता है।

9.15 पर्यावरण शिक्षा में दर्शन का महत्व:–

दर्शन विचारों को जन्म देता है विचारकों के माध्यम से ही कार्य सिद्धि की प्रेरणा मिलती है। पर्यावरण सुरक्षा हेतु नवीन विचारों व उपायों की आवश्यकता है, जो दर्शन से सम्भव है :–

1. दर्शन से पर्यावरण की समस्याओं पर विचार किया जा सकता है और उन समस्याओं का निदान समाधान किया जा सकता है।
2. दर्शन के माध्यम से पर्यावरण के प्रभाव तथा व्यक्ति के जीवन के लक्ष्य को निर्धारित किया जा सकता है।
3. दर्शन के माध्यम से पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य व प्रक्रिया के स्वरूप का अध्ययन किया जा सकता है।
4. अखिल ब्रह्माण्ड और इस ब्रह्माण्ड मे मानव जीवन कि स्थिति, उसकी सार्थकता और भूमिका की दर्शन के माध्यम से व्याख्या की जा सकती है।
5. शिक्षा–दर्शन पर्यावरण के प्रति दर्शन के विभिन्न दृष्टिकोणों का विवरण प्रस्तुत कर सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करता है।

अत: पर्यावरण शिक्षा में दर्शन महत्वपूर्ण है। पर्यावरण शिक्षा में दर्शन के सिद्धान्तों का योग करके पर्यावरण के प्रति चेतना विकसित की जा सकती है।

9.16 सारांश:–

प्रस्तुत इकाई में पर्यावरण का अर्थ एवं परिभाषायें पर्यावरण शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषायें तथा पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व को सुस्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए वर्तमान समय में पर्यावरण शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डाला गया है एवं इस विषय पर विद्वानों के मत को भी महत्वपूर्ण बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट किया गया है।

पर्यावरण शिक्षा के दर्शन को सुस्पष्ट करते हुए पर्यावरण शिक्षा की अनिवार्यता पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

आशा है छात्र प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से पर्यावरण शिक्षा के सम्प्रत्यय से अवगत हो सकेंगे।

9.17 स्व मूल्यांकन प्रश्न:–

(1) पर्यावरण शिक्षा क्या है? पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता बताइए।

(2) आधुनिक युग में पर्यावरण शिक्षा के महत्व की विवेचना कीजिए।

(3) पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्यों को विस्तार से स्पष्ट कीजिए।

(4) पर्यावरण शिक्षा के दर्शन से आप क्या समझते है? पर्यावरण शिक्षा में दर्शन का क्या कारण है।

9.18 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डा. एच.एस. बघेला, पर्यावरणीय अध्ययन एवं शिक्षण विधियां, संस्करण 2002 पृ. 3–4
2. डा. हरिमोहन सक्सेना, पर्यावरण एवं प्रदूषण पृ. 274–275
3. ममता शर्मा, विद्यालय स्तरीय शिक्षा में पर्यावरण अध्ययन–शिविर जनवरी 1997, पृ. 365–66
4. डा. मंजु शर्मा, डा. राजेश कुमार चौहान, पर्यावरण शिक्षा, 2008–07
5. पीसी. जैन, पर्यावरणीय शिक्षा. पृ. 2
6. डा. राधावल्लभ उपाध्याय, पर्यावरण शिक्षा, तृतीय संस्करण 2005–06
7. शिक्षा क्रम 1989, शिक्षा विभाग मा.वि. राजस्थान (बीकानेर) पृ. 60–62

इकाई–10

Scope of Environment Education–Multidisciplainary approach correlation with other school subjects

पर्यावरण का विस्तार, विविध विषयी क्षेत्र तथा अन्य विद्यालयी विषयों से सहसंबंध

इकाई की रूपरेखा :

10.1 उद्देश्य
10.2 प्रस्तावना
10.3 पर्यावरण का विषय क्षेत्र
10.4 पर्यावरण शिक्षा से सम्बन्धित विषय
10.5 वनस्पति विज्ञान
10.6 प्राणी विज्ञान
10.7 रसायन शास्त्र
10.8 भौतिक शास्त्र
10.9 मौसम विज्ञान
10.10 भूगोल
बोध प्रश्न– 1
10.11 अन्तरिक्ष विज्ञान
10.12 अर्थशास्त्र
10.13 प्रबन्धन
बोध प्रश्न–2
10.14 समाज शास्त्र
10.15 सूक्ष्मजीव विज्ञान
10.16 जैव तकनीकी
10.17 विधि
10.18 अन्य
10.19 सारांश
10.20 स्व मूल्यांकन प्रश्न
10.21 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.1 उद्देश्य:–

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

1. पर्यावरण के विस्तार की विभिन्न विधियों से परिचित हो सकेंगें।
2. पर्यावरण शिक्षा का अन्य विषयों से सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगें।
3. पर्यावरण के विविध विषयी क्षेत्रों का ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।

4. विद्यालय में पढाये जाने वाले अन्य विषयों मे पर्यावरण का महत्व खोज सकेगें।

10.2 प्रस्तावना :–

जैसा कि हम सभी जानते हैं पर्यावरण शब्द का तात्पर्य जीव के चारों और उपस्थित आवरण' है जिसमें जैविक तथा अजैविक दोनों तत्व सम्मिलित होते हैं जो कि जीव को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करते है। जिस प्रकार पर्यावरण के ये तत्व जीव को प्रभावित करते हैं उसी प्रकार जीव की क्रियाऐं भी पर्यावरण के समस्त तत्वों को प्रभावित करती हैं। पर्यावरण के इन सभी तत्वों को ठीक से समझने के लिए विविध विषयों की जानकारी आवश्यक है या हम कह सकते हैं कि पर्यावरण के क्षेत्र में विभिन्न विषयों के वियानों के योगदान की आवश्यकता है। अर्थात् पर्यावरण अध्ययन एक विविध आयामी विषय है जिससे अन्य कई विषय सम्बन्धित हैं पर्यावरण शिक्षा से जुडे अन्य कई विषयों के विषय में जानकारी नीचे दी गई है।

10.3 पर्यावरण का विषय क्षेत्र :–

वर्तमान में पर्यावरण अध्ययन का क्षेत्र व्यापक हो गया है जिसमें जीव मण्डलीय वृहद् पारिस्थितिक तन्त्र के तीनों परिमण्डलों : स्थलमण्डल, जलमण्डल एवं वायुमण्डल के संघटन एवं संरचना का अध्ययन सम्मिलित है। चित्र से स्पष्ट होता है कि पर्यावरण में स्थल, जल, वायु एवं जीवमण्डल के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है जिसमें सम्पूर्ण मानवीय क्रियाओं को निर्धारण होता है। इस प्रकार पर्यावरण भौतिक तत्वों का ऐसा समूह है जिसमें विशिष्ट भौतिक शक्तियाँ कार्य करती हैं एवं इनके प्रभाव दृश्य एवं अदृश्य रूप में परिलक्षित होते हैं।

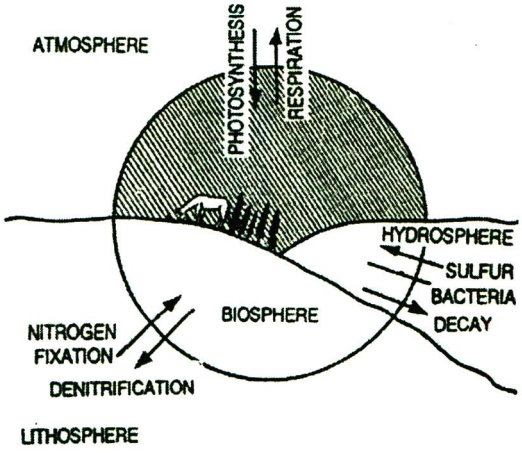

पर्यावरण अध्ययन की विषय वस्तु में पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के विविध घटकों, इनके पारिस्थितिकीय प्रभावों, मानव पर्यावरण अन्तर्सम्बन्धों आदि का अध्ययन सम्मिलित किया जाता है साथ ही इसमें पर्यावरणीय अवनयन, प्रदूषण, जनसंख्या नगरीयकरण औद्यौगीकरण तथा इनके पर्यावरण पर प्रभावों, संसाधन उपयोग एवं पर्यावरण संकट, पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबन्धन के विभिन्न पक्षों का भी अध्ययन किया जाता है।

10.4 पर्यावरण शिक्षा से सम्बन्धित विषय :–

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि वर्तमान में पर्यावरण अध्ययन एक बहु आयामी विषय है। परन्तु प्रारम्म में पर्यावरण का अध्ययन प्राकृतिक विज्ञानों में ही किया जाता था लेकिन

पर्यावरण के घटकों के तीव्र गति से दोहन से पर्यावरण की सुरक्षा तथा परिस्थितिकी तंत्र के सन्तुलन को बनाए रखने के लिए वर्तमान में इसके अध्ययन का क्षेत्र विस्तृत किया गया ताकि प्राकृतिक विज्ञान के साथ साथ प्राकृतिक उपक्रमों एवं मानवीय क्रियाकलापों का अध्ययन भी किया जा सके।

पर्यावरण शिक्षा से जुडे कुछ प्रमुख विषय निम्न प्रकार है :–

1. वनस्पति विज्ञान
2. प्राणी विज्ञान
3. रसायन शास्त्र
4. भौतिक शास्त्र
5. मौसम विज्ञान
6. भूगोल
7. अन्तरिक्ष विज्ञान
8. अर्थशास्त्र
9. प्रबन्धन
10. समाजशास्त्र
11. सूक्ष्मजीव विज्ञान
12. जैव तकनीकी
13. अन्य
14. विधि

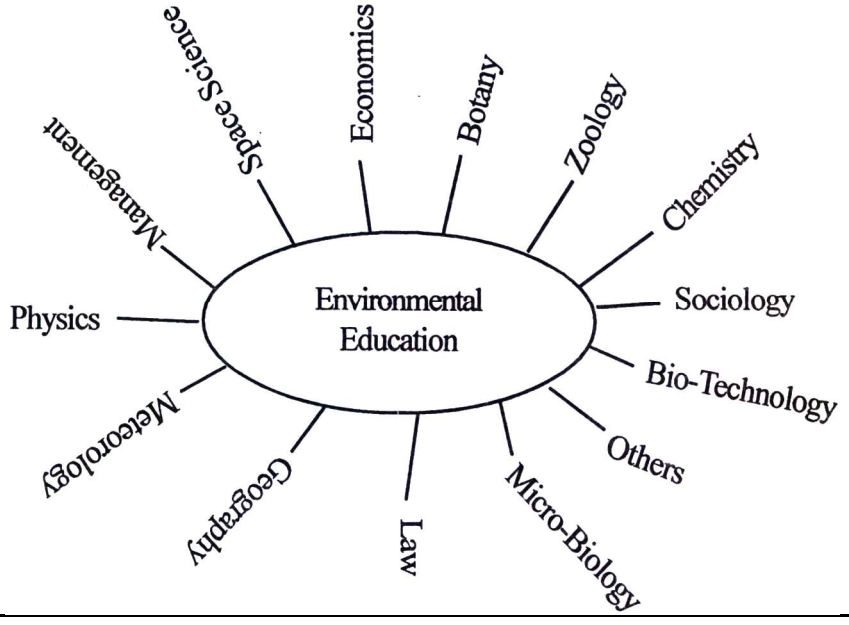

10.5 वनस्पति विज्ञान :–

समस्त पेड़ पौधों का अध्ययन वनस्पति विज्ञान में किया जाता है जो कि पर्यावरण में उत्पादक (Producers) की भूमिका निभाते हैं। पर्यावरण के अन्य सभी उपभोक्ता जीव इन्हीं वनस्पतियों पर निर्भर होते हैं। ये वनस्पतियाँ ही पर्यावरण के अकार्बनिक घटकों को कार्बनिक

घटकों में परिवर्तित करती हैं, जिससे अन्य जीवों को भोजन प्राप्त होता है। साथ ही साथ ये वनस्पतियाँ पर्यावरण से कार्बन डाईआक्साइड (CO_2) लेकर प्राणवायु ऑक्सीजन (O_2) प्रदान करती हैं। अत: वनस्पति विज्ञान की जानकारी के बिना पर्यावरणीय अध्ययन सम्भव नहीं है।

10.6 प्राणी विज्ञान:–

समस्त जन्तु पर्यावरण के महत्वपूर्ण अंग हैं, ये उपभोक्ता के लिए वनस्पतियों व अन्य जन्तुओं का भक्षण करते हैं। ये अपनी क्रियाओं द्वारा अनेक प्रकार से पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। पर्यावरण पर ये प्रभाव सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रकार का हो सकता है अत: पर्यावरण पर जीवों के प्रभाव को जानने के लिए प्राणी शास्त्र की जानकारी आवश्यक है।

10.7 रसायन शास्त्र:–

पर्यावरण के घटकों के रासायनिक संघटन को समझने, प्रदूषक पदार्थों कि प्रकृति ,उसकी आपस में रासायनिक अभिक्रियाओं तथा प्रदूषकों द्वारा होने वाली क्षति व उनके निवारण को समझने के लिए पर्यावरण के क्षेत्र में रसायन शास्त्रियों की भी आवश्यकता है। पर्यावरण में नुकसान से रचाने वाले रसायनों की जानकारी देने वाली केमिस्ट्री को ग्रीन केमिस्ट्री कहा गया है।

10.8 भौतिक शास्त्र :–

भौतिक कारक ताप, प्रकाश आदि किसी स्थान के पर्यावरण तथा वहाँ के जीवों को प्रभावित करता है। अत: इसे समझने के लिए भौतिकी की 'जानकारी भी आवश्यक है। साथ ही किसी भी तंत्र में ऊर्जा के स्त्रोत, उसके अंर्तप्रवाह, वर्हिप्रवाह, प्रवाह की मात्रा तथा प्रवाह की दिशा ज्ञात करने के लिए भी भौतिकी की जानकारी आवश्यक है।

10.9 मौसम विज्ञान:–

मौसम सम्बन्धी अनेक कारक जैसे तापमान, दाव, पवन, वर्षा, हिमपात, ओलावृष्टि, पाला पढ़ना भी पर्यावरण व उसके जैविक घटकों को प्रभावित करते हैं जलवायु परिवर्तन के कारण आज अनेकों समस्याऐं हमारे सामने हैं जिन्हें समझने तथा उनके निवारण हेतु मौसम विज्ञान की जानकारी अपेक्षित

10.10 भूगोल:–

भौगोलिक परिस्थितियों का वहाँ के जीवों पर प्रभाव पड़ता है जैसे रेगिस्तान, पहाड़ों, नदियों, मैदानों में उगने वाली वनस्पतियाँ वही की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप अलग–अलग प्रकार की होती हैं। भिन्न –भिन्न भौगोलिक परिस्थितियों में रहने वाले जीव समान जाति के होते हुए भी कुछ अन्तर लिए होते हैं, जैसे अफ्रीका के नीग्रो, अमेरिकी मूल के स्वेट लोगों की तुलना के बहुत काले होते हैं, पहाड़ी क्षेत्रों के मनुष्य मैदानी क्षेत्रों के मनुष्यों की तुलना में कद में छोटे होते है। अत: भौगोलिक परिस्थितियाँ जीवों को काफी प्रभावित करती है, अत: इन प्रभावों को समझने के लिए भूगोल का अध्ययन भी आवश्यक है।

बोध प्रश्न-1

1. जीवों (Organism)का पर्यावरण पर तथा पर्यावरण का जीवों पर प्रभाव पड़ता है।" आप इस वाक्य से कहाँ तक सहमत हैं और क्यों?
2. टिप्पणी लिखिए।
   (अ) भौगोलिक तथा पर्यावरण।
   (ब)मौसम विज्ञान मे पर्यावरण की भूमिका।
   (स)पर्यावरण का विषय क्षेत्र।
3. रसायन शास्त्र तथा पर्यावरण के अंतर्सम्बन्ध पर प्रकाश डालिए।

10.11 अन्तरिक्ष विज्ञान :–

पृथ्वी के चारों ओर उपस्थित वातावरण तथा अन्तरिक्ष में होने वाली विभिन्न गतिविधियाँ भी हमारे पर्यावरण को प्रभावित करती है। अन्तरिक्ष में भ्रमण करती उल्काओं तथा अन्य ग्रहों का पृथ्वी पर प्रभाव, वायुमणड़ल की ओजोन परत में बढता छिद्र, अन्तरिक्ष में एकत्र हो रहा मलवा भी पर्यावरणविद्व की चिन्ता का विषय है। इनका निवारण ढूंढने के लिए अन्तरिक्ष विज्ञान की जानकारी भी आवश्यक है।

10.12 अर्थशास्त्र :–

सुनने मे ऐसा लगता है कि अर्थशास्त्र तथा पर्यावरण मे क्या सम्बंध है, परंतु विगत कुछ वर्षों से पर्यावरण की जनचेतना के कारण अर्थशास्त्र में भी पर्यावरण अध्ययन की उपादेयता दृष्टिगोचर होने लगी है। आज उपभोक्ता उन उत्पादों को खरीदना पसंद करते हैं जो पर्यावरण को नुकसान न पहुंचाऐ ऐसे उत्पादों को इकोफ्रेन्ड्ली प्रोडक्टस (Ecofriendly Production) या ग्रीन प्रोडक्टस (Green Production) कहते हैं। कई देश केवल ऐसे उत्पादों का ही आयात करते हैं जैसा कि हम जानते हैं कि किसी देश की अर्थव्यवस्था अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से सुदृढ़ होती है। ऐसे में अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में व्यापार तभी संभव हैं जब उत्पाद पर्यावरण को नुकसान न पहुंचाऐं साथ ही ऐसे उत्पाद बनाने में कम से कम खर्चा आए इनके लिए अर्थशास्त्र का अध्ययन भी आवश्यक है।

10.13 प्रबन्धन :–

दिन प्रतिदिन अवनयित होते वन (forest) नम प्रदेश (Wetlands) जलाशयों (Reservior) आदि को अवनयन से बचाना तथा उनका सुस्थिर (Sustainable) प्रबन्ध करने के लिए प्रबन्धन का ज्ञान भी आवश्यक है। साथ ही विकास की दौड़ में उद्योग, बांध, सड़कें आदि पर्यावरण को प्रभावित करते है। प्रत्येक विकासात्मक गतिविधि का एक विनाशात्मक पहलु भी होता है अत: इस बिनाशात्मक पहलु के प्रभावों को समाप्त या कम करने के लिए विशेष प्रबन्ध की आवश्यकता होती है। अत: एक पर्यावरण शास्त्री को प्रबन्धन का ही ज्ञान होना चाहिए।

बोध प्रश्न-2

1. प्रबन्धन के क्षेत्र मे पर्यावरण की उपयोगिता पर टिप्पणी लिखिए।
2. इकोफ्रेंडली प्रॉडक्ट्स क्या हैं?
3. टिप्पणी लिखिए-
   (अ) सुस्थिर प्रबंधन
   (ब) ओज़ोन परत की उपयोगिता
   (स) अर्थशास्त्र और पर्यावरण

10.14 समाज शास्त्र:–

प्रवृति का दोहन व शोषण मनुष्य करता है। मनुष्य ऐसा सिर्फ मूलभूत आवश्यकताओं के कारण ही नहीं करता है वरन अलग–अलग समाजों में प्रवृति से सम्बंध की अलग–अलग परम्परायें हैं। जैसे बढता शहरीकरण भी पर्यावरण पर प्रभाव डालता है। शहरों को बड़ी मात्रा में आवश्यक संसाधन चाहिए होते हैं तथा दे भारी मात्रा में व्यर्थ पदार्थ या अपशिष्ट उत्पन्न करते हैं। इसके अतिरिक्त धार्मिक रीति रिवाजों के कारण अलग–अलग समाज अलग अलग तरीके से पर्यावरण को प्रभावित करता है। बढ़ती जनसंख्या तथा विलासितावादी सामाजिक परिवेष में पर्यावरण पर काफी दबाव पड़ रहा है। इसे समझने तथा उचित निवारण के लिए समाजशास्त्रीय अध्ययन भी आवश्यक है।

10.15 सूक्ष्मजीव विज्ञान :–

जिस प्रकार पर्यावरण मे मौजूद बड़े जीव पर्यावरण को प्रभावित करते है उसी प्रकार सूक्ष्मजीव भी पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। वृषों तथा जीवों के मरने के बाद ये सूक्ष्म जीव ही अपघटन क्रिया द्वारा पोषक तत्वों को पुन: मृदा में पहुंचाते हैं। सूक्ष्मजीव लाभदायक तथा हानिकारक दोनों प्रकार के होते हैं जैसे कई सूक्ष्मजीव मृदा की उर्वरकता को बढ़ाते हैं जिससे पैदावार अच्छी होती है जबकि हानिकारक सूक्ष्मजीव फसलों को रोगग्रस्त कर पैदावार कम करते हैं। प्राय: सभी जैव–भू–रासायनिक चक्र (Bio–Geo–Chemical) में सूक्ष्म जीवों की अहम भूमिका होती है। इसे समझने के लिए सूक्ष्मजीव विज्ञान की जानकारी भी आवश्यक है।

10.16 जैव तकनीकी:–

यह तकनीक पर्यावरण में मौजूद प्रदूषकों को समाप्त करने में भूमिका निभा रही है। साथ ही इससे ऐसे जैव–उर्वरकों का निर्माण किया जा रहा है जो कि रसायन उर्वरकों की तरह मृदा को नुकसान नहीं पहुंचाते हैं वरन प्राकृतिक रूप से मृदा की उर्वरकता बढ़ाते हैं। साथ ही इस तकनीक द्वारा कई जैव पीड़क नाषी (Bio–Pesticides) बनाए गए हैं जो पर्यावरण को नुकसान पहुंचाये बिना पीड़को को समाप्त करते हैं। अत: एक पर्यावरणविद को जैव–तकनीकी का जानकारी भी आवश्यक है।

10.17 विधि:–

तेजी से बढते पर्यावरण प्रदूषण को देखते हुए भारत सरकार ने कई पर्यावरणीय मानवण्ड (Environmental Standard) बनाए हैं इन मानदण्डों की पालना के लिए कानून मे

शक्तियाँ निहित कर कई अधिनियम पारित किए । न्यायालय में पर्यावरणीय मुकदमों के लिए ग्रीन बेंच (Green bench) का निर्माण भी किया गया है जिसमें पर्यावरणविद्व वकील (Environmental Lawyers) समिलित होते हैं अत: पर्यावरण के रक्षा सम्बन्धी नियमों के निर्माण और अनुपालना हेतु समस्त अधिनियमों तथा विधि (Act and Laws) की जानकारी भी अपेक्षित है।

10.18 अन्य: –

अनेक अन्य विधाऐं जैसे कृषि (Agricultural) मृदा विज्ञान (Pedology)भूगर्भ शास्त्र (Geology), अभियान्त्रिकी (Engineering) अनुसंधान एवं प्रयोग (Researche and Experiments) जनसंख्या विज्ञान (Demography) आदि से भी पर्यावरण का समय है।

10.19 सारांश :–

इस प्रकार कहा जा सकता है कि पर्यावरण अध्ययन एक विविध विषयी क्षेत्र है अत: पर्यावरण के ज्ञान की विविध क्षेत्रों में उपादेयता है यही कारण है कि हमें आज केन्द्रीय व राज्य के स्तर पर प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, एन्वायरमेन्टल इन्जिनियीरंग के पाठ्यक्रम उपलब्ध कराते संस्थान, यूरो–I, यूरो–II, या भारत–I व II, वाहन, सर्कसों में जानवरों के प्रदर्शन पर निषेध, प्रयोगशालाओं में विच्छेदन पर रोक, बड़े बांधों के निर्माण का विरोध आदि देखने को मिलता है।

10.20 स्व मूल्यांकन प्रश्न

1. टिप्पणी लिखिए :–

(अ) शहरीकरण और पर्यावरण अध्ययन।

(ब) पर्यावरण के क्षेत्र में कानून की आवश्यकता।

(स) समाजशास्त्र और पर्यावरण अध्ययन।

2. जैव–तकनीक का पर्यावरण में योगदान का वर्णन कीजिए।
3. केवल लेखाचित्र द्वारा पर्यावरण अध्ययन की विविध विषयी प्रकृति को दर्शाइए।
4. पर्यावरण की विविध विषयी प्रकृति का वर्णन कीजिए।

10.21 संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Sharma R.C.:Environmental Education; Metropolitan Book Company Pvt.Ltd.New Delhi.
2. UNESCO:1975 The International Workshop on Environmental Education (final report)
3. पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण विश्वकोष – प्रिय रंजन त्रिवेदी
4. पर्यावरण अध्ययन - डॉ0 ललित झा
5. पर्यावरण अध्ययन - डॉ0 रामकुमार गुर्जर, डॉ0 बी सी जाट

इकाई –11

Environmental Education as a Subject ,It's Curriculum at different level

पर्यावरणीय शिक्षा एक विषय के रूप में, विभिन्न स्तर पर इसका पाठयक्रम

इकाई की रूपरेखा –

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 पर्यावरण शिक्षा के पाठ्यक्रम में सम्मिलित विषय
बोध प्रश्न–।

11.4 पर्यावरण शिक्षा के विभिन्न स्तर पर पाठ्यक्रम

11.5 पूर्व प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम
बोध प्रश्न–2

11.6 प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम

11.7 उच्च प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम

11.8 माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम

11.9 सारांश

11.10 स्व मूल्यांकन प्रश्न

11.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

11.1 उद्देश्य:–

इस इकाई को पढ़कर आप जान सकेंगे कि –

1. पर्यावरण शिक्षा देश में उत्पन्न सभी समस्याओं का निदान है।
2. इस शिक्षा द्वारा हम पर्यावरण चेतना व जनमत तैयार कर सकते है।
3. विभिन्न स्तर पर पर्यावरण पाठ्यक्रम किस प्रकार का होना चाहिए।
4. पूर्व प्राथमिक व प्राथमिक स्तर के छात्रों को पर्यावरण का ज्ञान अनौपचारिक तरीकों से दिया जाना चाहिए।
5. पर्यावरण शिक्षा में किन–किन विषय वस्तु का समावेश किया जाना चाहिए।

11.2 प्रस्तावना:–

वर्तमान में पर्यावरण से संबंधित सभी समस्याओं को दूर करने के लिए पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता सभी देशों द्वारा महसूस की जा रही है। विश्व में पर्यावरण संकट से उसने के लिए पर्यावरण जागरूकता अति आवश्यक है जन साधारण को पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से ही जागरूक किया जा सकता है।

आज पर्यावरण प्रदूषण की समस्या सबसे गंभीर व समसामयिक समस्या है। सन् 1970 के पश्चात् इस समस्या से निजात पाने हेतु पर्यावरण शिक्षा को एक पृथक विषय के रूप में प्रत्येक स्तर पर पढ़ना आवश्यक माना गया। पर्यावरण का क्षेत्र बहुत व्यापक है इसलिये इस बात पर गहन चिंतन, मनन व विश्लेषण करना होगा कि बालकों के स्तरानुकूल पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय व उद्देश्यों का निर्धारण किया जाय तथा बालको की बुद्धि योग्यता व क्षमता का ध्यान रखा जाये बाल केन्द्रित विधियों व करने–सीखने, जीवन द्वारा सीखने, सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर व्यवहारिक जानकारियों पर बल दिया जाये, तभी हम अपने देश के बालको को पर्यावरण के प्रति सचेत व जागरूक बना सकेंगे।

सदियों से मानव प्रकृति के पीछे हाथ धोकर पडा हुआ है, वह बिना सोचे पेड काट रहा है, पशु पक्षियों को मारकर खा रहा है, मिट्टी खोदकर गढ्ढे कर रहा है वह यह नही सोच रहा कि ऐसा करने से वह अपने ही पैरों पर कुल्हाडी मार रहा है क्योंकि जब पेड व वन न रहेंगे तो वर्षा नही होगी पानी और नीचे चला जायेगा हवा में विषैले तत्व आ जायेंगे।

पर्यावरण शिक्षा समाज के धरातत्व पर उत्पन्न सभी समस्याओं का निदान है पर्यावरण शिक्षा द्वारा ही हम पर्यावरण के प्रति संवेदनशील राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय जनमत तैयार कर सकते है और पर्यावरणीय समस्याओं को सुलझाने का कौशल अर्जित कर सकते है।

11.3 पर्यावरण शिक्षा के पाठयक्रम में सम्मिलित विषय :–

पर्यावरण शिक्षा के पाठ्यक्रम में निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

1.	मनुष्य और उसका परिवेश	2.	जनसंख्या तथा प्रभाव
3.	सामाजिक संसाधन	4.	परिस्थितिकी
5.	पर्यावरण और आर्थिक स्थिति	6..	प्रदूषण जल, वायु उर्जा, ध्वनि
7	आदर्श नागरिक के रूप में कर्तव्य	8	प्रकृति व पर्यावरण
9	शिक्षा व पर्यावरण से सहसंबंध	10.	विभिन्न समस्याएँ और समाधान ।

जनसंख्या वृद्धि, गरीबी, निरक्षरता बेरोजगारी, वातावरणीय प्रदूषण की समस्या एक दूसरे से जुडी समस्या है यह सभी मनुष्यों द्वारा निर्मित है और मनुष्य को ही इनका हल भी खोजना है, अन्यथा इसके दुष्परिणाम भी हमें व हमारी आगे आने वाली संतति को भोगने है हमारी शिक्षा ववस्था में जर तक इन बिन्दुओं को शामिल नही क्रिया जायेगा। तब तक हमारी शिक्षा अधूरी रहेगी। अब प्रश्न यह उठता है कि इसका पाठ्यक्रम क्या हो। क्या पर्यावरण शिक्षा को पृथक विषय के रूप में पढ़ाया जाना अनिवार्य है?

हमारे देश में पर्यावरण शिक्षा का क्षेत्र भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, प्राकृतिक परिवेश तक काफी विस्तृत फैला हुआ है। इसे छात्रों की आयु योग्यता, क्षमता से जोडना होगा और तदनुसार विषय क्षेत्र तय करने होगे। बालक ज्यों ज्यों सीखने का उत्सुक होता चलता है उसका विषय क्षेत्र उसी भांति फैलता चला जाता है अत: इसे पृथक विषय के रूप में पढना ही उचित होगा।

बोध प्रश्न-1

1. पर्यावरण शिक्षा द्वारा.....जनमत तैयार कर सकते है।
2. जब पेड़ व वन नहीं होंगे तो .....
3. जग साधारण को .....के द्वारा जागरूक बनाया जा सकता है।
4. सन.....के पश्चात पर्यावरण शिक्षा को एक विषय के रूप मे पढ़ना तय हुआ

11.4 पर्यावरण शिक्षा के विभिन्न स्तर पर पाठ्यक्रम:–

पर्यावरण शिक्षा में पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम तय करने होगे। इन स्तर पर उन सभी बातों का समावेश करना होगा। जो एक स्वयं व सच्चे नागरिक के लिये भावी जीवन में उपयोगी हो यह शिक्षा हमें शैशवकाल से ही आरम्भ करनी होगी जोकि माता–पिता, भाई–बहिन परिवार के बड़े बुजुर्गों द्वारा सुलभ हो सकती है।

11.5 पूर्व प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम:–

उद्देश्य :–

1. बालक के आस पास के वातावरण से सामान्य परिचय करना।
2. घर, कमरा, अंधेरा, उजाला, धूप, छाँव, गंदा व साफ आदि से परिचय करना।
3. पालतू जानवरों गाय, बैल, घोडा आदि का सामान्य ज्ञान देना व उपयोग बताना।
4. विभिन्न पेड पौधों, कीटो, पतंगों, नदी, तालाब, कुएँ वर्षा का निरीक्षण व परिचय करना।
5. दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुओं का ज्ञान देना।
6. हमारी प्रकृति से संबंध का परिचय करना।

पाठ्यक्रम :–

1. मेरा घर व परिवार
2. पालतू जानवर गाय कुत्ता बिल्ली घोडा की पहचान।
3. दैनिक जीवन में काम आने वाली वस्तुओं की पहचान।
4. कीटों पंतगों तितलियों का सामान्य ज्ञान।
5. विविध पेड पौधे फूल पत्ती का निरीक्षण व पहचान।
6. नदी, तालाब, कुएँ, वर्षा के जल का अवलोकन।

बोध प्रश्न-2

1. पर्यावरण शिक्षा को पृथक विषय के रूप में पढ़ाया जाना क्यों आवश्यक है।
2. पर्यावरण शिक्षा के किन-किन विषयों को जोड़ना आवश्यक है।
3. पर्यावरण शिक्षा पाठ्यक्रम हमें छात्रों की किन-किन बातों को देखना होगा।
4. पूर्व प्राथमिक स्तर पर बालकों को कैसे पर्यावरणीय शिक्षा दे।

11.6 प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा का पाठयक्रम :–

उद्देश्य: –

1. बालकों को हमारा वातावरण, पृथ्वी, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, जल का सामान्य परिचय करना।
2. बालकों को जल, वायु प्रदूषण का सामान्य ज्ञान देना।
3. बालकों को पशु पक्षी पेड पौधे तथा मानव से संबंध बनाना।
4. बालकों को स्वास्थ्य शिक्षा की सामान्य जानकारी देना।
5. उपयोगी वस्तुओं के रखरखाव की जानकारी देना।

पाठ्यक्रम :–

1. हमारा गाँव, हमारा नगर, हमारा राजस्थान
2. हमारा पर्यावरण (पृथ्वी, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, तारे, जल) का परिचय
3. हमारा विद्यालय
4. पशु पक्षी, पेड पौधे व वन, फसलें तथा मानव जीवन से संबंध।
5. जल प्रदूषण वायुप्रदूषण के कुप्रभाव
6. शुद्ध भोजन व जल
7. सामान्य बीमारियों की जानकारी व उनसे बचाव
8. भ्रमण व पर्यटन
9. चित्र बनाना व रंग मरना
10. सजीव व निर्जीव में अन्तर
11. मौसम की जानकारी

प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा की विषय वस्तु को अनौपचारिक शिक्षण से देना चाहिए इस आयु के बच्चे पढ़ने के बजाय देखने, भ्रमण पर जाने, खेल द्वारा सीखने, सामूहिक कार्यक्रमों में भाग लेकर अप्रत्यक्ष रूप से जानकर सीखते है।

इस स्तर की पाठ्यपुस्तकों में प्रत्येक प्रकरण निम्न भागों में विभक्त होना चाहिए।

1. देखों और पहचानों 2. स्वयं क्रियाएँ करें
3. आओ पता लगाएँ 4. हमने क्या सीखा 5.प्रश्न (पहचान प्रकार के)

11.7 उच्च प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम :–

उद्देश्य –

1. छात्रों को पर्यावरण प्रदूषण की जानकारी देना।
2. प्रदूषण की रोकथाम हेतु उपाय समझाना।
3. मानवीय परिवेश व भौतिक संसाधनों की समझ पैदा करना।
4. पेड पौधे जीवन जन्तु का पर्यावरण से संबंध वताना।
5. स्वच्छ पर्यावरण दृष्टिकोण विकसित करना।

पाठ्यक्रम :–

1. जलमंडल, वायुमंडल, जीवमंडल की संरचना।
2. जल, वायु उर्जा, ध्वनि का प्रदूषण तथा उनकी रोकथाम
3. जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणाम
4. भूमि संरक्षण व उनके दुष्परिणाम
5. वन्य जीव संरक्षण व वन संरक्षण की आवश्यकता

6. विलुप्त जीव जन्तुओं की विलुप्त जातियाँ उनकी उपयोगिता।
7. औद्योगीकरण से उत्पन समस्याएँ व उनकी रोकथाम।
8. ऊर्जा के विविध रूप, सौर ऊर्जा (रेडियोधर्मी, गैस, तेल, रासायनिक एंव जैविक प्रदूषण)
9. प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा
10. विद्यालय स्तर पर पर्यावरणीय प्रदर्शनी, नाटकों, कविताओं, गीत, नशा व तंबाकू विरोधी पोस्टर चित्र तैयार कर, पहेलियों को तैयार कर जन चेतना जागत करना
11. घर, गाँव, समाज, राष्ट्र व अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संचेतना
12. पर्यावरणीय नैतिकता, महिला एवं बाल कल्याण

11.8 माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम :–

उद्देश्य :–

1. पर्यावरण ज्ञान को वास्तविक जीवन से जोडना।
2. छात्रों मैं पर्यावरण जागरूकता का विकास करना।
3. छात्रों को परिस्थितिकी तंत्र, पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण का स्वास्थ्य पर प्रभाव की विस्तृत जानकारी देना ।
4. पर्यावरण को शुद्ध बनाने हेतु प्रभावकारी उपाय खोजने की क्षमता विकसित करना।
5. पर्यावरण के प्रति उत्तरदायित्व की प्रवृत्ति का विकास करना।

पाठ्यक्रम –

1. परिस्थितिकी संतुलन का प्रत्यय
2. जैविक व अजैविक घटक
3. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण
4. फसलें व इन्हें प्रभावित करने वाले कारक
5. कृषि क्रियाएँ, पशु पालन, नस्ल सुधार की विधियाँ
6. मानवीय जनन अंग, जनन
7. भारत में जनसंख्या समस्या
8. संक्रामक रोग, कुपोषण, अल्प पोषण के कारण होने वाले रोग
9. पर्यावरण तकनीकी
10. पर्यावरण संबंधी पत्र पत्रिकाओं की जानकारी वैज्ञानिकों की जीवनियाँ व उनका योगदान
11. पर्यावरण संबंधी सामग्री का रख रखाव उपकरणों को प्रयोग में लेना आशुरचित उपकरणों का निर्माण चार्ट मोडल तैयार करना, दुर्घटनाओ के बचाव, प्राथमिक उपचार, पर्यावरण क्लब, संग्रहालय पुस्तकालय की व्यवस्था, दृश्य श्रव्य साधनों व टेपरिकार्डर, रेडियों, टीवी. और फिल्म प्रोजेक्टर, फिल्म स्ट्रिप, द्वारा पर्यावरण चेतना जाग्रत करना।
12. अपशिष्ट उत्पत्ति एवं प्रबंधन
13. अनुकूलन तथा उद्विकास
14. पर्यावरण सुरक्षा केन्द्र हमारा कानून व दण्ड विधान
15. पर्यावरण शिक्षा का अन्य विषयों से सहसंबंध
16. पर्यावरणीय मूल्य

11.9 सारांश :–

1. विश्व में पर्यावरण संकट से उबरने के लिये पर्यावरणीय जागरूकता अति आवश्यक है जन साधारण को पर्यावरण शिक्षा द्वारा ही जागरूक बनाया जा सकता है।
2. पर्यावरण का क्षेत्र बहुत व्यापक है इसलिये इसे पृथक विषय के रूप में हर स्तर पर बालकों को शिक्षित करने हेतु पाठ्यक्रम तैयार करना आवश्यक है।
3. पर्यावरण पाठ्यक्रम में हमारा परिवेश, जनसंख्या वृद्धि, गरीबी, निरक्षरता, प्रदूषण, प्रकृति से मनुष्य का संबंध आदि प्रकरणों को शामिल करना होगा ।
4. पूर्व प्राथमिक व प्राथमिक स्तर पर विषयवस्तुओं को अनौपचारिक माध्यम देना उपयोगी होगा। इस स्तर के बालक पढ़ने के बजाय देखने भ्रमण पर जाने सामूहिक कार्यक्रम में भाग लेने से जल्दी सीखते है।
5. उच्च प्राथमिक स्तर के बालकों के पाठ्यक्रम हेतु जल, वायु जीवमंडल की संरचना प्रदूषण व उसके दुष्परिणाम, जीवजन्तु पेड–पौधे, सौर उर्जा प्राकृतिक संसाधनो. जन चेतना हेतु प्रदर्शनी, नाटक, कविता गति, पहेलियाँ आदि को तैयार करना व प्रस्तुती देना।
6. माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर छात्रों के समझ का स्तर बढ जाता है वह अपने स्वयं के हित के अतिरिक्त सामाजिक संबंधों, मूल्यों, मानव कत्याण तथा देशहित के कार्यो में रूचि लेने लगते है अतः इस स्तर पर जटिल विषयवस्तु से उनकों परिचित कराया का सकता है। जैसे प्रदूषण को रोकने के उपाय, भूमिसंरक्षण, वन्यजीव संरक्षण, अपशिष्ट का निस्तारण, हमारा कानून व दण्ड विधान आदि।

11.10 स्व मूल्यांकन प्रश्न :–

1. पूर्व प्राथमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के मुख्य अंग कौन कौन से हैं?
2. पूर्व प्राथमिक स्तर पर पाठ्यक्रम निर्धारण का पहला उद्देश्य क्या है?
3. पूर्व प्राथमिक स्तर पर बालको को प्रकृति से कैसे परिचित कराया जा सकता है?
4. प्राथमिक स्तर पर पाठ्यक्रम निर्धारण का पहला उद्देश्य क्या है? उच्च प्राथमिक स्तर पर पाठ्यक्रम निर्धारण का प्रथम उद्देश्य क्या है?
5. माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर पर्यावरण के प्रति उत्तरदायित्व प्रकृति का विकास करने हेतु पाठ्यक्रम के किस प्रकार की विषय वस्तु शामिल की जानी चाहिये।

11.11 संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

1. डा. एम. के. गोयल विनोद पुस्तक मंदिर आगरा 2005
2. Environmental Education Sharma R.C.New Delhi Metropolitan Boor co Pvt Ltd1986
3. Environmental Education Saxena A.B.Agra (India) National Psychological Corporation 1986
4. Environmental Management pandey GN.New Delhi Vikash Publishing House Pvt.Ltd.1997
5. पर्यावरण चिंतन डा.एम.पी. गुप्ता राज. विज्ञान शि. परिषद राज. 2006

इकाई–12

APPROACHES OF ENVIRONMENT EDUCATION

पर्यावरण शिक्षा के उपागम

इकाई की रूपरेखा :–

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 पर्यटन एवं क्षेत्र–भ्रमण

12.3.1 पर्यटन के उद्देश्य

12.3.2 उपयुक्त स्थान का चयन

12.3.3 सावधानियाँ

12.3.4 पर्यटन की तैय्यारी

12.3.5 अध्यापक का दायित्व

12.3.6 प्रतिवेदन लेखन

12.4 खेल

12.4.1 खेल की विशेषताएँ

12.4.2 सावधानियाँ

12.4.3 सीमाएँ

बोध प्रश्न–1

12.5 अनुरूपण

12.6 कठपुतली

12.7 पारिस्थितिक क्लब

12.7.1 क्लब गठन के उद्देश्य

12.7.2 क्लब का संगठन

12.7.3 क्लब की कार्य विधि

12.7.4 रेकार्ड एवं प्रतिवेदन

बोध प्रश्न–2

12.8 पारिस्थितिकी प्रयोगशाला

12.9 पुस्तकालय एवं प्रकाशन

12.10 सारांश

12.11 स्व मूल्यांकन प्रश्न

12.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

12.1 उद्देश्य:–

इस इकाई की समाप्ति पर आप –

1. पर्यावरण शिक्षा की शिक्षण विधियों एवं शिक्षण उपागमों में भेद समझ सकेंगे।
2. पर्यावरण शिक्षा के विभिन्न उपागमों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

3. पर्यावरण शिक्षा के विभिन्न उपागमों की परस्पर तुलना कर सकेंगे।
4. विभिन्न उपागमों की विशेषताओं एवं सीमाओं से अवगत हो सकेंगे।
5. विषय वस्तु छात्रों के मानसिक स्तर पर परिस्थितियों के अनुरूप उपागमों का चयन एवं उपयोग कर सकेगें।

12.2 प्रस्तावना : –

गत इकाई में हम पर्यावरण शिक्षा की औपचारिक शिक्षण विधियों के बारे में जान चुके हैं। इस इकाई में हम पर्यावरण शिक्षा की अनौपचारिक विधियों एवं अन्य उपागमों के बारे में जानकारी प्राप्त करेगें। पिछले कुछ वर्षों में सभी वर्गों के लोगों में पर्यावरण के बारे में जानने की उत्सुकता बढ़ी है। इस क्षेत्र में समाचार पत्र, आकाशवाणी व दूरदर्शन के माध्यम से पर्यावरण के बारे में लोगों की जागरूकता बढ़ी है। पर्यावरण शिक्षा का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक एवं बहुआयामी होने के कारण इसके प्रचार–प्रसार में अनौपचारिक विधियों व अन्य उपागमों की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। कक्षा–शिक्षण में छात्रों को सक्रियता के अवसर एवं वास्तविक अनुभव नही मिलने से वह ज्यादा स्थायी नही होता। पर्यावरण शिक्षा को प्रभावी ढंग से लागों तक पहुँचाने के उद्देश्य से कई उपागम काम में लिऐ जाते हैं। खेल, भ्रमण, कठपुतली प्रदर्शन आदि का प्रयोग रूचिकर होने के साथ–साथ ये शिक्षण के प्रभावशाली उपागम है।

12.3 पर्यटन एवं क्षेत्र–भ्रमण:–

प्रतिदिन एक जैसी दिनचर्या से विद्यार्थी ऊब जाते है। जब उन्हें विद्यालय अथवा कक्षा की चार– दीवारी से बाहर स्वच्छन्द रूप से भ्रमण के लिए ले जाया जाता है, तो वे आनन्दित हो उठते हैं। भ्रमण के अन्तर्गत जहाँ एक ओर प्रकृति के उन्मुक्त वातावरण में मनोरंजन करते हैं, वही वे सहज भाव से अनेक जीवनोपयोगी जानकारी भी अर्जित करते हैं। पर्यावरण का ज्ञान देने के लिए शैक्षिक पर्यटन एक प्रभावशाली माध्यम है। यह कक्षा से बाहर किया गया निरीक्षण है, जिसमें छात्र नियोजित ढंग से पूरे विश्व का अवलोकन कर सकता है। पियर्स एवं लार्बर के अनुसार, 'शैक्षिक पर्यटन का उद्देश्य बालक को कक्षा से बाहर वास्तविक विश्व का ज्ञान कराना है।"

12.3.1 पर्यटन के उद्देश्य :–

शैक्षिक पर्यटन से अनेक उद्देश्यों की पूर्ति होती है। पर्यटन द्वारा कक्षाध्यापन को बाह्य वातावरण से सम्बन्धित किया जाता है। इसके कतिपय उद्देश्य इस प्रकार हैं –

1. प्राकृतिक नियमों व वस्तुओं का स्वयं निरीक्षण करने का सहज अवसर प्रदान करना।
2. पाठ्य–वस्तुओं को स्वाभाविक रूप में देखने से स्थायी ज्ञान प्राप्त करना।
3. पर्यटन द्वारा विद्यार्थियों में प्रकृति को समझने की प्रेरणा का विकास करना।
4. पर्यटन के समय विद्यार्थी जो सामग्री एकत्रित करते हैं उससे पाठ्य–वस्तु को समझने में सहायता प्रदान करना।
5. जो बातें कक्षा में पाठ्य–पुस्तक के माध्यम से समझने में कठिन होती व उन्हें प्रकृति में स्वाभाविक रूप से देखकर आसानी से समझाना।
6. पर्यटन से पर्यावरण जागरूकता के साथ–साथ विद्यार्थी में सहयोग, सद्भाव आदि अन्य सामाजिक गुणों का विकास करना।

7. विद्यार्थियों की विश्लेषणालक क्षमता का विकास करना।
8. वैज्ञानिक सूचनाओं, तथ्यों एवं सिद्धान्तों को वास्तविक रूप से देखने के अवसर उपलब्ध होने से विद्यार्थी द्वारा समाज एवं पर्यावरण में सम्बन्ध स्थापित करना।

12.3.2 उपयुक्त स्थान का चयन :–

पर्यटन के लिए ऐसे स्थान का चयन क्रिया जाना चाहिए, जहाँ छात्रों को स्वाभाविक रूप से पर्यावरणीय वस्तुओं का अवलोक / निरीक्षण करने का अवसर मिले तथा छात्र वहाँ की कुछ वस्तुएं जैसे पंख, पत्ते, घोंसले, शंख, बीज आदि संकलित कर सकें। बांध, जन्तुआलय, रमणीय स्थान पर स्थित देवालय, उद्यान, फैक्ट्री, म्यूजियम आदि स्थानों का पर्यटन–स्थल के रूप में चयन किया जा सकता है।

12.3.3 सावधानियाँ :–

पर्यटन मात्र मनोरंजन ही नही है श्रत् एक अनिवार्य शैक्षिक कार्यक्रम है। पर्यटन को सफल बनाने के लिए निम्न सावधानियाँ बरतनी चाहिए–

1. पर्यटन से पूर्व विद्यालय के सक्षम अधिकारियों तथा छात्रों के अभिमावकों से लिखित अनुमति ले लेना चाहिए।
2. पर्यटन के लिए अनुमानित राशि की व्यवस्था करना प्राथमिक आवश्यकता है। पर्यटन के समय जलपान व खाने–पीने की उचित व्यवस्था करने से पर्यटन आनन्ददायी बनाते है।
3. पर्यटन स्थल की दूरी के हिसाब से सवारी की उचित व्यवस्था कर लेना चाहिए। अधिक दूरी के लिए बस की व्यवस्था की जानी चाहिए। – बस का बीमा करना भी छात्रों के हित में है।
4. पर्यटन स्थल के लिए यदि अनुमति आवश्यक हो तो पूर्व में अनुमति ले लेना चाहिए तथा वहाँ के अधिकारियों को आपके वहाँ पहुँचने की तिथि से सूचित कर देना चाहिए।

12.3.4 पर्यटन की तैय्यारी :–

पर्यटन की तैयारी जितनी योजनाबद्ध होगी, पर्यटन उतना ही आनन्ददायी तथा परिणामपरक होगा। पर्यटन का आयोजन नियोजित ढंग से विद्यार्थियों के सहयोग से किया जाना चाहिए। विद्यार्थियों के अलग–अलग दल बनाकर उनकी क्षमतानुसार कार्य उन्हें सोप देना चाहिए। पयर्टन प्रारम्म होने से पूर्व छात्रों को पर्यटन के उद्देश्य, पर्यटन सम्बन्धी कार्य तथा उन्हें क्या–क्या देखना है? क्या–क्या सीखना है? आदि बिन्दुओं के बारे में स्पष्ट निर्देश देना चाहिए। यह भी छात्रों को बता देना चाहिए कि उन्हें क्या–क्या सामान साथ लेना है। पर्यटन का कार्यक्रम तथा बढ़ती जाने वाली सावधानियों के बारे में भी छात्रों को अवगत कराया जाना चाहिए।

12.3.5 अध्यापक का दायित्व :–

पर्यटन की सफलता अथवा असफलता अध्यापक के दायित्व–वहन पर निर्भर करती है। जिस स्थान पर पर्यटन के लिये विद्यार्थियों को ले लाया जा रहा है, अध्यापक को उसकी जानकारी अवश्य होनी चाहिए। यदि स्थान नया है तो अध्यापक को वहाँ पहले जाकर आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए कि वहाँ किन–किन बातों का अध्ययन किया जा सकता है? किन यंत्रों एवं सामग्रियों की आवश्यकता पडेगी? किन–किन सावधानियों को ध्यान में रखना होगा? कितना समय लगेगा? आदि।

पर्यटन पर जाने से पूर्व अध्यापक को विद्यार्थियों एवं अन्य सामानों का निरीक्षण अवश्य करना चाहिए साथ ही लिस्ट बना कर उससे मिलान कर लेना चाहिए जिससे कोई आवश्यक सामान ले जाने से न रह जाये।

पर्यटन के समय अध्यापक का सक्रिय रहना आवश्यक है। उसे विद्यार्थियों को आवश्यक निर्देशन देते रहना चाहिए तथा उन्हें नोट करने का आदेश भी देना चाहिए। पर्यटन स्थल की नवीन बातों की जानकारी एवं उसकी विशेषताओं की जानकारी भी विद्यार्थियों को देना चाहिए साथ ही उन्हें सक्रिय रखना चाहिए।विद्यार्थियों से भी निरीक्षण सम्बंधी प्रश्न पूछने चाहिए जिससे अधिक स्पष्टता से बात समझ में आये । विद्यार्थियों की जिज्ञासा सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर देने चाहिए। पर्यटन में कुछ समय मनोरंजनार्थ भी होना चाहिए जिससे नीरसता एवं पर्यटन के सफर की थकान दूर की जा सके ।

12.3.8 प्रतिवेदन लेखन :–

पर्यटन का पूरा लाभ उठाने के लिए पर्यटन का स्थायी रेकार्ड बनाना आवश्यक है। इसके लिए पर्यटन के दौरान आप द्वारा देखे गये स्थान, प्रमुख घटनाएँ, सम्पर्क में आए खास–खास व्यक्तियों के नाम पते व उनके द्वारा बताई गई बातों को नोट बुक में लिखना चाहिए। यात्रा प्रारम्भ होने से लेकर वापिस घर आने तक का प्रतिवेदन तैयार किया जाना चाहिए। प्रतिवेदन में आप द्वारा सीखी गई बातों का विशेष रूप से उल्लेख आवश्यक है।

12.4 खेल :–

बालक खेल में रूचि लेते हैं। खेल बालकों की स्वाभाविक मनोरंजक किया है। खेल बालकों के शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक विकास के लिये आवश्यक है। बालकों को खेल विधि से पर्यावरण का ज्ञान दिया जा सकता है। खेल विधि द्वारा पर्यावरण बोध सरलता से हो सकता है। शिक्षाविद् कुक का कथन है कि खेल विधि 'द्वारा शिक्षा देने का लाभ यह होता है कि कठिन विषय भी सरल व सुगम लगने लगता है।

12.4.1 खेल की विशेषताएँ :–

1. इस विधि द्वारा बालक का शारीरिक. मानसिक, सामाजिक एवं नैतिक विकास होता है।
2. बालक ज्ञान का उपयोग जीवन की यथार्थ परिस्थितियों में करना सीखता है।
3. बालक स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करता है।

इस प्रकार पर्यावरण शिक्षा के लिए बालकों के स्तर के अनुसार यह सरल एवं उपयोगी विधि है। खेल को परिभाषित करते हुए स्टार्न ने कहा है कि जो कार्य स्वेच्छा से स्वतंत्र वातावरण में सम्पन्न किया जाये वही खेल है।

पर्यावरणीय खेलों के उदाहरण :–

खेल नं. 1 – मैं कौन हूँ?

विधि – खिलाड़ियों को एक गोल में बैठाएँ। एक छात्र को ऐच्छिक रूप से 'पर्यावरण दूत' के रूप में खडा करें तथा उसके पीछे (पीठ पर) पर्यावरण के किसी अवयव के चित्र वाला कार्ड पिन से इस प्रकार लगायें कि वह कार्ड पर बने चित्र को न देख सके। यदि कार्ड पर चित्र बनाना संभव न हो, तो उस अवयव का मोटे अक्षरों में नाम लिख दें। अब उस खिलाड़ी (पर्यावरण दूत) को गोले के अन्दर घूमने दिया जावे ताकि गोले में बैठे अन्य खिलाडियों, को कार्ड पर बना चित्र अथवा नाम दिखाई दे।

अब पर्यावरण दूत यह जानने का प्रयास करता है कि उसे पर्यावरण के किस अवयव का रोल दिया गया है। इस बारे में संकेत प्राप्त करने के उद्देश्य से वह गोले में बैठे खिलाडियों से क्रमश: प्रश्न पूछता है। प्रश्न इस प्रकार के होने चाहिये, जिनका उत्तर हां या नहीं में दिया जा सके। प्राप्त उत्तरों के आधार पर पर्यावरण दूत लक्ष्य के निकट पहुंचने का प्रयास करता है। उदाहरण के तौर पर निम्न प्रकार के प्रश्न पूछे जा सकते हैं –

1. क्या मैं स्तनधारी हूँ?
2. क्या मैं जल में रहता हूँ?
3. क्या मैं मांसाहारी हूँ?
4. क्या ये पालतू हूँ? आदि आदि ।

10 या 15 प्रश्नों की संख्या निर्धारित कर ली जाती है। यदि निर्धारित प्रश्नों के उत्तरी के आधार पर पर्यावरण दूत अपनी भूमिका होल) पहचान जाता है, तो वह विजयी होता है। अन्यथा वह बैठे हुए लोगों के समक्ष हार मान लेता है। और उसे सही उत्तर बता दिया जाता है।

खेल नं. 2 : आवास पहचानों -

विधि : सभी खिलाडियों को वृत्ताकार आकार में खडा करें। गोले से बाहर चारों कोनों पर चार प्रकार के आवास (यथा – नदी, शहर, जंगल व मृदा) चिन्हित करें।

प्रकृति के विभिन्न अवयवो (शेर, वृक्ष, मनुष्य, मछली, आदि) के नाम लिखे हुए एक–एक कार्ड प्रत्येक खिलाडी को वितरित करें। अब कोई वाद्य की धुन प्रारम्भ करें तथा इसके साथ ही प्रत्येक खिलाडी अपने से बांये वाले खिलाडी से कार्ड ले तथा उसे अपने से दायें वाले खिलाड़ी को देता चले। यह क्रम पुन बजने तक जारी रहता है। और धुन बंद होने पर अपने हाथ में रहे कार्ड को देखता है और दौड़कर अपने आवास पर पहुंचता है।

उक्त गतिविधि के बाद अध्यापक छात्रों की सहभागिता से निम्न बातों पर चर्चा करता है

(1) वह प्राणी आवास विशेष में क्यों रहता है?
(2) वह प्राणी आवास से क्या प्राप्त करता है?
(3) आवास एवं विभिन्न प्राणियों के अन्र्तसम्बंधों पर चर्चा करें ।
(4) आवास नष्ट हो जाने पर प्राणी / प्रजाति पर क्या असर पडता है?

12.4.2 सावधानियाँ :–

1. खेल एवं पाठ्य–सामग्री का समचय इस प्रकार होना चाहिए कि पाठ्य–सामग्री के उद्देश्य पूरे हो जायें।
2. खेल विधि में बालकों के शारीरिक एवं मानसिक स्तर का भी ध्यान रखना चाहिए।
3. खेल का चयन ऐसा हो जो पाठ्यक्रम एवं विषय के अतिरिक्त बालकों के दैनिक जीवन के लिये भी उपयोगी हो ।
4. किसी प्रकरण का शिक्षण करते समय बालकों को यथासम्भव स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए। खेल विधि में किसी प्रकार का वन्धन खेल विधि के उद्देश्यों को पूरा करने में असफल रहता है।

12.4.3 सीमाएँ :–

1. केवल कुछ ही प्रकरणों को खेल विधि से पढ़ाया जा सकता है।
2. खेल विधि की स्वतंत्रता का अर्थ स्वच्छन्दता से ले लिया जाता है जिससे उद्देश्यों की पूर्ति नहीं हो पाती है।

3. खेल विधि से पर्यावरण शिक्षा देने के लिये विशेष रूप से प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता होती है।
4. खेल विधि से पाठ्य–वस्तु पढ़ाते समय अनुशासन भंग होने की सम्माबना बनी रहती है।

बोध प्रश्न- 1

1. भ्रमण छात्रों को प्रकृति के निकट लाता है। कैसे? समझाइए।
2. तत्वक की स्वाभाविक मनोवृति के रूप में खेलों की शिक्षण में उपादेयता समझाइए।

12.5 अनुरूपण :–

यह पर्यावरण शिक्षण की प्रभावी विधि है। इसमें पर्यावरणीय क्रियाओं, समस्याओं तथा भविष्य की सम्मावनाओं को बडे ही जीवन्त एवं प्रभावी ढंग से प्रदर्शित किया जाता है जिसका प्रभाव विद्यार्थियों पर गइराई से पडता है। अनुरूपक गत्यात्मक एव चलनशील मॉडल्स होते हैं। इनके अन्तर्गत किसी वस्तु की प्रतिकृति (Model) को प्रस्तुत किया जाता है। इसके माध्यम से एक क्रमबद्ध तरीके से उसमें होने वाले विकासों को अभिवयक्त किया जाता है। ये महत्वपूर्ण वास्तविक जीवन गतिविधियों को प्रस्तुत करने हेतु विशेष रूप से तैयार किए जाते हैं। इनके माध्यम से बिना किसी बाधा, अतिरिक्त मूल्य एवं न्यूनतम समय में विद्यार्थी को वास्तविक स्थिति से परिचित कराया जाता है।

अनुरूपक विद्यार्थी को अनुभव प्रदान करते हैं, जिनके माध्यम से वह स्थिति को समझ सकता है। वायुयान के अनुरूपक मॉडल का प्रयोग पायलेटों को उडान का प्रशिक्षण देने के लिए किया जा सकता है। इसी प्रकार ताजमहल का मॉडल ताजमहल की संरचना तथा कतिपय ऐतिहासिक तथ्यों को समझाने के लिए किया जा सकता है। विद्यालय स्तर पर अनुरूपण स्थितियों के द्वारा कठिन परिस्थितियों में विद्यार्थियों में निर्णय क्षमता को बढ़ाने के लिए किया जा सकता है। सामाजिक प्रक्रियाओं के लिए कुछ अनुरूपक व खेल बनाए गए है। 'कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन कार्यक्रम' अनुरूपक आधारित अधिगम (Simulation Based Learning) व्यवस्था को अधिक प्रभावी बनाने में योगदान प्रदान करता है।

सूक्ष्म शिक्षण में भी अनुरूपण का ही प्रयोग होता है। एक ही वर्ग के छात्राध्यापक छात्र, शिक्षक एवं पर्यवेक्षक तीनों का कार्य सम्पन्न करते हैं और इस प्रकार कक्षा में मूल कक्षा की तरह वातावरण उत्पन्न हो जाता है। इस विधि में यह लाभ है कि जब छात्राध्यापक छात्र के रूप में कक्षा में बैठता है, तो उसे छात्रों की समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। एक छात्र अध्यापक से क्या उम्मीदें रखता है, इसकी पूर्ति वह स्वयं अध्यापन करते समय करता है। इस संरचना से शिक्षण सरल और चुनौतियों से रहित हो जाता है। आवश्यकता पढ़ने पर प्रक्रिया को बार–बार दोहराया जा सकता है।

12.6 कठपुतली:–

विश्व की समस्त कठपुतलियों का उद्गम स्थल भारत है। कठपुतलियाँ हमारे देश की प्राचीन लोक–कलाओं को विकसित करने तथा लोक गाथाओं को प्रदर्शित करने में अपनी विशिष्ट

भूमिका निभा रही है। ये कठपुतलियाँ लकड़ी, कुट्टी या कपडे की बनी होती है। इनका संचालन तार, धागे या हाथ से क्रिया जाता है।

हमारे देश में राजस्थान ही एक ऐसा राज्य है, जहाँ कठपुतलियाँ बनायी जाती है। इनके मध्यम से कथा–कहानियाँ, किवदँतियों व संस्मरणों का नाटक के रूप में प्रदर्शन किया जाता है। राजस्थान में इनका प्रचलन सर्वाधिक रहा है। यहाँ की भाट व नट जाति के लोग करतबों एवं इनके प्रदर्शन द्वारा ही रोजी–रोटी कमाते है। बालक व जनसाधारण इनके प्रदर्शन में अत्यधिक आनन्द की अनुभूति करते हैं।

कठपुतली निर्माण तथा इसके प्रदर्शन के प्रशिक्षण में भारतीय लोक कला मण्डल उदयपुर की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सिंहासन–बत्तीसी, पृथ्वीराज–संयोगिता, अमर सिंह राठौड, झांसी की रानी आदि के कथानक कठपुतलियों द्वारा अत्यन्त रोचकता के साथ प्रदर्शित किये जाते हैं। पर्यावरण शिक्षा में कठपुतली–प्रदर्शन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। बालकों में पर्यावरण के प्रति अनुराग पैदा करने हेतु खेजडूली (जोधपुर–राजस्थान) की अमृता देवी के बलिदान की सत्यकथा को मंचित करके वालको को पर्यावरण प्रेम से अभिभूत किया जा सकता है। पर्यावरण सम्बन्धित स्वरचित नाटकों का मंचन भी कठपुतलियों के माध्यम से किया जा सकता है।

12.7 पारिस्थितिक क्लब :–

"Eco–club is a voluntary group, which promotes the participation of students in learning about and improving their environment,"

पारिस्थितिकी क्लब के माध्यम से छात्र एवं युवा पर्यावरणीय पहलुओं के बारे में अपना ज्ञान बढ़ाते हैं तथा अपने कार्यकलापों द्वारा अपने चारों ओर के पर्यावरण को व्यवस्थित करते हैं। पारिस्थितिकी क्लब एक ऐसा माध्यम है, जो छात्रों में कक्षा की चार–दीवारी से अलग स्वतंत्र रूप से तथा स्वाभाविक परिस्थितियों में कार्य करने तथा अपनी उपलब्धियों को दूसरों के समुख प्रदर्शित करने का मंच प्रदान करता है। यह क्लब बालकों की शक्ति को उचित दिशा में विकास के अवसर प्रदान करने के साथ–साथ उनमें सामाजिकता का भी विकास करता है। क्लब में बालक श्स्मतदपदह इल कवपदहश के सिद्धान्त पर करके सीखता है। अत: यह ज्ञान स्थायी होता है।

12.7.1 क्लब गठन के उद्देश्य :–

पर्यावरण क्लब के गठन एवं कार्यकलापों के पीछे निम्न उद्देश्य निहित हैं –

1. पर्यावरण की नवीनतम जानकारी प्राप्त करना।
2. पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के प्रति सही निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना।
3. प्रकृति के प्रति सकारात्मक संचेतना का विकास करना।
4. देश की समसामयिक घटनाओं के प्रति संवेदनशीलता उत्पन्न करना।
5. जीव एवं वानस्पतिक संग्रहालय हेतु विभिन्न प्रादशों / प्रतिरूपों के संकलन की प्रवृति का विकास करना।
6. पर्यावरणीय विषय–वस्तु से उननित सहायक सामग्री निर्मित करने की क्षमता का विकास कर
7. पर्यावरण–जागरूकता के कार्यक्रम (रैली, प्रदर्शनी, प्रतियोगिताएँ) आयोजित करने की क्षमता विकास करना।

8. बालकों में सृजनात्मकता का विकास करना।
9. बालकों में भारतीय संस्कृति के प्रति श्रद्धा व सम्मान की भावना का विकास करना।
10. बालकों में आपस में मिल–जुल कर काम करने की भावना का विकास करना।
11. बालकों में सामाजिक गुणों का विकास करते हुए उन्हें राष्ट्र का सुनागरिक बनाना।

12.7.2 क्लब का संगठन :–

क्लब की गतिविधियों को संचालित करने का प्रमुख दायित्व क्लब प्रभारी शिक्षक का है। संस्था में पर्यावरण क्लब संचालित करने के लिए सर्वप्रथम संस्था प्रधान की स्वीकृति प्राप्त करना चाहिए। क्लब को प्रजातांत्रिक स्वरूप प्रदान करने तथा सदस्यों की अधिकाधिक भागीदारी बढ़ाने की दृष्टि से एक पारिस्थितक क्लब में निम्न पदाधिकारी हो सकते हैं, जिनकी संख्या आवश्यकतानुसार घटाई बढ़ाई जा सकती है। पारिस्थितियों के अनुसार कुछ नए पदों का भी सृजन किया जा सकता है –

संरक्षक – विद्यालय / महाविद्यालय प्राचार्य

क्लब प्रभारी – वरिष्ठ–व्याख्याता जो सामजिक सरोकारों के प्रति संवेदनशील हो।

सह प्रभारी – प्रभारी को सहयोग करने अथवा प्रभारी की अनुपस्थिति में क्लब की गतिविधियों को संचालित करने वाला अध्यापक।

सदस्य – सभी कक्षाओं अथवा निर्धारित कक्षाओं के रुचिशील छात्रों को निर्धारित प्रपत्र भरवा कर तथा निर्धारित शुष्क जमा कराकर क्लब का सदस्य बनाया जा सकता हैं। पर्यावरण क्लब का सदस्य बनाने हेतु इच्छुक छात्रों के अभिभावकों की सहमति भी लेना उत्तम रहेगा । सदस्यता का कार्य पूण होने के बाद सदस्यों में से क्लब की गतिविधियों की योजना बनाने एवं उनकी क्रियान्वित को अंजाम देने के लिए छात्रों में से निम्न पदों का चयन कर लेना चाहिए।

अध्यक्ष – इसका कार्य अध्यापकों, विद्यालय प्रशासन तथा सम्बन्धित अधिकारियों से समन्वय स्थापित करना है। उसे क्लब की गतिविधियों / कार्यक्रमों में सभी छात्रों का सहयोग लेते हुए रचनात्मक नेतृत्व प्रदान करना होता है।

सचिव – क्लब संचालन में सचिव की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सचिव अध्यक्ष एवं क्लब प्रभारी अध्यापक के परामर्श से बैठकें आयोजित करता है। विभिन्न गतिविधियों के आयोजन में सचिव को छात्रों अध्यापकों एवं अन्य लोगों के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभानी होती है।

सह सचिव – यह पद सचिव के दायित्वों में सहयोग करने हेतु अथवा उसकी अनुपस्थिति में सचिव का दायित्व निर्वहन करने हेतु होता है।

कोषाध्यक्ष – कोषाध्यक्ष सदस्य छात्रों से राशि लेकर उन्हें क्लब की सदस्यता की रसीद प्रदान करता है तथा आय–व्यय का लेखा संधारित करता है

रिपोर्टर – प्रत्येक बैठक तथा गतिविधि का प्रतिवेदन लिखता है तथा

महत्वपूर्ण चित्रों का एलबम वगैरह संधारित करता है।

प्रचार प्रसार सचिव – इस पद का दायित्व है कि वह क्लब के कार्यो एवं उपलब्धियों का मीडिया के माध्यम से प्रचार–प्रसार करे। क्लब के प्रतिवेदन को विद्यालय के अन्य छात्रों, शिक्षकों तथा अभिभावकों तक प्रचारित करे।

कार्यकारिणी प्रतिनिधि – प्रत्येक कक्षा से एक। यदि संस्था सह–शैक्षिक है, तो कार्यकारिणी के पदाधिकारियों का चयन / मनोनयन करते समय छात्राओं को भी अनुपातिक प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए।

आवश्यकतानुसार उक्त पदों में वृद्धि की जा सकती है। क्लब प्रभारी उक्त पदों का मनोनयन कर सकता है। अथवा सदस्य छात्रों में से चुनाव द्वारा भी पद भरे जा सकते हैं। क्लब की गतिविधियों के संचालन के लिए प्रत्येक सदस्य छात्र से कुछ शुष्क लिया जा सकता है, जिसका निर्धारण कार्यकारिणी की बैठक में लिया जाना उचित है। पारिस्थितिक क्लब संचालन हेतु केन्द्र सरकार का वन एवं पर्यावरण मंत्रालय भी वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

12.7.3 क्लब की कार्य विधि :–

क्लब के पदाधिकारियों का चयन होने के बाद निम्न चरणों के अन्तर्गत उस सत्र की गतिविधियों का आयोजन किया जा सकता है।

1. क्लब का नामकरण एवं पदाधिकारियों का शपथ समारोह
2. क्लब के शैक्षिक सत्र में कार्यक्रमों की योजना का निर्माण
3. गतिविधियों का आयोजन –
    a. विशेषज्ञों के भाषणां / वार्ताएँ
    b. प्रदर्शनी
    c. जागरूकता रैली
    d. पर्यावरणीय फिल्मों का प्रदर्शन
    e. शैक्षणिक भ्रमण
    f. बुलेटिन बोर्ड का संधारण
    g. विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन
    h. अन्य
4. पुरस्कार – विवरण एवं समापन समारोह :– सत्र के अन्त में सत्रीय कार्यक्रमों की समीक्षा तथा अच्छे कीर्तिमान स्थापित करने वाले सदस्यों को पुरस्कार एवं प्रमाण पत्र दिए जाने चाहिए। इस अवसर पर सदस्य छात्रों के अभिभावकों तथा गणमान्य अतिथियों को भी आमंत्रित किया जाना चाहिए।

12.7.4 रेकार्ड एवं प्रतिवेदन :–

पारिस्थितिकी क्लब में निम्न रेकार्ड संधारित किया जाना अपेक्षित हैं –

1. मीटिंग रजिस्टर – पारिस्थितिकी क्लब की प्रत्येक छोटी–बड़ी मीटिंग की कार्यवाही लिखी जानी चाहिए।मीटिंग कब व कहाँ हुई? बैठक में कौन लोग उपस्थित हुए? किन महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर चर्चा हुई? व क्या–क्या खास प्रस्ताव / निर्णय रहे? आदि का व्यवस्थित रेकार्ड आगे की बैठकों के लिए आधार का कार्य करता है।

2. केश बुक – क्लब की आय–व्यय का समूर्ण विवरण जो प्रभारी अध्यापक द्वारा प्रमाणित हो, रखा जाना चाहिए।
3. प्रतिवेदन – क्लब की प्रत्येक गतिविधि का अलग–अलग प्रतिवेदन तैय्यार किया जाना चाहिए तथा सत्र के अन्त में समस्त गतिविधियों का समेकित प्रतिवेदन तैय्यार किया जाना चाहिए। यह प्रतिवेदन यदि संस्था में वार्षिक पत्रिका छपती है, तो उसमें प्रकाशित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न-2

1. कठपुतली द्वारा शिक्षण बालमन पर स्थायी छाप छोड़ते है। समझाइए।
2. इको-क्लब प्रयावरणीय गतिविधियों के लिए एक सार्थक मंच के रूप में कैसे कार्य करता है? समझाइए।

12.8 पारिस्थितिकी प्रयोगशाला :–

प्रकृति अपने आप में एक विशाल प्रयोगशाला है। हरी–भरी वसुन्दरा, कल निनाद करती नदियाँ, निर्झर रहते झरने, लहलहाते खेत, कलरव करते पक्षी, झिलमिलाते चाँद–सितारे, पेडों के झुरमुट और उनमें खो जाते पशु–समूह, उदयमान व अस्त होता रक्तिम सूर्य तथा हमारे तन–मन को होले से स्पर्श करती बासन्ती समीर जाने–अन्जाने में हमारे अन्दर सौन्दर्यबोध जगाते हैं। "प्रकृति एक श्रेष्ठ शिक्षक है" की तर्ज पर हमें बहुत कुछ सिखाते हैं।

मानव ने अपनी जिज्ञासावृत्ति के फलस्वरूप प्रकृति के अनेक रहस्यों का अनावरण किया है। आज मानव जीनोम व सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अत्यधिक प्रगति कर चुका है। यद्यपि मानव समय व दूरी के परिपेक्ष्य में समुद्र की गहराई, पृथ्वी की विशालता एवं अन्तरिक्ष की ऊँचाइयाँ नाप चुका है, फिर भी पृथ्वी अपने गर्भ में अनेक रहस्यों को छिपाए बैठी है। वैज्ञानिक अपने अनुसंधानों के माध्यम से निरन्तर उन रहस्यों से पर्दा उठाकर सत्य का उद्घाटन करने की ओर अग्रसर है। पर्यावरण के विभिन्न अवयव सीखने–सिखाने के नैसर्गिक उपकरण है। यहाँ हम पर्यावरण को दो रूपों में देख सकते है –

(1) प्रकृति प्रदत्त पर्यावरण (Natural Environment) एवं

(2) मानव निर्मित पर्यावरण (Man–made Environment)

(1) प्रकृति प्रदत्त पर्यावरण – आइए देखें, उन्मुक्त पर्यावरण किस प्रकार सीखने–सिखाने में सहायता करता है –

बालकों को स्वच्छन्द प्रकृति में पहाड़ी पर बढकर उगते / अस्त होते सूर्य की ओर मुँह / पीठ करके दिशाओं का ज्ञान देना ज्यादा प्रभावी साबित हो सकता है।

- सूर्य, चन्द्रमा, तारों का ज्ञान खुले आसमान के नीचे स्वाभाविक रूप से इन आकाशीय पिण्डों / नक्षत्रों को दिखाते हुए दिया जाना ज्यादा सारगर्भित होगा।
- विभिन्न वृक्षों को निकटता से उनके वास्तविक आवास में देखते–परखते हुए पेड–पौधों के विभिन्न भागों तथा पारिस्थितिकी तंत्र (Eco–system) की अवधारणा को स्पष्ट किया जा सकता है।

- जलाशय–जलीय जीवों का प्राकृतिक आवास जल है। जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में ही उनकी विभिन्न जीवन क्रियाओं आदतों व विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन किया जा सकता है।

(2) मानव निर्मित पर्यावरण – जलाशय में जलीय जीवों का अध्ययन करने के समानान्तर एक्वेरियम मानव निर्मित पर्यावरण है जिसमें कृत्रिम रूप से जलीय जन्तुओं के लिए आवश्यक पारिस्थितियाँ विकसित की जाती है।

शहरों में सडके, वाहन, पानी की टंकी आदि सब मानव निर्मित पर्यावरण के उदाहरण है।

12.9 पुस्तकालय एवं प्रकाशन :–

पारिस्थितिक एवं पर्यावरण के क्षेत्र में देश तथा विदेशों में दिन–प्रतिदिन नए–नए प्रयोग एवं आविष्कार हो रहे है। फलस्वरूप पारिस्थितिकी के ज्ञान में नए–नए आयाम जुड़ते जा रहे हैं। इस प्रगतिशील युग में हम तथा हमारे बालको को पर्यावरण की नवीनतम जानकारी मिलना नितान्त आवश्यक है। पर्यावरण की नवीनतम जानकारी प्राप्त करने के लिए विद्यालयों / महाविद्यालयों में पर्यावरण–पुस्तकालय की स्थापना आज की आवश्यकता है। यदि पर्यावरण का अलग से पुस्तकालय न हो, तो एक या दो अल्मारियों में पर्यावरण की पुस्तकें एवं साहित्य व्यवस्थत कराना चाहिए।

नवीनतम जानकारी के लिए पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त अच्छी सन्दर्भ पुस्तकों का चयन कर पुस्तकालय में मँगवाना चाहिए। आजकल पर्यावरण विषय पर अनेक पत्र–पत्रिकाएँ भी पाक्षिक, मासिक, द्विमासिक व त्रैमासिक रूप से प्रकाशित हो रही है। केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय से समर्थित पर्यावरण शिक्षा केन्द्र अहमदाबाद द्वारा पर्यावरण पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं प्रकाशन की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया जा रहा है। इस संस्था तथा अन्य संस्थाओं द्वारा प्रकाशित कुछ जर्नल्स निम्न है।

1. ग्रीन फाइल (मासिक), सेन्टर फॉर साइन्स एन्ड इन्वायरमेन्ट, नई दिल्ली।
2. डान दू अर्थ (पाक्षिक), सोसाइटी फार इन्वायरमेन्ट कम्यूनिकेशन्स, नई दिल्ली।
3. सी.ई.ई. – एन.एफ.एस. (मासिक), सेन्टर फार इयायरमेन्ट एज्यूकेशन, अहमदाबाद।
4. हार्नबिल (त्रैमासिक), बोम्बे नेयुरल हिस्ट्री सोसाइटी, बम्बई।

12.10 सारांश :–

पर्यावरण शिक्षण की औपचारिक शिक्षण विधियों के अतिरिक्त अनेक अनौपचारिक उपागम ऐसे हैं, जो पर्यावरण शिक्षा को प्रभावी ढंग से लोगों तक पहुँचाने में सक्षम है। शैक्षिक पर्यटन बालकों को प्रकृति के निकट लाता है। पर्यटन से पर्यावरणीय ज्ञान में वृद्धि के साथ–साथ बालक में आपसी सौहार्द्र, परस्पर सहयोग तथा सामाजिकता की भावना का विकास होता है। खेल बालकों की सहज–स्वाभाविक क्रिया है, इससे बालक का शारीरिक, मानसिक व संवेगात्मक विकास होता है। खेलों से बालक में धैर्य, अनुशासन एवं त्वरित निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है। बालक में नकल करने की सहज प्रवृति होती है। इस तथ्य का लाभ उठाते हुए शिक्षण में अनुरूपण का भी प्रयोग किया जाता है।

कठपुतली लकडी अथवा कपडे की आकृतियाँ होती हैं, जिनकी सहायता से घटनाओं अथवा कहानियों का नाटकीकरण किया जाता है। पारिस्थितिक क्लब छात्रों को स्वतंत्र वातावरण में

पर्यावरणीय गतिविधियाँ करने का अवसर प्रदान करता है। क्लब में बालकों की सहभागिता से ही प्रदर्शनियाँ, रैली, प्रतियोगिताएं आदि गतिविधियाँ करवाई जाती है, जिससे बालकों में उत्तरदायित्व बोध का विकास होता है।

प्रकृति अपने आप में एक विशाल प्रयोगशाला है। प्रकृति के विभिन्न अवयव जैसे नदी, झरने चाँद–सितारे, पहाड, वृक्ष आदि पर्यावरण शिक्षा के उपकरण हैं। प्रकृति प्रदत्त एवं मानव निर्मित दोनों प्रकार के पर्यावरण का उपयोग शिक्षण में किया जा सकता है। बालकों को पर्यावरण सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ प्राप्त हो सकें, इस दृष्टि से पर्यावरण पुस्तकालय की स्थापना एक महत्वपूर्ण उपागम है। जिसमें पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त अच्छी सन्दर्भ पुस्तकें एवं पत्र–पत्रिकाएँ भी उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

12.11 स्व मूल्यांकन प्रश्न

1. पर्यावरण शिक्षण में खेल किस प्रकार प्रभावी भूमिका निभा सकते है, समझाइए।
2. अनुरूपण से आप क्या समझते है? इसका पर्यावरण शिक्षण में किस प्रकार उपयोग हो सकता है?
3. एक अच्छे पर्यावरण पुस्तकालय की क्या–क्या, प्राथमिकताएँ हो सकती है। लिखिए।
4. पर्यावरण शिक्षण के सन्दर्भ में किस प्रकार प्रकृति का उपयोग एक विशाल प्रयोगशाला के रूप में किया जा सकता है? समझाइए।

12.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Bana,Veena and Rajeev Bana:Paryavaran Shiksha,Research Publications, 89, Tripolia Bazar Jaipur–2.
2. Base,Narendra Singh (2005): Paryavaran Shiksha,Jain Prakashan Mandir,Jaipur.
3. Bhopal Singh (2005) : Paryavaran Shiksha, International Publishing House Meerut.
4. Dadhich,L.K.and A.P.Saxena (2002),Biodiversity : Strategies for Conservation,A.P.H. Publication, Udaipur
5. Deshbandhu and G.Berberet (1987) “”Environment Education for Conservation and Devlopment, “Indian Env.Society,New Delhi.
6. Green Games (1997), Center for Environment Education, Ahmedabad (India) in collaboration with international Development Research Center, Canada.
7. Gupta, M.P. (1981) : Gramya Prayog Digdarshika, Jain Printing Press, Ramganjmandi, Kota (Rajasthan).
8. Gupta, M.P.(2006) : Paryavaran Chintan, Rajasthan Vigyan Shiksha Parishad and Paryavaran Parishad, Kota (Rajasthan).

9. Educational Teahnology, Part–3, Kota Open University, Kota
10. Pal, S.K. and Sudha Malhotra(1993): Environment Trend and thoughts in Education, Innovative Research Association, Allabhabad.
11. Saxena, A.B.(1986) : Environmental education, National Psychological Corporation, Agra
12. Sharma, B.L. (2006) : Paryavaran Shiksha, Kavita, Prakashan New Sanganer Road, Sodala, Jaipura
13. Sharma, P.D. (1990) : Ecology and Environment, Rastogi Publication, Meerut (U.P.)
14. The Green Club (1997): Center for Environment Education, Ahmedabad.

इकाई–13

TEACHING METHODS OF ENVIRONMENT EDUCATION

पर्यावरण शिक्षा की शिक्षण विधियाँ

इकाई की रूपरेखा –

13.1 उद्देश्य
13.2 प्रस्तावना समूह चर्चा
13.3 समूह चर्चा
13.3.1 समूह चर्चा के गुण
13.3.2 समूह चर्चा के दोष
13.3.3 सावधानियाँ
13.4 प्रायोजना विधि
13.4.1 प्रायोजना विधि के प्रकार
13.4.2 प्रायोजना की विशेषताएँ
13.4.3 प्रायोजना विधि के सिद्धान्त
13.4.4 प्रायोजना विधि के गुण
13.4.5 प्रायोजना विधि के दोष
13.4.6 प्रायोजना विधि के चरण
बोध प्रश्न– 1
13.5 समस्या समाधान विधि
13.5.1 विभिन्न परिभाषाएँ
13.5.2 समस्या समाधान विधि के लाभ
13.5.3 समस्या समाधान विधि के दोष
13.6 अवलोकन विधि
बोध प्रश्न–2
13.7 व्याख्यान–प्रदर्शन विधि
13.7.1 व्याख्यान–प्रदर्शन विधि के उद्देश्य
13.7.2 व्याख्यान–प्रदर्शन विधि के गुण
13.7.3 व्याख्यान–प्रदर्शन विधि के दोष
13.8 क्रियात्मक विधि
13.8.1 क्रियात्मक विधि के सिद्धान्त
13.8.2 क्रियात्मक विधि का प्रयोग
13.8.3 छात्र क्रियाओं के प्रकार
13.8.4 क्रियात्मक विधि द्वारा शिक्षण के उद्देश्य
13.8.5 क्रियात्मक विधि को विशेषताए

13.8.6 पर्यावरण आधारित क्रियाओं के उदाहरण
13.9 सारांश
13.10 स्व मूल्यांकन प्रश्न
13.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

13.1 उद्देश्य :–

इस इकाई की समाप्ति पर आप,

1. शिक्षण पद्धति का महत्व समझ सकेंगे।
2. शिक्षण पद्धति को परिभाषित कर सकेंगे।
3. पर्यावरण शिक्षा की विभिन्न शिक्षण विधियों के बारे में जान सकेंगे।
4. एक शिक्षण विधि की दूसरी शिक्षण विधि से तुलना कर सकेंगे।
5. विभिन्न शिक्षण विधियों की कमियां व अच्छाईयों को समझ सकेंगे।
6. पाठ/प्रकरण विशेष के लिए उपयुक्त शिक्षण विधि का चयन कर उसका उपयोग कर सकेंगे।

13.2 प्रस्तावना:–

शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य छात्रों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाना है। यह तब ही सम्भव है जब आप द्वारा शिक्षण के लिए अपनाई गई विधि, रोचक एवं प्रभावशाली हो। शिक्षण विधि एक यांत्रिक प्रक्रिया नही है, अपितु छात्रों के मानसिक स्तर व अभिरूचियों को ध्यान में रखते हुए प्रयुक्त की जाने वाली उद्देश्य परक संवेदनशील प्रक्रिया है। शिक्षण पद्धतियों पर चर्चा करने से पूर्व शिक्षण को समझना आवश्यक है। शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पाठ्यक्रम में वर्णित विषयवस्तु को विद्यार्थी तक पहुंचाना ही वस्तुतः शिक्षण है। शिक्षण में केवल जानकारी देना ही नही, वरन् ज्ञान तथा कौशल की वृद्धि के लिए कार्य करना भी सम्मिलित है। पर्यावरण शिक्षण हेतु अनेक विधियाँ है परन्तु शिक्षक विषयवस्तु के अनुसार शिक्षण विधि के गुण दोषों को ध्यान में रखते हुए अनुकूलतम विधि का चयन कर सकते हैं।

13.3 समूह चर्चा :–

इस विधि में शिक्षार्थियों को 8–10 के समूह में विभाजित करके किसी शैक्षिक समस्या पर चर्चा करने का अवसर दिया जाता हैं। इसमें छात्रों को अधिक सक्रिय रहना पडता है तथा शिक्षक मार्गदर्शक एवं सुविधादाता (Facilitator) के रूप में कार्य करता है।

13.3.1 समूह चर्चा के गुण :–

1. समूह चर्चा से छात्रों की चिंतन एवं तर्क शक्ति का विकास होता है।
2. छात्रों में सृजनात्मक क्षमताओं का विकास होता है।
3. समस्या समाधान के लिए निर्णय शक्ति का प्रयोग करना सीखते हैं।
4. सक्रियता तथा मौलिकता के विकास का अवसर मिलता है।
5. शिक्षार्थियों को अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करने का अवसर मिलता है।

13.3.2 समूह चर्चा के दोष :–

1. कुछ छात्र बोलते हैं, बाकी मूकदर्शक तथा अक्रियाशील रहते हैं।
2. चर्चा विषय से हट जाती है।

3. छात्रों में दो समूह वन जाते हैं, कभी–कभी उनमें स्पर्धा एवं ईर्ष्या की भावना पैदा हो जाती है।
4. स्पर्धा भावना के कारण वे रचनात्मक कार्यो की प्रशंसा के बजाय आलोचना अधिक करने लगते हैं।

13.3.3 सावधानियाँ :–

इस विधि के प्रयोग में निम्न सावधानियाँ बढ़ती जानी चाहिए –

1. सभी छात्रों को अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।
2. कम बोलने वाले छात्रों को विचार प्रकट करने हेतु प्रेरित क्रिया जाना चाहिए।
3. चर्चाओं को विषयान्तर न होने दिया जाय।
4. रचनात्मक तथा सार्थक चर्चाओं को प्रोत्साहित किया जाय।

13.4 प्रायोजना विधि :–

यह विधि पर्यावरण शिक्षा के शिक्षण की महत्वपूर्ण एवं प्रभावित विधि है।इस विधि का प्रमुख आधार जॉन डीवी का व्यवहारवाद है। इस विधि के जन्मदाता कोलम्बिया विश्वविद्यालय के डा. डब्ल्यू एच. किलपेट्रिक हैं। किलपेट्रिक के अनुसार किसी निश्चित प्रायोजन के लिए सामाजिक पर्यावरण में की जाने वाली क्रिया प्रायोजना कहलाती है। स्टीवेन्सन के अनुसार प्रोजेक्ट एक समस्या मूलक क्रिया है, जिसे उसकी स्वाभाविक परिस्थितियों में ही सम्पन्न किया जाता है। गुड–शिक्षा शब्द कोष में प्रायोजना को इस प्रकार समझाया गया है– 'प्रायोजना वह साभिप्राय कार्य इकाई है, जिसका शैक्षणिक महत्व हो जो एक या अनेक लक्ष्यों की प्राप्ति का अभीष्ट रखती हो जिसमें समस्या का खोजपूर्ण हल निहित हो एवं जिसकी पूर्ति द्वारा अध्यापक एवं छात्र किन्ही भौतिक सामग्रियों के माध्यम से जीवन की स्वाभाविकता को प्राप्त कर सकें।" थामस एवं लैंग के अनुसार –प्रोजेक्ट इच्छानुसार सम्पादित वह कार्य है, जिसमें रचनात्मक प्रयास अथवा विचार हो, और जिससे कुछ मूर्त परिणाम निकलें।"

13.4.1 प्रायोजना विधि के प्रकार :–

1. <u>अभ्यासत्मक</u> – मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति देना, अशुद्ध उच्चारण, वर्तनी एवं मात्राओं की त्रुटियों में संशोधन।
2. <u>समस्यात्मक</u> – किसी प्रश्न अथवा समस्या का समाधान करने की दिशा में कार्य
3. <u>कलात्मक</u> – कलात्मक अनुभूति की प्राप्ति टी.वी., रेडियो, प्रसारण देखना, सुनना आदि।
4. <u>उत्पादनात्मक</u> – निबन्ध, पत्र या अन्य कोई विधा की रचना, मॉडल, चित्र, चार्ट बनाना।

13.4.2 प्रायोजना की विशेषताएँ :–

1. प्रायोजना सौद्देश्य कार्य है, जिसमें उद्देश्य स्पष्ट होता है तथा उद्देश्य को प्राप्त किया जाता है।
2. प्रोजेक्ट वास्तविक जीवन से संबंधित होता है। इसमें छात्र विद्यालय तथा उससे बाहर वास्तविक स्थितियों के सम्पर्क में आता है। जिससे उसे जीवन के यथार्थ को देखने का अवसर मिलता है।
3. प्रायोजना करके सीखने (Learning By Doing) के सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें विद्यार्थी को स्वतंत्र रूप से सोचने विचारने तथा करने का अवसर मिलता है।

4. प्रायोजना में शिक्षार्थी परस्पर सहयोग से कार्य करते हँ, जिससे सहिष्णुता, प्रेम, सहयोग आदि सामाजिक गुणों का विकास होता है।
5. स्वयं करके देखने से बालक में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है, साथ ही तर्क एवं चिन्तन क्षमता भी बढ़ती है।
6. स्वयं करने से श्रम के प्रति निष्ठा की भावना का विकास होता है।
7. उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है।
8. इस विधि द्वारा किया गया अधिगम स्थायी होता है।
9. इसमें विद्यार्थी को उसकी योग्यता, क्षमता व रूचि के अनुसार कार्य दिया जाता है।
10. प्रायोजना पाठ्यक्रम से सम्बन्धित होती है।
11. यह विधि विद्यार्थियों में रचनात्मक एवं सृजनात्मक दृष्टिकोण विकसित करती है।

13.4.3 प्रायोजना विधि के सिद्धान्त :–

1. प्रयोजनशीलता – प्रायोजना सम्बन्धी समस्या का विशेष प्रयोजन होता है। उद्देश्य होने पर ही छात्र तत्परता एवं रूचि से कार्य करते हैं। प्रायोजना का उद्देश्य पूर्ण होना उसे अभिप्रेरित (Motivate) करता है।
2. रोचकता – प्रायोजना को छात्रों द्वारा पूरा किया जाता है। वे अपनी रूचि के अनुसार स्वतंत्र रूप से कार्य करते हैं। अत: प्रायोजना विद्यार्थियों की रूचि के अनुकूल होनी चाहिए।
3. वास्तविकता – प्रायोजना विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए। काल्पनिक समस्या लेना इस विधि का उद्देश्य नहीं है। प्रायोजना के वास्तविक जीवन से सम्बन्धित होने से ही वे नवीन परिस्थिति से अवगत होते हैं, जो उन्हें भावी जीवन के लिये तैयार करती है।
4. क्रियाशीलता – प्रायोजना सम्बन्धी समस्या क्रियाशीलता पर आधारित होती है। बालकों में जिज्ञासा चिन्तन, तर्क तथा संग्रह करने की आदत होती है, जिसके कारण वे सक्रिय रहते हैं। उनकी इस सक्रियता का उपयोग प्रायोजना में क्रिया जाता है। बालक अपनी क्रियाशीलता के आधार पर ही प्रायोजना पूरी करता है।
5. सामाजिकता – प्रायोजना विद्यार्थियों के सामाजिक जीवन से सम्बन्धित तथा उपयोगी होती है। बालक सामाजिक प्राणी है उसके लिए सहयोग, सदभाव, सहिष्णुता की भावना की आवश्यकता होती है। प्रायोजना पर कई विद्यार्थी एक साथ कार्य करते हैं, जिससे उनमें सामाजिक जीवन से समन्धित उन गुणों का विकास होता है जो भविष्य में उन्हें सुनागरिक बनाने में सहायक है।
6. स्वतंत्रता – बालक को स्वतंत्र वातावरण में कार्य करने का अवसर प्राप्त होता है। समस्या चुनने, उसकी व्यवस्था करने, कार्य करने तथा परिणाम निकालने के लिये वह स्वतंत्र होता है। अत: उसे बाध्य नहीं करना चाहिए अन्यथा प्रायोजना का उद्देश्य पूरा नहीं होगा।
7. उपयोगिता – प्रायोजना विद्यार्थियों के लिए उपयोगी होती है इसीलिए वे कार्य करने में तत्परता व रूचि दिखाते हैं। अत: इसमें व्यावहारिकता होनी चाहिए।

8. सहसम्बन्धता – प्रायोजना ऐसी होनी चाहिए जिसमें विद्यार्थी विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकें। एक विषय की योजना पूरी करने के लिए दूसरे विषयों की सहायता ली जाती है। इससे बालक का सन्तुलित मानसिक विकास होता है।

13.4.4 प्रायोजना विधि के गुण :–

1. यह व्यक्तिगत भिन्नता के सिद्धान्त पर आधारित है।
2. करके सीखने पर बल दिया जाता है।
3. यह क्रियाशीलता, उपयोगिता वास्तविकता एवं स्वतंत्रता के सिद्धान्तों पर आधारित होने के कारण मनोवैज्ञानिक है।
4. इससे आपसी सहयोग, सहानुभूति एवं सामजिकता का विकास होता ह।
5. इसमें क्रियाएँ सौद्देश्य होती है छात्र सदैव क्रियाशील रहता है।
6. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है।

13.4.5 प्रायोजना विधि के दोष :–

1. अधिक समय लगता है।
2. अध्यापक का महत्व कम है।
3. पाठ्यक्रम के सभी प्रकरण इस विधि द्वारा नही पढ़ाए जा सकते है तथा छोटे स्तर पर उपयुक्त नहीं है।
4. बर्हिमुखी बालकों द्वारा सक्रिय भागीदारी निभाई जाती है तथा शेष बालक निष्क्रिय रहते हैं।
5. योजना संचालन हेतु विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है।
6. व्ययशील एवं श्रम साध्य है।
7. प्रक्रिया क्लिष्ट एवं जटिल है।

13.4.6 प्रायोजना विधि के चरण :–

किसी प्रायोजना को पूरा करने के लिए उसे निम्नांकित चरणों में पूरा करना चाहिए –

1. परिस्थिति का निर्माण – अध्यापक विद्यार्थियों के साथ वाद–विवाद के सहारे ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करें कि विद्यार्थी स्वयं योजना प्रस्तावित करें। वे योजना तभी प्रस्तावित करेंगे, जब उन्हें परिस्थिति में रूचि होगी। अध्यापक प्रत्येक छात्र को योजना प्रस्तावित करने के लिए प्रेरित करे। केवल उचित योजना को स्वीकार किया जाना चाहिए।
2. योजना का चुनाव – ऐसी योजना का चुनाव करना चाहिए जिसका शैक्षिक मूल्य हो तथा जो भावी–जीवन में उपयोगी हो। वह विद्यार्थी की मानसिक व आर्थिक क्षमता के अनुकूल हो, उसके साधन उपलब्ध हों तथा प्रायोजना के सिद्धान्तों के अनुसार हो।
3. कार्यक्रम निर्माण – योजना का चयन करने के उपरान्त उसकी एक रूपरेखा का निर्माण किया जाता हैं इसमें समयावधि बालको की कार्य क्षमता व रूचि के अनुरूप कार्य विभाजन साधनों की उपलखता व कठिनाई की चर्चा आदि के आधार पर एक निश्चित कार्यक्रम का निर्धारण किया जाता है।
4. कार्यक्रम का क्रियाचयन – कार्यक्रम निर्धारण के उपरान्त प्रत्येक छात्र को उसका कार्य बता दिया जाता हैं उनका एक नेता चुना जाता है। छात्र अपनी गति से कार्य करते हैं व अध्यापक को उसकी सूचना निरन्तर देते रहते हैं। समस्या आने पर अध्यापक से सलाह

लेते हैं। छात्र अपनी योग्यता व सामर्थ्य के अनुरूप उत्तरदायित्व को निभाते हैं। अध्यापक विद्यार्थियों के कार्य का निरीक्षण करता है, उत्साहित करता है एवं समस्या समाधान करने के लिये उन्हें निर्देशित करता है।

5. कार्य का मूल्यांकन – छात्र अपने कार्य का ब्योरा अध्यापक के समक्ष रखते हैं व सभी मिलकर इसका मूल्याँकन करते हैं। प्रायोजना में कहाँ तक सफलता मिली? क्या वे उद्देश्य पूरे हुए जिनको लेकर कार्य आरम्भ किया था? इन प्रश्नों के उत्तर के आधार पर छात्रों व अध्यापक के कार्यो का मूल्यांकन होता है।
6. योजना का लेखा–जोखा – प्रायोजना के चयन से लेकर पूरा होने तक सभी क्रियाकलापों का रिकार्ड आघारित किया जाता है। हर योजना से सम्बन्धित कार्य, प्रगति व कठिनाइयों का लेखा–जोखा रखा जाता है। कठिनाइयों को दूर करने के उपाय सुझाये जाते हैं। अत: इस विधि में शिक्षक विषय में दक्ष, मनोविज्ञान का ज्ञाता एवं एक कुशल मार्गदर्शक होना चाहिए।

बोध प्रश्न- 1

1. आप कक्षा 9 के विद्यार्थियों के लिए पर्यावरण के किस विषय पर समूह चर्चा करना चाहेगे| तथा 30 विद्यार्थियों की कक्षा में इसे किस प्रकार आयोजित करेगें?
2. प्रायोजना विधि की विशेषताएँ बताते हुए- इस विधि के विभिन्न चरणों को समझाइए।

13.5 समस्या समाधान विधि :–

समस्या समाधान द्वारा शिक्षण उच्च स्तरीय शिक्षण है, क्योंकि इससे उच्च कोटि का अधिगम, विश्लेषण, संश्लेषण एवं मूल्यांकन का विकास होता है। यह प्रोजेक्ट विधि से मिलती जुलती है। दोनों में यह अन्तर है कि प्रोजेक्ट विधि में शारीरिक व मानसिक दोनों क्रियाएँ सम्मिलित है, जबकि समस्या समाधान में केवल मानसिक क्रिया ही होती हैं।

13.5.1 विभिन्न परिभाषाएँ –

रोबर्ट गेने के अनुसार – 'दो या दो से अधिक सीखे गए प्रत्यय या अधिगमों को एक उच्च स्तरीय अधिनियम के रूप में विकसित किया जाता है। उसे समस्या समाधान अधिगम कहते है।" रिस्क (1965) के अनुसार – समस्या समाधान विधि एक योजनाबद्ध तरीके से समस्या को हल करना है या किसी समस्या का संतोषजनक समाधान प्राप्त करना समस्या समाधान विधि कहलाता है। अंसुबल के अनुसार 'संप्रत्य प्राप्ति' तथा "खोज करके सीखना ' दोनों ही समस्या विधि के भाग है।

समस्या समाधान पद्धति का वैज्ञानिक स्वरूप

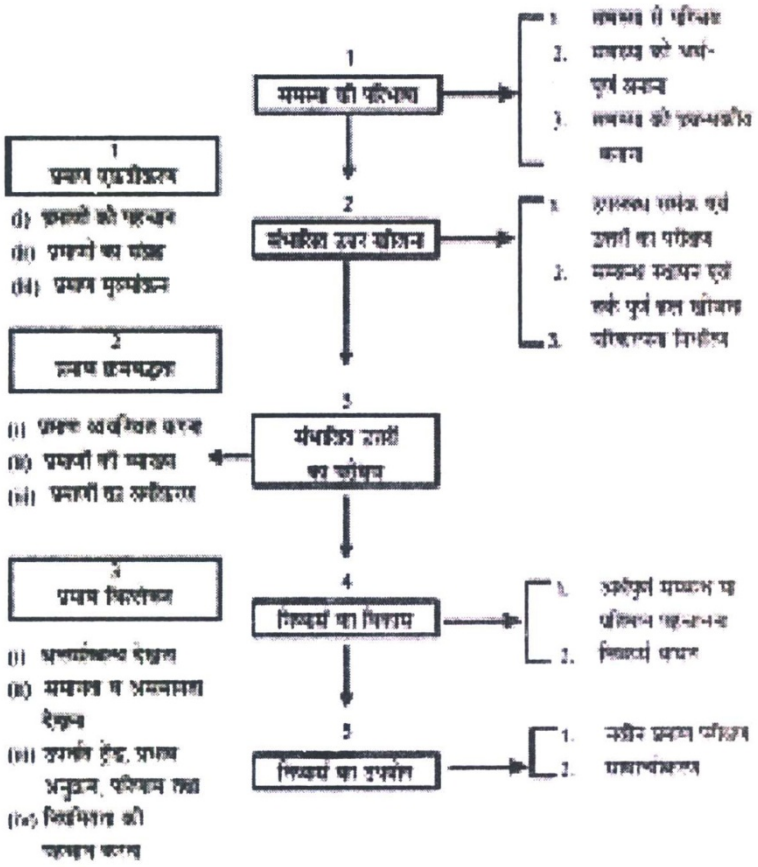

बिनिंग व बिनिंग ने समस्या समाधान के चार पद बताये है –

1. समस्या की परिभाषा
2. परिकल्पना निर्धारण
3. परिकल्पना का परीक्षण
4. निष्कर्ष

के.पी. पाण्डेय ने समस्या समाधान के 6 पद प्रस्तुत किये हैं –

1. समस्या की पहचान
2. समस्या की परिभाषा तथा सीमांकन
3. विश्लेषण
4. परिकल्पना निर्धारण
5. परिकल्पना की जांच हेतु रूपरेखा तैयार करना
6. अन्तिम निर्णय

समस्या समाधान विधि को वैज्ञानिक सरूप प्रदान करने के लिए यूनेस्को द्वारा प्रयास किये गये हैं तथा इसमें समस्या समाधान को 5 पदों में वर्गीकृत क्रिया गया है।

1. समस्या की परिभाषा
2. संभावित उत्तर खोजना

3. संभावित उत्तरों का परीक्षण
4. निष्कर्ष का विकास
5. निष्कर्ष का उपयोग

समस्या समाधान विधि पर्यावरण शिक्षा के सन्दर्भ में अधिक उपयोगी सिद्ध होती है क्योंकि इसकी समस्याएँ बालकों के पर्यावरण से जुडी हुई हैं। ये समस्याएँ प्रकृति में बहु–अनुशासनात्मक (Multi–disciplinary) होती हैं। इस विधि द्वारा उन्हें पर्यावरण के प्रति सृजनात्मक चिन्तन के लिए प्रेरित किया जाता है। नेमिलियर ने 1983 में सुझाव दिया था कि यह विधि अप्रत्यक्षत: समाज के विकास के लिये भी उपयोगी है।

13.5.2 समस्या समाधान विधि के लाभ :–

1. समस्या समाधान विधि छात्रों में वैज्ञानिक अभिवृति का निर्माण करती है।
2. समस्या समाधान विधि बालकों में समीक्षात्मक विचार करने की क्षमता को विकसित करता है।
3. इस विधि से विभिन्न कौशलों का विकास होता है जैसे– समस्या को पहचानना, प्रयोग करना, निरीक्षण करना, अभिलेख तैयार करना आदि ।
4. समस्या विधि प्रभावी अधिगम के लिये मानसिक उपागम बनाती है जो किसी कारण पर आधारित होती है।

13.5.3 समस्या समाधान विधि के दोष :–

1. सभी विद्यार्थी समस्या का समाधान नहीं करना चाहते हैं।
2. पर्यावरण पढ़ाने वाले सभी शिक्षक इस उपागम प्रशिक्षित नहीं है अत: इस विधि का क्रियान्वयन ठीक ढंग से नहीं हो पाता है।
3. कभी–कमी समस्या समाधान विधि के लिए उचित मात्रा में उपकरण, सामग्री नहीं मिल पाती है।
4. वर्तमान स्वीकृत, पाठ्यक्रम के सभी विषय वस्तु इस विधि के द्वारा नहीं पढाये जा सकते हैं।
5. यह विधि केवल उच्च कक्षा शिक्षण के लिए उचित है प्राथमिक, उच्च प्राथमिक स्तर के छात्रों के लिये कतई उचित नहीं है।
6. यह विधि खर्चीली है, समय अधिक लेने वाली है। अत: विद्यालयों में इसका उपयोग कम किया जाता है।

13.6 अवलोकन विधि :–

अवलोकन द्वारा व्यक्ति अपनी ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग कर, वातावरण का ज्ञान प्राप्त करता है। पर्यावरण के वास्तविक स्वरूप के ज्ञान के लिये यह विधि वर्तमान में उपयुक्त मानी जाती है।

योकाम एवं सिम्पसन के अनुसार, "अवलोकन विधि ज्ञानेन्द्रियों द्वारा सीखने की विधि है जिसमें व्यक्ति को अपने चारों ओर के संसार का ज्ञान होता है।"

अवलोकन विधि द्वारा पर्यावरण के विभिन्न तथ्यों की जानकारी वास्तविक रूप में मिलती है। इससे ज्ञान अधिक स्थायी होता हैं बालक अपनी ज्ञानेन्द्रियों का अधिकाधिक उपयोग करता है, ध्यान केन्द्रित कर आंख से देखता है, त्वचा से स्पर्श करता है, कान से सुनता है तथा

नाक से सूँघता है। इसके पश्चात् ही वह किसी स्थिति को सत्य रूप से आत्मसात करता है। अवलोकन विधि द्वारा पर्यावरण से सम्बन्धित भौगोलिक तथ्यों, सामान्य प्रत्ययों व प्राकृतिक सिद्धान्तों की जानकारी प्राप्त होती है। विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ एवं पेड–पौधे उनके पुष्प एवं फल धारण करने का समय, पतझड का समय, विभिन्न प्रकार के जानवरों की आदतें, जंगल एवं उसके आसपास का वातारण, पहाड़, मैदान, घाटी, पठार. तितली एवं मधुमक्खी का जीवन–चक्र, जमीन का कटाव, ऋतुओं के स्वरूप, चट्टानें, खनिज पदार्थ आदि विभिन्न प्रकार की जानकारी अवलोकन द्वारा अच्छी प्रकार से प्राप्त होती है। इस विधि द्वारा पर्यावरण से निकटता स्थापित होती है। इससे बालकों में जिज्ञासा, मौलिकता, चिन्तन, आत्मावलोकन. आत्मलोचन, आत्माभिव्यक्ति जैसे उच्चस्तरीय गुणों का विकास होता है।

अवलोकन विधि की विशेषताएँ :–

अवलोकन विधि द्वारा संवेगात्मक एवं मानसिक विकास होता है। इस विधि की कुछ विशेषतायें इस प्रकार हँ –

1. बालक अपनी ज्ञानेन्द्रियों के उपयोग द्वारा ध्यान केन्द्रित करना सीखता है जो अधिगम के लिये एक आवश्यक तत्व है।
2. यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है जिसमें बालक की व्यक्तिगत क्षमताओं का विकास होता हैं। व्यक्तिगत भिन्नता के आधार पर बालक अपनी सहज क्षमता से पर्यावरणीय घटनाओं, तथ्यों एवं सिद्धान्तों का अवलोकन करता है।
3. इसमें बालक की आत्माभिव्यक्ति का विकास होता है। जैसा वह देखता है, उसे अपने शब्दों एवं भावों के साथ अभिव्यक्त करना सीखता है।
4. बालक में जिज्ञासा एवं मौलिक चिन्तन जैसे गुणों का विकास होता है जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए आवश्यक है।
5. बालक में तर्क शक्ति का विकास होता है।
6. इसमें स्थूल रूप से भौतिक एवं जैविक तत्वों का ज्ञान प्राप्त होता है।
7. इसमें छात्रों में पर्यावरणीय क्रियाओं के प्रति रूचि का विकास होता है।
8. इस विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान अधिक स्थायी होता है।

सावधानियाँ :–

1. छात्रों को अवलोकन के लिये पर्याप्त समय देना चाहिए।
2. अवलोकन को केवल मनोरजंन का साधन न बनाकर विषय–वस्तु से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्ति का साधन माना जाना चाहिए।
3. बालक जब अवलोकन कर रहे हो तब उन्हें उचित रूप से निर्देशन देना चाहिए कि किस तरह से अवलोकन एवं निरीक्षण किया जाये तथा किन–किन बातों को ध्यान से देखा जाये?
4. विद्यार्थियों की जिज्ञासा को अध्यापक द्वारा स्पष्ट रूप से एवं सावधानीपूर्वक शान्त करना चाहिए।
5. वे परिस्थितियाँ बालक के जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए जिन परिस्थितियों का बालक अवलोकन कर रहा है।
6. जिन परिस्थितियों का बालक अवलोकन कर रहा है वह उसकी मानसिक परिपक्वता के स्तर के अनुरूप होनी चाहिए।

7. एक समय में अधिक बातों एवं तथ्यों के अवलोकन के लिये नहीं कहा जाना चाहिए।

बोध प्रश्न-2

1. समस्या समाधान विधि प्रयोजना विधि से किस प्रकार भिन्न है? समस्या समाधान का युनेस्को द्वारा स्वीकृत स्वरूप का प्रतिमान दीजिए।
2. अवलोकन विधि की प्रमुख विशेषताएं बताते हुए इस विधि के उपयोग में बरती जाने वाली सावधानियों का उल्लेख कीजिए।

13.7 व्याख्यान–प्रदर्शन विधि :–

यह व्याख्यान विधि का ही संशोधित स्वरूप है। व्याख्यान विधि पूर्णत: शिक्षक केन्द्रित (Teacher Centred) होती है तथा बालक का ध्यान इधर–उधर भटक जाता है। अत: व्याख्यान के साथ प्रदर्शन दिखाने से पाठ रोचक बन जाता है और छात्र अधिक रूचि लेते हैं। किसी समस्या को सुलझाने, विषय को स्पष्ट करने, छात्रों की बोध क्षमता का परीक्षण करने, व्यवहारिक प्रयोग करने, समस्या प्रस्तुत करने, कार्यविधि या युक्ति को दृष्टक बनाने के लिये वस्तु व नमूनों को प्रदर्शित करने के लिये प्रदर्शन विधि उपयुक्त रहती है। प्रदर्शन विधि द्वारा विद्यार्थियों को भाषण के साथ सम्बन्धित विषय–वस्तु के सिद्धान्तों, तथ्यों, कार्यो या प्रक्रियाओं को प्रदर्शित करके दिखाया जाता है, जिससे विद्यार्थी अमूर्त तथ्यों एवं सिद्धान्तों के मूर्त–रूप से परिचित होते हैं एवं उससे अधिगम स्थायी होता है। अत: प्रदर्शन द्वारा विद्यार्थी प्रत्यक्ष (मूर्त) अनुभव प्राप्त करते हैं। प्रदर्शन में फिल्म, स्लाइड, प्रोजेक्टर आदि का भी उपयोग किया जा सकता है।

13.7.1 व्याख्यान–प्रदर्शन विधि के उद्देश्य :–

1. प्रदर्शन द्वारा विद्यार्थियों की जिज्ञासा बढ़ती है तथा वे पाठ में रूचि लेते हैं।
2. सैद्धान्तिक पक्ष के साथ–साथ उन्हें प्रकरण का व्यावहारिक ज्ञान भी होता है। जिससे अधिगम सरल हो जाता है।
3. प्रदर्शन द्वारा सिद्धांतों, प्रत्ययों, नियमों या अधिनियमों कि सत्यता को प्रमाणित किया जा सकता है।
4. प्रकरण सम्बन्धी समीक्षा के लिये भी प्रदर्शन विधि का उपयोग किया जाता है।
5. कक्षा में जब कोई समस्या विद्यार्थियों के समक्ष आती है तो प्रदर्शन के माध्यम से मूर्त रूप से समस्या का समाधान किया जा सकता है।
6. विद्यार्थियों में निरीक्षण क्षमता का दिकास होता है।
7. विद्यार्थी कान से सुनते हँ एवं नेत्रों से देखते हैं जिससे ज्ञान प्राप्ति में दृढ़ता आती है।

13.7.2 व्याख्यान–प्रदर्शन विधि के गुण :–

1. जो प्रयोग विद्यार्थियों के स्तर से कुछ खतरनाक होते हैं, उन्हें अध्यापक कुशलता से प्रदर्शित करता है।
2. प्रायोगिक कार्य को सैद्धानिक पक्ष से जोडने का अवसर प्राप्त होता है।
3. इस विधि में न्यूनतम सामान से काम चलाया जा सकता है, अल्प व्यय–साध्य होने के कारण यह विधि विशेष उपयोगी है।
4. प्रदर्शित किये जोने वाले प्रयोग में रूचि लेने एवं सक्रिय सहयोग देते रहने से कक्षा में नीरसता का वातावरण नहीं रहता।

5. जिस विद्यालय में संसाधनों का अभाव है या उपकरण महँगे हैं तथा जिनको व्यक्तिगत रूप से सभी विद्यार्थियों को प्रयोग के लिये नहीं दिया जा सकता, ऐसे में शिक्षक द्वारा प्रयोग–प्रदर्शन उपयुक्त होता है।
6. इस विधि से विद्यार्थियों को प्रयोग सम्बन्धी कौशलों को विकसित करने का अक्सर मिलता है।
7. प्रदर्शन के माध्यम से विद्यार्थियों में प्रयोग के आधार पर परिकल्पना विकसित करने का अवसर प्राप्त होता है।
8. विद्यार्थियों की निरीक्षण क्षमता विकसित करने के लिए उपयुक्त, प्रचुर एवं उद्देश्यपूर्ण अनुभव होता है।

13.7.3 व्याख्यान–प्रदर्शन विधि के दोष :–

1. यह विधि करके सीखने के सिद्धान्त को पूर्णत: सार्थक नहीं करती क्योंकि प्रदर्शन अध्यापक द्वारा किया जाता है।
2. यह विधि शिक्षक – केन्द्रित है, शिक्षक अधिक क्रियाशील रहता है और छात्रों को व्यक्तिगत प्रयोग करने के द्वारा कार्यकुशलता प्राप्त करने का अवसर प्राप्त नहीं होता ।
3. बड़ी कक्षा में जहाँ सभी छात्रों को प्रयोग करने का समुचित अवसर नहीं मिल पाता वहाँ कक्षा में अनुशासन भंग होने की संभावना बनी रहती है। अध्यापक प्रयोग–प्रदर्शन में व्यस्त होता है तो कुछ छात्र चंचलतावश शान्ति भंग करने का प्रयास करते रहते हैं।
4. इस विधि में विद्यार्थी प्रयोगशाला के उपकरणों व यन्त्रों के प्रयोग के कौशल में व्यक्तिगत रूप से कुशलता प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं।

गुण–दोषों के रहने पर भी संवेदनशील, अनुभवी और भविष्यद्दृष्टा अध्यापक इस विधि द्वारा विद्यार्थियों में वैज्ञानिक चिन्तन एवं दृष्टिकोण विकसित करने में सफल होते हैं। यह विधि कम खर्चीली और कम समय में पूरी होने वाली है। साथ ही अधिक उपयोगी एवं सार्थक विधि है।

13.8 क्रियात्मक विधि :–

पर्यावरण शिक्षा के शिक्षण में 'क्रियात्मक विधि "एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है यह विधि छात्र क्रियाशीलता" के सिद्धान्त पर आधारित है जिसका सूत्रपात कामेनियास व रूसो ने किया था।

पर्यावरण शिक्षण की क्रियात्मक विधि से तात्पर्य है "बालक स्वयं की क्रियाओं द्वारा पर्यावरण के संबंध में विभिन्न जानकारी प्राप्त करता है।"

"बालक की क्रिया से तात्पर्य– बालक के द्वारा किसी उद्देश्य से की गई क्रिया जिसमें उसका शरीर व मस्तिष्क दोनों क्रियाशील रहते हैं। पहलकदमी, आत्म–अभिव्यक्ति और आत्मक्रिया बालक की क्रिया के आवश्यक अंग है।"

13.8.1 क्रियात्मक विधि के सिद्धान्त :–

1. क्रियात्मक विधि इस सिद्धान्त को अपना पथ–प्रदर्शक मानती है कि "आत्म स्त्रतंत्रता' प्राप्त करने के लिय "आत्मक्रिया' आवश्यक है।
2. क्रियात्मक विधि इस सिद्धान्त को महत्व देती है कि बालक को ज्ञान प्राप्त करने के लिये स्वतंत्रता दी जानी चाहिए।
3. क्रियात्मक विधि इस सिद्धान्त को स्वीकार करती है कि बालक सहज प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर ज्ञान अर्जन करता है।

4. क्रियात्मक विधि आन्तरिक क्रिया के इस सिद्धान्त पर आधारित है कि समस्त प्राणियों में एक आन्तरिक प्रक्रिया सदैव होती रहती है जिसे वे अभिव्यक्त करना चाहते हैं।
5. क्रियात्मक विधि इस सिद्धान्त का समर्थन करती है कि बालक में ज्ञान तन्तुओं के बजाय क्रिया तन्तु अधिक प्रबल होते हैं।
6. क्रियात्मक विधि इस सिद्धान्त को मान्यता देती है कि बालक का सर्वोत्तम विकास अपनी स्वयं की क्रिया द्वारा होता है।
7. क्रियात्मक विधि बालक की दो महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों पर आधारित है –
   (अ) अज्ञात की खोज करना
   (ब) ज्ञान को पुष्ट करना।
8. क्रियात्मक विधि इस मनोवैज्ञानिक सिधान्त पर आधारित है कि बालक की क्रिया चेतना के तीन स्तरों को प्रभावित करती है।
   (अ) चिन्तनात्मक
   (ब) निर्णय, एवं
   (स) रूचि संकल्प।

13.8.2 क्रियात्मक विधि का प्रयोग :–

पर्यावरण में क्रियात्मक विधि के प्रयोग में निम्न बातें ध्यान में रखना आवश्यक है –

1. क्रिया का स्थान कक्षाकक्ष या विषय वस्तु से संबंधित क्षेत्र हो सकता है। उदाहरणार्थ यदि शिक्षण पाठ मृदा संरक्षण का है तो क्रिया का स्थान कक्षाकक्ष या आसपास का कोई कृषि फार्म जहाँ मृदा संरक्षण की विभिन्न तकनीकों का प्रयोग होता हो, हो सकता है।
2. छात्रों द्वारा की जाने वाली क्रियाएँ शिक्षक द्वारा पूर्व नियोजित हो।
3. एक क्या के सभी बालक एक समय में एक ही क्रिया करें। उदाहरणार्थ यदि बालक पर्यावरण की किसी विषय–वस्तु पर प्रादर्श बना रहे हैं, तो सब एक ही प्रकार का प्रादर्श बनावें।

13.8.3 छात्र क्रियाओं के प्रकार :–

छात्र क्रियाएँ मुख्य रूप से तीन प्रकार की हो सकती हैं –

1. अनुभव प्राप्त करने वाली क्रियायें – इन क्रियाओं का उद्देश्य छात्रों द्वारा नये अनुभव प्राप्त करना है। ऐसा किसी स्थान की यात्रा करके किसी औद्योगिक संस्थान को देखकर या किसी वस्तु का निरीक्षण करके कर सकते हैं।
2. ज्ञान व्यक्त करने वाली क्रियायें – इन क्रियाओं का उद्देश्य बालकों द्वारा अर्जित किये गये ज्ञान को व्यक्त करना या दूसरों को बताना है। उदाहरणार्थ किसी क्षेत्र में एकत्र जानकारी को सूचना पटल पर लगाना, प्रदर्शन करना प्रकाशित करना आदि।
3. ज्ञान प्राप्त करने वाली क्रियायें – इन क्रियाओं का उद्देश्य छात्रों द्वारा ज्ञान प्राप्त करना है। उदाहरणार्थ छात्र इस बात का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं कि उनके विद्यालय के आपपास कौन–कौन से पौधे पाये जाते हे(वे ऐसा अपने शिक्षक एवं वन विभाग के कर्मचारियों से पूछकर कर सकते है।

13.8.4 क्रियात्मक विधि द्वारा शिक्षण के उद्देश्य –

1. पर्यावरण के प्रति धनात्मक अभिवृद्धि का विकास करना।
2. छात्रों में पर्यावरण से संतुलन स्थापित करने की क्षमता का विकास करना।

3. छात्रों को स्वयं की क्रिया द्वारा पर्यावरण की जानकारी देना ।
4. छात्रों को पर्यावरण का वास्तविक ज्ञान देना, क्योंकि, 'करके सीखने से ही वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति होती है। "

13.8.5 क्रियात्मक विधि की विशेषताएं :–

1. यह विधि छात्र को 'करके सीखने" का अवसर देकर ज्ञान के अर्जन को सुगम बनाती है।
2. यह विधि छात्र की पर्यावरण में रुचि उत्पन्न करती है।
3. इस विधि द्वारा शिक्षण से छात्र पर्यावरण के विषय में ज्ञान व अनुभव प्राप्त करने का स्वयं प्रयास करता है।
4. यह विधि बालक की स्वाभाविक क्रियाशीलता की इच्छा को संतुष्ट करती है।

13.8.6 पर्यावरण आधारित क्रियाओं के उदाहरण :–

1. ग्राम की नर्सरी में पाये जाने वाले पौधों का अवलोकन उसके विभिन्न भौतिक गुणों को लेखबद्ध करना।
2. घर में पाये जाने वाली जीवों का एकत्रीकरण करना।
3. अपने विद्यालय के पर्यावरणीय घटकों का विद्यालय पर पढ़ने वाले प्रभावों को लिखना।
4. ग्राम के सांस्कृतिक पर्यावरण पर लिखना।

13.9 साराश :–

पर्यावरण शिक्षण हेतु अनेक विधियां है। शिक्षक बालकों के मानिसक स्तर, अभिरूचियों तथा विषय–वस्तु को ध्यान में रखकर उपयुक्त शिक्षण विधि का चयन करता है।

समूह चर्चा बालकों में तर्क व सृजनात्मकता विकसित करने की दृष्टि से अच्छी विधि है, परन्तु इसमें बर्हिमुखी बालक ज्यादा क्रियाशील तथा संकोची स्वभाव के बालक मूकदर्शक बन कर रह जाते हैं। इस विधि में छात्रों की अधिक क्रियाशीलता रहने के कारण विषयान्तर होने की भी सम्भावना रहती है। प्रायोजना विधि में जीवन की स्वामाविक परिस्थितियों में किसी शैक्षिक समस्या को केन्द्र मानकर समाधान खोजने हेतु कार्य किया जाता है। यह अभ्यासात्मक, समस्यात्मक, कलात्मक व उत्पादनात्मक प्रकार की हो सकती है। इसमें विद्यार्थियों को स्वतंत्र चिंतन, परस्पर सहयोग, उत्तरदायित्व, श्रम के प्रति निष्ठा तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है। इस विधि से शिक्षण, में अधिक समय लगता है तथा सभी प्रकरण इस विधि से नही पढ़ाए जा सकते । यह विधि श्रम साध्य एवं खर्चीली होने के साथ–साथ जटिल प्रक्रिया वाली है। इस विधि को क्रमश: परिस्थिति का निर्माण प्रायोजना का चुनाव, योजना बनाना क्रियान्वयन, कार्य का मूल्यांकन एवं प्रतिवेदन लेखन आदि चरणों के अन्तर्गत पूर्ण किया जाता है।

समस्या समाधान विधि उच्च स्तरीय शिक्षण विधि है, जिसमें मात्र बौद्धिक क्रियाएँ ही सम्मिलित की जाती हैं। शेष सभी बिन्दुओं में यह प्रायोजना विधि से मिलती है। इससे वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है। यह विधि अधिक खर्चीली है तथा शिक्षकों के इस विधि में अप्रशिक्षित होने से इसका क्रियान्वयन सही नही हो पाता तथा यह विधि मात्र उच्च कक्षाओं के लिए ही उपयोगी है।

अवलोकन विधि में छात्र अपने आस–पास के पर्यावरण का ज्ञान अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा आत्मसात करता है। इससे उसमें जिज्ञासा, मौलिक चिंतन, आत्म निरीक्षण, आत्मावलोकन तथा

अभिव्यक्ति जैसे गुणों का विकास होता है। यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है, जिससे बालक का मानसिक एवं संवेगात्मक विकास होता है।

व्याख्यान विधि व प्रदर्शन विधि दोनों की अपनी–अपनी सीमाएं है। व्याख्यान–प्रदर्शन विधि में व्याख्यान के साथ–साथ प्रदर्शन भी किया जाता है। यह विधि पर्यावरण के जटिल पहुलओं का शिक्षण कराने के लिए रोचक एवं प्रभावी है। इस विधि से छात्रों को सैद्धान्तिक पक्ष के साथ–साथ व्यवहारिक ज्ञान भी प्राप्त होता है। व्याख्यान–प्रदर्शन अध्यापक द्वारा ही किया जाता है। अत: छात्रों में प्रदर्शन कौशल विकसित नही हो पाता है।

क्रियात्मक विधि "छात्र–क्रियाशीलता" के सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें बालक स्वयं की क्रियाओं द्वारा पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान प्राप्त करता है। इस विधि से बालकों में पर्यावरण के प्रति जिज्ञासा एवं अपनत्व की भावना पैदा होती है।

पर्यावरण का प्रत्येक प्रकरण हर विधि द्वारा नही पढ़ाया जा सकता। शिक्षक द्वारा विषयवस्तु एवं छात्रों के मानसिक स्तर के आधार पर उपयुक्त विधि का चयन किया जाता है।

13.10 स्व मूल्यांकन प्रश्न

1. समस्या समाधान विधि एवं प्रायोजना विधि में अन्तर बताते हुए दोनों विधियों के गुण दोषों की चर्चा कीजिए ।
2. क्रियात्मक विधि व अवलोकन विधि की तुलना कीजिए।
3. समूह चर्चा किसे कहते है? इसके लाभ व हानियां बतलाइए।

13.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Bana, Veena and Rajeev Bana : Paryavaran Shiksha, Research Publications, 89, Tripolia Bazar Jaipur–2.
2. Base, Narendra Singh (2005): Paryavaran Shiksha, Jain Prakashan Mandir, Jaipur.
3. Bhopal Singh (2005) : Paryavaran Shiksha, International Publishing House Meerut.
4. Dadhich, L. K. and A. P. Sharma (2002), Biodiversity : Strategies for Conservation, A.P.H. Publication, Udaipur
5. Deshbandhu and G. Berberet (1987) “Environment Education for Conservation and Devlopment, “Indian Env. Society, New Delhi.
6. Gupta, M. P. (2006) : Paryavaran Chintan, Rajasthan Vigyan Shiksha Parishad and Paryavaran Parishad, Kota (Rajasthan).
7. Pal, S. K. and Sudha Malhotra (1993) : Environment Trend and Thoughts in Education, Innovative Research Association, Allabhabad.
8. Saxena, A. B. (1986) : Environmental Education, National Psychological Corporation, Agra

9. Sharma, B. L. (2006) : Paryavaran Shiksha, Kavita, Prakashan New Sanganer Road, Sodala, Jaipura
10. Sharma, P. D. (1990) : Ecology and Environment, Rastogi Publication, Meerut (U.P.)

इकाई–14

Role of films, Audio visual Aids and Multimedia communications in Environment education

पर्यावरण शिक्षा में फिल्मों, श्रव्य–दृश्य साधनों तथा बहु आयामी संप्रेषण का योगदान

इकाई की रूपरेखा :

14.1 उद्देश्य

14.2 प्रस्तावना

14.3 पर्यावरण जागरूकता

14.4 पर्यावरण शिक्षा और संप्रेषण माध्यम

बोध प्रश्न–1

14.5 विभिन्न संप्रेषण माध्यमों की भूमिका

14.6 श्रव्य–दृश्य सामग्री का महत्व

बोध प्रश्न–2

14.7 सारांश

14.8 स्व मूल्यांकन प्रश्न

14.9 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

14.1 उद्देश्य:–

इस इकाई के अध्ययन से आप :–

- पर्यावरण शिक्षा में संप्रेषण की रणनीति की बारीकी को समझ सकेंगे।
- पर्यावरण शिक्षा में संप्रेषण माध्यमों की भूमिका की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- पर्यावरण शिक्षा एवं शिक्षण हेतु उपयोगी संप्रेषण माध्यमों के प्रयोग की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- विभिन्न संप्रेषण माध्यमों के उपकरणों की जानकारी के साथ उनके उपयोग हेतु सक्षम हो सकेंगे।

14.2 प्रस्तावना:–

पर्यावरणीय प्रदूषण पर सबसे पहले स्टाकहोम (स्वीडन) में संयुक्त राष्ट्र संघ ने पहले पर्यावरणीय सम्मेलन में विश्व का ध्यान आकृष्ट किया। इस सम्मेम में 119 राष्ट्रों ने भाग लिया और एक ही पृथ्वी के सिद्धान्त को स्वीकारते हुए यह उद्घोष किया।

'हमारे पास बस एक ही पृथ्वी है तथा इसे जीने लायक बनाए रखना है।'

सन् 1972 में आयोजित इस सम्मेलन में जारी घोषणा–पत्र में कहा गया था– मनुष्य का मूलभूत अधिकार है एक ऐसे पर्यावरण का, जिसमें सुखी और मान–मर्यादापूर्ण जीवन, स्वतन्त्रता, समानता और रहन–सहन की पर्याप्त सुविधाये उपलब्ध हों। साथ ही उस पर वह गम्भीर

उत्तरदायित्व भी है कि वर्तमान व भावी पीढ़ियों के लिए पर्यावरण को सुधारे व उसे सुरक्षित रखें। इस सम्बन्ध में रंगभेद नीति, जातीय पृथक्करण, भेदभाव, औपनिवेशिक और अन्य प्रकार के अत्याचार तथा विदेशी प्रभुत्व को बढ़ाया देना या उसे बनाये रखना अपराध है और उसे जड से समाप्त किया जाना चाहिए।

हमारी प्रकृति वायु जल, मिट्टी, वनस्पति, प्राणी आदि का सम्मिलित रूप है, जिसे हम पर्यावरण कहते हैं। स्वस्थ पर्यावरण में स्वस्थ मानव जीवन का वास सम्भव है। जनता पर्यावरण का अविभाज्य अंग होती है चूँकि पर्यावरण का उपयोग व दुरूपयोग उसी पर निर्भर करता है। मानवीय क्रिया–कलाप ही पर्यावरण की स्वच्छता व प्रदूषण के लिए उत्तरदायी है।

मनुष्य और पर्यावरण का आपसी सम्बन्ध मानवीय सभ्यता के विकास के साथ ही जुडा है। प्रारम्म में मनुष्य ने पर्यावरण को अपने वात्सल्य से सींचा और इसमें निहित विशाल वन, पशु खनिज और जल–सम्पदा का उपयोग क्रिया लेकिन कालान्तर में यही वात्सल्य भाव लुप्त होता गया और मनुष्य ने अपने भोग–विलास और आनन्द के लिए प्राकृतिक नियम विधानों से छेड–छाड करनी शुरू कर दी और उसके विधानों को चुनौती दी। प्राकृतिक नियमों के साथ वही खिलवाड आज पर्यावरणीय प्रदूषण के रूप में विश्व के सम्मुख चुनौती के रूप में उभरा है।

आज मनुष्य ने अपने कुछ निहित स्वार्थो और आवास सुविधाओं की वृद्धि हेतु जंगलों की सफाई करनी शुरू कर दी है। इससे एक ओर जहाँ अकाल की विभीषिका से हमें जूझना पड़ रहा है वही रेगिस्तान का भी फैलाव हुआ है। वृक्षारोपण से रेगिस्तान के फैलाव को रोका जा सकता है। खानों से कोयला तथा अन्य खनिज एवं पैट्रोलियम पदार्थो को जिस तेजी से निकाला जा रहा है, उससे इनके भण्डारों के समापन का खतरा तो हो ही गया है, साथ ही भूकम्प, बाढ आदि प्राकृतिक विपदाओं को अधिकता से पर्यावरणीय सन्तुलन भी बिगड गया है।

ऐन्द्रिय भोगों के लिए अधिकाधिक साधन जुटाने और धनार्जन के नाम पर बढते शहरीकरण, आवसायीकरण और औद्योगीकरण से दिन–प्रतिदिन कल–कारखानों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। इनकी चिमनियां जहरीला धुँआ उगल कर आस–पास के वातावरण को भी जहरीला बना देती है। विभिन्न राष्ट्रों के द्वारा किये जाने वाले आणविक विस्फोटों ने भी पर्यावरण को प्रदूषित किया है। वायुयानों, राकेटों, स्कूटरों, कारों, कल–कारखानों में चलती मशीनों आदि का धुँआ ही नहीं, ध्वनि भी आज प्रदूषण का प्रमुख कारण है। इन ध्वनि–तरंगो की शक्ति इतनी तीव्र होती है कि वह मानव शरीर के संवेदनशील तन्तुओं पर अपना कुप्रभाव डाल कर उन्हें नष्ट कर देती है।

वायु और ध्वनि के साथ–साथ जल प्रदूषण भी आज की प्रमुख समस्या है। कारखानों से निकलने वाले अन्तिम या अनुपयोगी पदार्थ नदियों के जल में प्रवाहित कर दिये जाते हैं। इस कारण पदार्थो में उपस्थित रासायनिक पदार्थ जल को प्रदूषित कर देते हैं। यहाँ मेरा तात्पर्य इतना संकेत मात्र करना है कि कथित वैज्ञानिक चरमोत्कर्ष की चकाचौंध के पीछे जो वीभत्स और प्रदूषित पक्ष है, उस पर हमें विचार करना है।

14.3 पर्यावरण जागरूकता :–

आम जनता को इस संकट के प्रति सचेत बनाना समय की प्रमुख आवश्यकता है। पर्यावरण के प्रति जन–चेतना विकसित करने के लिए हमें महत्वपूर्ण उपाय खोजने पडेंगे। हमें यह कभी नहीं भूलना है कि मनुष्य को प्रकृति का सहचर बनना होगा. उसी के साथ कार्य करना

होगा। उसके विरूद्ध कार्य करना बन्द करना होगा। आज जिस तथाकथित विकास की बात हम कर रहे हैं, उसे पर्यावरण के परिपेक्ष में विश्लेषित करना होगा। इस बात पर आज व्यापक बहस की आवश्यकता है कि विकास हम किस प्रकार करें। पर्यावरण की कीमत पर किया गया विकास अस्थायी ही होगा। उससे उत्पन्न लाभ क्षणिक आनन्दानुभूति तो करा देंगे किन्तु उनके दूरगामी परिणाम भयावह ही होंगे। अत: आज आवश्यकता इस बात की है कि हमारे नीति–निर्माता जो इस विकास की प्रक्रिया का निर्धारण करते हैं, पर्यावरणीय प्रदूषण जैसे मूलभूत पक्षों पर विचार करके उनके नियन्त्रण के लिए रचनात्मक योजनायें भी तैयार करें।

भारतीय साहित्य में प्रकृति का विशेष महत्व रहा है। महाकाव्यों के लक्षण बताते हुए प्रकृति के चित्रण को अनिवार्य लक्षण बताया गया है। पंत, प्रसाद, महादेवी जैसे अमर रचनाकारों की रचनाओं में प्रकृति का मानवीकरण देखने को मिलता है। यह प्रकृति उनकी सखी–सहेली है, जिसके सान्निध्य में वे अपना जीवन निर्माण करते हैं, खेलते–कूदते है। कहीं यह प्रकृति वात्सल्यमयी माँ है तो कहीं प्रेरक प्रेयसी। इस प्रकार प्रकृति को विविध सन्दर्भो में देखकर इन रचनाकारों ने मानवीय भावों का मनोरम चित्रण किया है। मनुष्य प्रकृति पर शासन का अधिकार करके सुखी और स्वस्थ नहीं रह सकता। उसे तो प्रकृति की गोद में रहकर ही अपना विकास करना है। प्रकृति का यह सान्निध्य ही उन्हें जीवन के रहस्यों से परिचित कराता है। भगवान बुद्ध को बोधित्व की प्राप्ति भी वृक्ष की छांह में ही हुई थी। डॉ. प्रेम सुमन जैन ने लिखा है–

'देश के शासकों ने प्रकृति के संरक्षण को अपना दायित्व माना है। उसकी सेवा के लिए उन्होंने अपने राज्य छोड दिए हैं। राजा दिलीप पशु और प्रकृति की सेवा के लिए प्राण निछावर करने के लिए तैयार थे। भगवान राम का बनवास प्रकृति के उद्धार के लिए था। सम्राट अशोक ने सड़क के दोनों ओर वृक्षों को लगवाया एवं स्थान–स्थान पर वनस्पतियों और औषधियों की खेती कराना अपना प्रथम कर्तव्य माना है। धरती की पुत्री और उसके पुत्र लव–कुश प्रकृति की गोद में ही संसार की अवमानना को झेल सके हैं। शकुन्तला और उसके पुत्र भरत ने प्रकृति से ही अपने अधिकारों को पुनः प्राप्त करने का पाठ सीखा है। वृन्दावन के परिवेश में ही कृष्ण की बांसुरी को सुरीलापन मिला है।" 1

14.4 पर्यावरण शिक्षा और माध्यम :–

स्पष्ट है कि प्रकृति से प्रेम करना भारत की परम्परा रही है और आज इसी परम्परा का निर्वाह करने के लिए जनमत हमें तैयार करना है। वृक्षारोपण तथा वन्य जीवन की रक्षा आदि का भाव जन–जन तक पैदा करना है। इस दिशा में संप्रेषण माध्यमों, पत्र–पत्रिकाओं, रेडियो, टी.वी. आदि को विशेष भूमिका का निर्वाह करना होगा।

यह दुर्भाग्य की बात है कि आज के हमारे ये माध्यम राजनीतिक समाचारों तथा घटनाओं से बुरी तरह आक्रांत हैं। राजनीति के प्रति पूर्वाग्रहता के कारण अन्य महत्वपूर्ण पक्ष छूट जाते हैं, जिसमें पर्यावरण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं तथा दृश्य–श्रव्य माध्यमों पर दृष्टिपात करने पर यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि इन माध्यमों के द्वारा पर्यावरणीय शिक्षा अथवा चेतना की सामान्यत: उपेक्षा की जाती रही है। पर्यावरणीय समाचारों की कवरेज प्राय: कम ही होती है। पर्यावरण सबन्धी विशेष आयोजनों पर महत्वपूर्ण व्यक्तियों के भाषणों की रिपोर्ट मात्र प्रस्तुत कर ये माध्यम अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ लेते है। इस सन्दर्भ में पृष्ठभूमि के रूप में सूचनायें तथा उनके फोलो अप की प्रवृत्ति का आज की पत्रकारिता में भारी

अभाव है। गत एक दो वर्षों में कुछ प्रमुख राष्ट्रीय पत्रों ने पर्यावरण सम्बन्धी लेखों व सूचनाओं को प्रमुखता से प्रकाशित करने का सिलसिला प्रारम्भ किया है। समाचार पत्रों के परिशिष्टों में भी पर्यावरण सम्बन्धी सूचनाओं / समाचारों के प्रकाशन की प्रकृति का भी पिछले वर्षों में विकास हुआ है।

इस बात में कोई सन्देह नहीं कि पर्यावरणीय चेतना के विकास में मीडिया के उपयोग की भारी सम्भावनायें हैं। आज इन्हें चाहिये कि ये देश में चल रही विविध परियोजनाओं से मानवीय जीवन पर पड़ने वाले प्रमादों से पाठकों को परिचित करायें। वे उन परियोजनाओं के संचालकों और सरकार को इस रात के लिए बाध्य करने का वातावरण तैयार करें कि इनसे उत्पन्न मानवीय जीवन के खतरे को नियन्त्रित किया जाए, रोका जाये। कुछ पत्रों ने इस दिशा में सराहनीय कार्य भी किया है। पर्यावरणविदों की ओर से समय–समय पर चलाये जा रहे आन्दोलनों को भी मुद्दों के रूप में प्रस्तुत करने की ओर पत्र–पत्रिकाओं ने ध्यान देना शुरू किया है। प्रदूषण से ताजमहल को उत्पन्न खतरे पर जो राष्ट्रव्यापी बहस प्रारम्भ हुई है, उसका श्रेय समाचार–पत्रों को ही है, इसी भांति भोपाल गैस त्रासदी की पूर्व संभावनाओं का संकेत समाचार पत्रों ने कर दिया था। त्रासदी के बाद उन पत्रकारों को पुरस्कृत किया गया किन्तु हमें चाहिये था कि समय रहते हम सावधान होते ताकि इतनी बड़ी दुखान्तिका से बचा जा सकता ।

समाचार पत्र हमारे समाज के नेत्र और कान' हैं। वे समाज की धडकनों, स्पन्दनों को महसूस कर करते हैं। अत: उन्हें चाहिए कि वे राजनीति, अपराध, सैक्स और हिंसा जैसे समाचारों के चक्रव्यूह से बाहर निकल दूसरी ओर भी दृष्टि डाले। मानवीय अस्तित्व के लिए जो गहरी चुनौतियां आज उभर रही हैं, उन्हें पहचाने और जनमत तैयार करें। पर्यावरण सम्बन्धी विविध शोधों को आम पाठक तक पहुंचाने के लिए इन माध्यमों को सचेत होना होगा। इस दृष्टि से जहां दैनिक पत्र नियमित परिशिष्टों का प्रकाशन कर सकते हैं वही अन्य पत्र–पत्रिकाओं में कुछ ऐसे स्तम्भों का प्रकाशन किया जा सकता है, जो पर्यावरण की समस्या से सम्बद्ध हों। इन स्तम्भों के माध्यम से हमें आम जन को भी इनके साथ जोडना चाहिए।

यह तथ्य है कि देश में साक्षरता का प्रतिशत कम होने के कारण समाचार पत्रों सहित मुद्रित माध्यमों का व्यापक प्रभाव नहीं पड़ पाता किन्तु फिर भी बौद्धिक वर्ग को सजग और जागरूक करने की दृष्टि से मुद्रित माध्यमों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा किये जा रहे कार्या को ये माध्यम प्रोत्साहन देकर उनके कार्यो को जन आन्दोलन के रूप से परिणित कर सकते हैं। इसी प्रकार छोटे–छोटे स्तर परे होने वाले प्रयासों को भी प्रमुखता देना मीडिया की जिम्मेदारी है।

आज मुद्रित एवं दृश्य–श्रव्य माध्यमों से प्रचारित– प्रसारित विज्ञापनों में नारी की छवि का अत्यधिक प्रयोग किया जा रहा है। इन विज्ञापनों ने नयी उपभोक्तावादी संस्कृति उत्पन्न कर दी है। उपभोक्तावादी संस्कृति ने हमें प्रकृति का उपभोग करना सिखाया है, उपयोग करना नहीं। अत: हमें ऐसी स्थिति पर विचार करना होगा, जिसमें हम प्रकृति का उपभोग नहीं, संरक्षण करें। इस हेतु विज्ञापनों में प्रकृति का रचनात्मक उपयोग करने की सम्भावनाओं नाओं की दिशा में हमें कार्य करना होगा।

आकाशवाणी और दूरदर्शन सहित विभिन्न रेडियो व टी.वी. चैनल पर्यावरणीय चेतना उत्पन्न करने के सबसे सशक्त माध्यम हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इन माध्यमों का सार्थक ढंग से उपयोग हो। रेडियो पर शब्द और संगीत के माध्यम से ऐसे प्रभावशाली कार्यक्रम

प्रसारित किये जाने चाहिये, जिनमें श्रोताओं को पर्यावरण प्रदूषण के खतरों से आगाह किया जावे। सामुदायिक रेडियो प्रसारण तथा निजी एफ.एम. रेडियो चैनलों पर पर्यावरण सम्बन्धी विशेष अवसरों पर जागरूकता पैदा करने के कार्यक्रम प्रसारित होने लगे हैं। यह स्वागत योग्य सराहनीय प्रयास है। ये कार्यक्रम मात्र उपदेशात्मकता या वक्तव्यों तक सीमित न रहें वरन् उनका प्रस्तुतीकरण कलात्मक तथा भावप्रवण हो, जो सीधे श्रोता के मन को छुए।

टेलीविजन रेडियो से भी अधिक प्रभावी हो सकता है। टेलीविजन के पास शब्द से साथ–साथ दृश्यात्मक शक्ति है। पर्यावरणीय खतरों को टी.वी. फिल्म के माध्यम से अपने दर्शक तक पहुँचा सकता है। जब दर्शक स्वयं उस परिस्थिति का साक्षात्कार सजीव रूप से करता है तो निश्चित ही उसकी चिन्तन–प्रक्रिया उससे प्रभावित होती है। अत: प्रशिक्षित और विशेषज्ञ व्यक्तियों को पर्यावरणीय समस्याओं से जुडी प्रभावी, कल्पनाशील व रचनात्मक फिल्में तैयार करनी चाहिए, जिनका प्रदर्शन कर जन–भावनाओं को आन्दोलित किया जा सकता है। दूरदर्शन पर लम्बे समय तक कुछ स्लोगन कैप्शन के रूप में दिखाए जाते रहे हैं जैसे–

जन–जन को यही बताना
पर्यावरण को शुद्ध बनाना
आओ सुन्दर देश बनाये
हरे भरे हम पेड़ लगाये ।

स्वच्छ हवा नीला आकाश
हरियाली का करो ना नाश।
पर्यावरण के चार दुश्मन
जल,थल,वायु,ध्वनि प्रदूषण
बिना बात क्यों हार्न बजाये
ध्वनि प्रदूषण क्यों फैलायें।

धूल धुँआ और बढता शोर
धरती चली नाश की ओर।
वृक्ष लगाओ, जीवन पाओ।

बूढ़े, बच्चे और जवान
सफल करो पर्यावरण अभियान।
हम सब करें प्रकृति का मान
पर्यावरण का रखें ध्यान।

इस प्रकार के स्लोगन आज जन–जन के कण्ठ से उच्चरित होने चाहिए। आज का बालक जिस प्रकार फिल्मी संगति गुनगुनाता है या चार–पाँच साल का बच्चा जिस प्रकार विज्ञापनों के प्रसारित होते समय उनकी लय के साथ झूमने लगता है तो क्या हम पर्यावरण सम्बन्धी ऐसे रोचक कार्यक्रम संगति अथवा अन्य किसी माध्यम से तैयार नहीं कर सकते जिन्हें देखते समय आज की पीढ़ी इस प्रकार के गीत गुनगुनाने लगे। उनकी यही गुनगुनाहट न सिर्फ मौखिक संचार के द्वारा जन–जन तक पहुँचने लगेगी वरन् परिपक्वता की अवस्था में आज की पीढ़ी पर्यावरण के प्रति स्वत: सचेत होने लगेगी।

मोबाइल क्रान्ति ने भी आज की दुनिया में संचार के क्षेत्र में उथल–पुथल मचा दी है। इस तकनीक ने एसएमएस जैसे नये जीवन संस्कार हमें दिया है। यदि पर्यावरण से जुडे ऐसे संदेश इस नयी पद्धति से दिए जा सकें तो हम पर्यावरण के प्रति जगरूकता पैदा कर सकते है।

मुद्रित तथा दृश्य एवं श्रव्य माध्यमों के साथ–साथ हमें अपने परम्परागत माध्यमों का भी उपयोग करना होगा। पारंपरिक लोक नाट्यों, कठपुतलियों और लोक कलाओं का उपयोग पर्यावरणीय चेतना के विकास का सबल आधार बन सकता है। आज हमारी वह ग्रामीण संस्कृति जिसकी पहुँच इन आधुनिक संचार माध्यमों तक नहीं हो सकी है– उन्हें हम उनकी ही संस्कृति और भाषा में यदि इस प्रकार के संस्कार दे सके तो निश्चय ही अपने उद्देश्यों में सफल होंगे।

हमारा उद्देश्य है पर्यावरण के प्रति जन चेतना जागृत करना। यह पर्यावरण तभी स्वच्छ रहेगा जब इसके लिए जन आन्दोलन प्रारम्भ हो सके, पर्यावरण सुधार हमारी निजी आवश्यकता का हिस्सा बन सके और यह कार्य संप्रेषण–माध्यमों के सही और प्रभावी उपयोग से ही सम्भव है।

बोध प्रश्न-1

1. मनुष्य और पर्यावरण मे आपसी सम्बंध बतलाइये।
2. प्रदूषण की समस्या मे वृद्धि की जानकारी दीजिये।
3. पर्यावरण के प्रति जागरूकता की क्या आवश्यकता है?
4. भारतीय साहित्य मे प्रकृति के महत्व को स्पष्ट कीजिये।

14.5 विभिन्न संप्रेषण माध्यमों की भूमिका:–

उपरोक्त से अब यह स्पष्ट हो गया है कि विभिन्न संप्रेषण विशेषकर श्रव्य दृश्य साधनों से ज्ञानात्मक एवं भावात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। इनके प्रयोग से दृश्य इन्द्रियों को अधिक क्रियाशील रखा जा सकता है। इसमें अधिगम प्रत्यनों को अधिक सरल तथा व्यापक रूप से उत्पन्न किया जा सकता है। विभिन्न संप्रेषण माध्यमों में प्रमुखत: टेलीविजन, सिनेमा, फिल्म, वीडियो, टेप, रेडियो, ग्रामोफोन आदि से पर्यावरण के प्रति लोगों को अधिक जागरूक बनाया जा सकता है।

14.6 श्रव्य–दृश्य सामग्री का महत्व:–

श्रव्य दृश्य सामग्री के महत्व को स्पष्ट करने के लिए कुछ लेखकों के विचार इस प्रकार है।

1. मेककलसकी : उचित प्रकार से प्रयोग किये जाने पर श्रव्य–दृश्य सामग्री उन अनेक गुणों को उत्पन्न नहीं होने देती है, जो साहित्यिक भाषा के कारण उत्पन्न होते है।"
2. क्रोदको : "श्रव्य–दृश्य उपकरण सीखने वालों को व्यक्तियों घटनाओं, वस्तुओं और कारण तथा प्रभाव सम्बन्धों के नियोजित अनुभवों से लाभ उठाने का अवसर देते है।"
3. विष्टिय व शुलट : "श्रव्य–दृश्य विधियां एवं वस्तुएं भावपूर्ण सीखने, प्रबल छात्र रूचि और उत्साह तथा विद्यालय में सफलता के लिए अति लाभदायक आधार है।"
4. मकोन व राबर्टस के शब्दों में : "शिक्षक इन उपकरणों के उपयोग द्वारा बालक की एक से अधिक इन्द्रियों को प्रयोग में लाकर पाठ्य वस्तु को सरल रूचिकर सुस्पष्ट, प्रभावशाली व स्थायी बनाता है। "

शिक्षण सहायक सामग्री का विशेष महत्व है। इनकी सहायता से छात्र सीखते है। सीखना सामग्री की उपयुक्ता पर निर्भर करता है। श्रव्य–दृश्य सामग्री अधिगम को अधिक सशक्त बनाती है। विशेष रूप से कम बुद्धि लब्धि वाले छात्रों को ज्ञान प्राप्त कराने में यह बहुत सहायक है। इनके महत्व को निम्न बिन्दुओं से व्यक्त किया जा सकता है।

1. व्याख्यान विधि से उपयोग के कारण छात्र शब्दों के वाक जाल में उलझ जाता है। इसका भाग विषय से भटक जाता है और वह कक्षा में उपस्थित रहते हुये भी अच्छी तरह नहीं सीख पाता है किन्तु श्रव्य दृश्य सामग्री के उपयोग से छात्र का ध्यान पाठ्य विषय की और आकर्षित व केन्द्रित किया जा सकता है।
2. यह विभिन्न प्रयोगों के स्पष्टीकरण में सहायक है।
3. शिक्षण की निरस्ता को समाप्त कर शिक्षण को रोचक बनाती है।
4. यह विभिन्न तथ्यों, प्रत्ययों एवं सिद्धान्तों के ज्ञान के स्पष्टीकरण में सहायक होती है।
5. अनेक वस्तुओं पदार्थो का प्रदर्शन कक्षा में नहीं किया जा सकता है ऐसे पदार्थो या वस्तुओं को विभिन्न दृश्य–श्रव्य सामग्री के माध्यम से छात्रों के समुख प्रस्तुत किया जा सकता है।
6. इस सामग्री के माध्यम से समय की बचत होती है और प्राप्त ज्ञान स्थायी व प्रभावशाली होता है।

शिक्षा शास्त्रियों द्वारा यह कहा गया है कि अधिगम अर्जित करने की दृष्टि से प्रत्यक्ष एवं मूर्त अत्यधिक सहज एवं स्वाभाविक होते हैं, ज्यों–ज्यों हम प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर बढते हैं और मूर्त से अमूर्त की ओर बढते है तो विद्यार्थी को अधिगम अर्जित करने के लिए विशेष प्रयास करना है। एडगर ने इसी तथ्य को अनुभवों के शंकु द्वारा प्रदर्शित किया है।

1. शब्द प्रतीक (Verbal Symbols)
2. दृश्य प्रतीक (Visual Symbols)
3. स्थिर चित्र एवं रेडियो प्रसारण (Still Picture and Radio Broadcasting)
4. चलचित्र (Feature Film)
5. प्रदर्शनी (Exhibition)
6. भ्रमण (Field Trips)
7. प्रदर्शन (Demonstration)
8. नाट्य अनुभव (Dramatised)
9. प्रति स्थापित अनुभव (Contrivied Experiences)
10. प्रत्यक्ष–प्रयोजनशील अनुभव (Direct Purposeful Experiences)

इस अनुभव के शंकु का आधार प्रत्यक्ष एवं प्रयोजनशील अनुभव है ज्यों–ज्यों आधार से शंकु की ओर बढते है समझने की प्रक्रिया बढ़ती जाती है।

बोध प्रश्न-2

1. पर्यावरण जागरूकता में समाचार पत्रों का महत्व बतलाइये।
2. पर्यावरण जागरूकता हेतु आकाशवाणी और दूरदर्शन की उपयोगिता स्पष्ट कीजिये।
3. पर्यावरण मे दृश्य श्रव्य माध्यम का उपयोग बतलाइये।

14.7 सारांश :–

आधुनिक शिक्षा बाल केन्द्रित है शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना है। इस उरदेश्य की प्राणि के लिए बालक को योग्यता, मनोवृति रूचि आदि को ध्यान में रखकर शिक्षण में विभिन्न विधियों, उपायों, साधनों. उपकरणों आदि का प्रयोग करना पडता है। पाठ की रूचिकर आकर्षक, सजीव, सरल तथा बोधगम्य चनाने के लिए जिन साधनों से अत्यधिक सहायता मिलती है। उन्हें शिक्षण की सहायक सामग्री कहा जाता है। आधुनिक वैज्ञानिक एवं यांत्रिक युग ने ऐसे बहुत से साधन शाला को उपलब्ध करा दिये हैं जो शिक्षा को प्रभावशाली एवं स्थायी बनाने में सहायक सिद्ध हुये है।

वह शिक्षण परिस्थिति प्रभावशाली मानी जाती है जिनके प्रति अन्तर्क्रिया के लिए शिक्षार्थी को सभी ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग करना होता है। ऐसी अन्तर्क्रिया को प्रबल एवं सजीव अन्तर्क्रिया कहते हैं जिसमें सभी ज्ञानेन्द्रियों के उपयोग की सम्भावनाएं होती है। उदाहरण के लिए जब शिक्षक किसी विचार को स्पष्ट करने के लिए विवरण प्रस्तुत करता है, तो विद्यार्थी विवरण को ध्यानपूर्वक सुनता है। इस उदाहरण में अन्तर्क्रिया का माध्यम श्रवणेन्द्रियों को माना गया है किन्तु जब शिक्षक विवरण प्रस्तुत करने के साथ–साथ मानचित्र अथवा रेखाचित्र की सहायता लेता है तो इस बार शिक्षार्थी श्रवणेन्द्रियों के साथ–साथ दृश्येन्द्रियों को भी अन्तर्क्रिया का माध्यम बनाता है। अत: यह कहा जा सकता है कि पहली प्रतिक्रिया की तुलना में दूसरी प्रतिक्रिया अधिक प्रबल है किन्तु यदि विद्यार्थी स्वयं मानचित्र अथवा माडल बनाता है तो इस बार पिछली दो परिस्थितियों की तुलना में अधिक ज्ञानेन्द्रियां सक्रिय होती है। अत: अन्तिम परिस्थिति सबसे अधिक प्रभावशाली है।

14.8 स्व मूल्यांकन प्रश्न:–

1. पर्यावरण के प्रति जन चेतना जागृति का उद्देश्य कैसे पूरा क्रिया जा सकता है। अपने विचारों से अवगत कराइए।
2. पर्यावरण शिक्षा में विभिन्न संप्रेषण माध्यमों की क्या भूमिका है।
3. परम्परागत संचार माध्यमों का पर्यावरण शिक्षा विस्तार में किस प्रकार लाभ उठाया जा सकता है।
4. दूरदर्शन पर पर्यावरण स्लोगन दिखाने से क्या सकारात्मक प्रभाव संभव है। स्पष्ट कीजिए।

14.9 सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पुरोहित जगदीश नारायण शिक्षा के लिए आयोजन राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर

2. पाठक पी.डी.	सफल शिक्षण कला विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा
3. जैन अमीरचन्द	सामाजिक अध्ययन शिक्षण राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
4. शर्मा डा. एगर. एवं डा. सुधा शर्मा	शैक्षिक प्रौद्योगिकी हर प्रसाद भार्गव, आगरा
5. अवस्थी पी.एन.	नागरिक शास्त्र शिक्षण विधि मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
6. Dale Edgar	Audio–Visual Methods in Teaching New York Dryden Press(1957)
7.दीक्षित उपेन्द्र नाथ	इतिहास शिक्षण
8.वघेला खेत सिंह	राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
9. Bhatia Kamala & Bhatia B.D	The Principales and Methods of Teaching Doba House, New Delhi

इकाई–15

Role of different agencies UNEP,WWF,Friends of trees, NGO and other Government organizations विभिन्न संगठनों संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, विश्व प्रकृति निधि, वृक्ष मित्र, गैर सरकारी संगठन तथा अन्य सरकारी संस्थाओं का योगदान

इकाई की रूपरेखा :

15.1 उद्देश्य

15.2 प्रस्तावना

15.3 विश्व प्राकृति निधि

15.3.1 विश्वव्यापी प्राकृति निधि–एक परिचय

15.3.2 विश्व प्रकृति निधि का योगदान

बोध प्रश्न–!

15.4 संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम

15.4.1 संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम–एक परिचय

15.4.2 संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम का योगदान

बोध प्रश्न–2

15.5 वृक्षों के मित्र

15.5.1 वृक्षों के मित्र – एक परिचय

15.5.2 वृक्षों के मित्र – योगदान

बोध प्रश्न–3

15.6 गैर सरकारी संगठन

15.6.1 गैर सरकारी संगठन – एक परिचय

15.6.2 गैर सरकारी संगठनों का योगदान

बोध प्रश्न–4

15.7 सरकारी संस्थान

15.7.1 सरकारी संस्थान–एक परिचय

15.7.2 सरकारी संस्थान का योगदान

बोध प्रश्न–5

15.8 सारांश

15.9 स्व मूल्यांकन प्रश्न

15.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

15.1 उद्देश्य:–

इस इकाई ने अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. इसके अध्ययन से आप यह समझ पाएँगे कि स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कौन–कौनसे संगठन कार्य कर रहे हैं।
2. इसके अध्ययन से आप यह समझ पाएँगे कि पर्यावरण सम्बन्धी जानकारियाँ कौन–कौनसी संस्थाओं एवं उनके द्वारा प्रसारित पत्रिकाएँ /रिर्पोटों से प्राप्त की जा सकती हैं।

15.2 प्रस्तावना :–

Global Environmental Movement की कब शुरुआत हुई यह निश्चित तौर पर नही कहा जा सकता, लेकिन इतना निश्चित है कि Global Movement की शुरुआत धीरे–धीरे एवं स्वतन्त्र रूप से स्थानीय मुद्दों को लेकर हुई है एवं अलग–अलग स्थानों पर हुई है। स्थानीय समूह धीरे–धीरे राष्ट्रीय आन्दोलन के रूप में आने लगे एवं द्वितीय विश्व युद्ध के बाद तो यह बहुराष्ट्रीय आन्दोलनों (Multi National Movement) के रूप में कार्य करने लग गए। प्रारम्भ में यह संगठन प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के ज्ञान जो देश की सीमाओं के लोग कर सोचते थे और फिर आगे चलकर कई Conservationist समूहों को बनाया। 1900 के आसपास African Convention एवं 1993 में Western Hemisphere Convention से सिद्ध होता है कि अन्तर्राष्ट्रीय समन्वय का प्रारम्भ तय हो चुका है, बाद के वर्षों में IUCN, WWF, IUPN, UNEP आदि का गठन होकर इस प्रक्रिया को दूर मजबूत आधार मिला। साथ ही कई सरकारी संगठन, गैर सरकारी संगठन भी फिर इससे जुडते गए, आज की तारीख में तो न्यायपालिका की पर्यावरण सम्बन्धी मामलों में सीधा दखल देने लग गई है। इस संगठनों का ही परिणाम है कि आज राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण समस्याओं के मापदण्ड निर्धारित हो चुके हैं कि प्रदूषण किस सीमा तक सहन करने योग्य है एवं अगर है तो इसे किस प्रकार हम धीरे–धीरे कम करके निम्नतम स्तर पर निश्चित समय में ला तकते हैं, इसकी प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई है।

15.3 विश्व प्रकृति निधि :–

15.3.1 विश्व प्रकृति निधि–एक परिचय :–

यह एक विश्वव्यापी संस्था है जो प्राकृतिक वातावरण का संरक्षण, अनुसंधान एवं उसका Restoration करती है। प्रारम्भ में इसे World Wide Fund (WWF) कहा जाता था। इसकी स्थापना 11 सितस्वर, 1981 को हुई थी। इसका मुख्यालय स्वीट्ज़रलैण्ड में स्थित है।

विश्व प्रकृति निधि प्राय: विश्व के प्रमुख देशों में जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका कनाडा, पश्चिमी जर्मनी, जापान, भारत, ब्रिटेन आदि में शाखाऐं स्थापित हैं। भारत में इसकी शाखा नई दिल्ली के लोदी एस्टेट में स्थित है। विभिन्न देशों में स्थित इसकी शाखाएँ अपने राष्ट्र तथा क्षेत्र में स्थानीय स्तर पर वन्य जीव संरक्षण तथा दुर्लभ वन्य प्राणियों को विलुप्त होने से बचाने के लिए कार्य कर रही हैं। इसके प्रारम्भ में अध्यक्ष प्रिंस वर्न हार्ड थे जबकि वर्तमान में चीफ एम.ए.एनीयाकु हैं।

15.3.2 विश्व प्रकृति निधि का योगदान :–

11 सितंबर, 1961 को जैसे ही World Wide Fund के नाम से यह संगठन अस्तित्व में आया था तो इसने विश्व के फ्लोरो, फोना, वन, जल, मृदा आदि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना आरम्भ कर दिया। उनका उचित प्रबन्ध एवं अनुसंधान कर सभी को इस क्षेत्र में शिक्षा, सूचना तथा जानकारियाँ देना प्रारम्म कर दिया। बाद के वर्षो में इस संगठन ने अपने कार्यालय तथा कार्यक्षेत्र को अन्य क्षेत्रों में भी बढ़ाया है। जैसे–जैसे नए संसाधन इन्हें मिलने लगे उन्होंने जैव विविधता के संरक्षण प्राकृतिक संसाधनों का सतत् उपयोग, प्रदूषण में कमी की ओर भी ध्यान दिया।

1986 में इसका नाम World Wide Fund For Nature हो गया, हालांकि अमेरिका एवं कनाडा में इसे अभी भी पुराने नाम से ही जाना जाता है।

इसकी भारतीय इकाई के प्रमुख संरक्षण कार्यक्रम निम्न हैं :–

1. प्राकृतिक संरक्षण सम्बन्धी सूचनाओं का आदान प्रदान।
2. संरक्षण कार्य एवं इसके प्रगति का नियन्त्रित विश्लेषण।
3. जन साधारण को पर्यावरण सुरक्षा के बारे में शिक्षित करना।
4. पर्यावरण सम्बन्धी कानूनों एवं अधिनियमों की जानकारी।
5. वन एवं जैव विविधता संरक्षण
6. समुद्रों, महानगरों एवं समुद्रतटीय प्राकृतिक सम्पदा का संरक्षण।
7. बाघ एवं अन्य वन्यजीवों का संरक्षण।

सामान्य जन को पर्यावरण सुरक्षा एवं प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु शिक्षित करने एवं आवश्यक जानकारी प्रदान करने में बहुत योगदान है। साथ ही साथ इसकी इकाईयों द्वारा ग्रामवासियों की दैनिक जरूरतों एवं रोजगार के साधनों की आपूर्ति सुनिश्चित करते हुए वन्य जीवों की सुरक्षा एवं प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण प्रदान किया जाता है।

अपनी गतिविधियों की जानकारी देने के लिए यह भी WWF News letter नामक पत्रिका प्रकाशित करता है।

बोध प्रश्न - 1

1. विश्वव्यापी प्राकृतिक निधि का मुख्यालय कहाँ है?
2. विश्वव्यापी प्राकृतिक निधि के कार्यक्षेत्र क्या-क्या हैं?
2. विश्वव्यापी प्राकृतिक निधि की भारतीय इकाई के क्या कार्यक्रम है?

15.4 संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम:–

15.4.1 संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम–एक परिचय :–

यह 1972 में संयुक्त राष्ट्र के मानव पर्यावरण पर एक अधिवेशन के बाद अस्तित्व में आया था। यह Sweden के Stockholm नामक स्थान पर हुआ था, जिसमें यह धारणा विकसित हुई थी कि संयुक्त राष्ट्र तन्त्र में एक संगठन का निर्माण हो जो पर्यावरण चेतना को बनाए रखे।

संयुक्त राष्ट्र की सामान्य सभा ने इस मत को स्वीकार किया जिसे Resolution 2997 कहते हैं और यह 15 दिसम्बर 1972 से लागू हुआ। इसकी गवर्निंग कॉसिल के 58 सदस्य हैं, जो कि विश्व के अलग–अलग क्षेत्रों से 4 वर्षो के लिए चुने जाते हैं। इसका सचिवालय केन्या के

नैराबी नामक स्थान पर है। संयुक्त राष्ट्र के सामान्य बजट से इस कार्यक्रम को पैसा भी प्राप्त होता है। पिछले दो–तीन दशकों में इसके द्वारा कई कॉन्फ्रेंस सन्धियाँ करवाई गई हैं जो कि विभिन्न पर्यावरण मुद्दों जैसे लुप्त होती हुई प्रजातियों का संरक्षण, अत्यन्त हानिकारण कचरे के आवागमन पर नियन्त्रण तथा ओजोन परत के नष्ट होने को रोकने से संबन्धित है।

15.4.2 संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम का योगदान :–

संयुक्त राष्ट्र तन्त्र में यह पर्यावरण के लिए आवाज का कार्य करता है। यह पृथ्वी की प्राकृतिक सम्पदा का बृद्धिमतापूर्वक प्रयोग करने के लए एक शिक्षक, उत्प्रेरक तथा सुविधा प्रदान करने वाले का कार्य करता है। यह संयुक्त राष्ट्र के अन्य कार्यक्रम, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन. सरकारी तन्त्र, गैर सरकारी संगठन, उद्योग, मीडिया तथा सिविल सोसायटी के साथ मिलकर कार्य करता है।

इसके निम्न खण्ड हैं जो कि सतत् विकास के लिए पर्यावरण प्रबन्धन करते हैं –

1. शीघ्र चेतावनी तथा आकलन खण्ड
2. नीतिगत विकास एवं नियम खण्ड
3. वातावरणीय नीति लागू करने वाला खण्ड
4. तकनीकी, व्यापार तथा आर्थिक खण्ड
5. क्षेत्रीय सहयोग खण्ड
6. संचार एवं लोग सूचना खण्ड
7. वैश्विक पर्यावरण समचय सुविधा खण्ड

इस संगठन के प्रयासों का परिणाम है कि कइ प्रकार की सन्धिया जैसे 1973 में CITES (Convention on international trade in endangered species of wild fauna and flora] 1979 मे Bonn convention on migratary species]1992 esa convention on biological diversity]2005Millennium ecosystem assessment प्रारम्भ हुआ।

इस कार्यक्रम का अधिकतर खर्च कई देशों द्वारा दिए जाने वाले दान एवं योगदान पर निर्भर रहता है। इस संस्थान को सबसे अधिक पैसा संयुक्त राज्य अमेरिका उसके बाद यूनाइटेड किंगडम, जर्मनी, जापान; नीदरलैण्ड आदि भुगतान करते है। यह संगठन कई प्रकार के प्रकाशन, मीडिया रिर्पोट, सर्वे आदि प्रकाशित करता है। विश्व पर्यावरण दिवस मनाता है तथा कुछ पुरस्कार जैसे सस्कावा पुरस्कार, चैम्पियन ऑफ अर्थ पुरस्कार आदि भी प्रदान करवाता है।

बोध प्रश्न-2

1. सयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम कब प्रारम्भ हुआ?
2. संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के कौन कौन से खंड हैं ?
3. संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम कौन कौनसे पुरस्कार देता है ?

15.5 वृक्षों के मित्र :–

15.5.1 वृक्षों के मित्र – एक परिचय –

Friends of Trees का हिन्दी में तथा संस्कृत में शाब्दिक अर्थ 'तारू मित्र' है, जो कि पृथ्वी के वातावरण को स्वस्थ रखने के लिए चलाया जा रहा छात्र आन्दोलन है। यह भारत के

बिहार राज्य के पटना स्थान से छात्रों द्वारा 1988 में प्रारम्म हुआ और आगे चलकर देश के विभिन्न क्षेत्रों के विद्यालयों एवं कॉलेजों में फैल गया। वर्तमान में इसके 200 विद्यालयों तथा कॉलेजों में 55000 सदस्य हैं

15.5.2 वृक्षों के मित्र – योगदान :–

इस संगठन में छात्रों के माध्यम से पर्यावरण के प्रति जागरूकता प्रारम्भ की, जो विद्यालयों व कॉलेजों के माध्यम से समाज में अपना स्थान बना पाया है। इस संगठन के प्रारम्भक में निम्न उद्देश्य थे –

1. पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता को फैलाना।
2. स्थानीय पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लए इसके सदस्य को सुविधाएँ एवं साधन देना।
3. जैव विविधता के संरक्षण के लिए चेतना यात्रा आयोजन करना।
4. विश्व में यह प्रसार करना तथा यह भावना फैलाना कि पृथ्वी हमारी मित्र है।

बोध प्रश्न-3

1. Friend of trees कब आरम्भ हुआ ?
2. Friend of trees के क्या उद्देश्य हैं?

15.6 गैर सरकारी संगठन :–

15.6.1 गैर सरकारी संगठन – एक परिचय :–

भारत सरकार आजादी के ठीक बाद से पर्यावरण के क्षेत्र में काफी ध्यान देने लग गई है। हालांकि इस सन्दर्भ में शुरुआत अंग्रेजों के शासनकाल से ही हो चुकी थी। सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों को गैर सरकारी संस्थान एक प्रकार से तीव्रता प्रदान करने का कार्य करती है। स्थानीय गैर सरकारी संस्थान तो इन्हें धरातल के लोगों तक पहुँचाते हैं। भारत में पर्यावरण के क्षेत्र में कई गैर सरकारी संस्थान कार्य कर रहे हैं जैसे - Bombay Natural History Society (1983), Center for Environment Education–CEE (1984), Center for Science & Education–CSE, Friends to Doon (1983), Green Future Foundation (1987), Kalpaviriksh (1971), Narmada Bachao Andolan(1986), Shristhi–Delhi (1988), Tarun Bharat Sangh (1984–85), World Wide fund for Nature (1969) & Vanrai (1982).

15.6.2 गैर सरकारी संगठनों का योगदान :–

देश के कई गैर सरकारी संस्थान स्थानीय स्तर पर पर्यावरण के क्षेत्र में कार्य कर आम जनता में जागरूकता फैला रहे हैं। इनके द्वारा किए गए कार्यो को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक सराहा गया है एवं कई संगठनों को तो पुरस्कार भी मिले हैं।

1. तरूण भारत संघ नामक गैर सरकारी संगठन राजस्थान के छः जिलों में कार्य कर रहा है। इसका मुख्यालय अलवर जिले के थानागाजी तहसील में है। यह सरिस्का टाइगर रिजर्व में संसाधनों के संरक्षण पर कार्य कर रहा है। यह जनहित याचिका के माध्यम से सरिस्का क्षेत्र में गैरकानूनी खनन को रूकवाने में कामयाब भी रहा है। हाल ही में इसके प्रमुख मैग्सेसे अवार्ड भी मिला है।

2. नर्मदा बचाओ आन्दोलन 1982 में मेधा पाटकर के नेतृत्व में प्रारम्म हुआ था, इसमें नर्मदा घाटी के बडे पैमाने पर वन रहे बडे बांधों के निर्माण का विरोध किया है। यह द्विमासिक पत्रिका 'नर्मदा समाचार' का प्रकाशन भी करता है। इसका मुख्यालय धूले, महाराष्ट्र में स्थित है।
3. कल्पवृक्ष 1971 में गठित हुआ था। प्रारम्म में इसने दिल्ली के Green Belt को नष्ट करने का विरोध किया था। इसके द्वारा भारत में Pesticide के उपयोग का अध्ययन, दिल्ली के वायु प्रदूषण का अध्ययन, देहरादून जिले के आसपास खनन गतिविधियों का अध्ययन आदि कार्य किए गए हैं। इसके द्वारा The Little Green Book का प्रकाशन हुआ तथा इसका मुख्यालय नई दिल्ली में स्थित है।
4. Centre for Science and Environment नई दिल्ली में स्थित गैर सरकारी संस्थान है जो प्रदूषण, वन, वन्य जीव, जल उपयोग आदि पर अनुसंधान एवं शैक्षणिक कार्य करता है। इसके द्वारा Down to Earth नामक पाक्षिक पत्रिका, कई रिपोर्ट्स एवं बच्चों की पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

बोध प्रश्न-4

1. तरुण भारत संघ किस क्षेत्र में कार्य कर रहा है?
2. Down to Earth पत्रिका कौनसा गैर सरकारी संगठन प्रकाशित करता है?

15.7 सरकारी संस्थान :–

15.7.1 सरकारी संस्थान–एक परिचय :–

भारत सरकार में स्वतन्त्र रूप से वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय (MOEF) का गठन 1985 में किया था। भारत सरकार का पर्यावरण एवं वन मंत्रालय देश में चल रहे पर्यावरण तथा वानिकी कार्यक्रमों की नोडल संस्था के रूप में कार्य करता है। यह पर्यावरण एवं वानिकी के विभिन्न कार्यक्रमों की योजना बनाता है, उनमें समन्वय करता है तथा उनके कार्यक्रमों के दूरगामी प्रभावों का ध्यान रखता है। केन्द्रीय स्तर पर इस मंत्रालय के संगठन में कई खण्ड, निदेशालय, स्वायत्तशासी संस्थान, मण्डल तथा सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठान आदि आती हैं।

15.7.2 सरकारी संस्थान का योगदान :–

केन्द्रीय स्तर पर समस्त पर्यावरण सम्बन्धी नीतियाँ तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर से उनका समन्वय करने का कार्य यही मंत्रालय करता है, इसमें सहयोग के लिए इसके अधिनस्थ कई स्वायत्तशासी संस्थान जैसे – केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड नई दिल्ली, राष्ट्रीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद देहरादून, भारतीय वन प्रबन्धन संस्थान भोपाल, National Bio Diversity Authority चेन्नई आदि काम करते हैं। इसके अतिरिक्त कई अधीनस्थ संस्थाएँ जैसे भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण (ZSI) कोलकाता, भारतीय प्राणी सर्वेक्षण (ISI) कोलकाता, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी देहरादून आदि भी कार्य कर रहे हैं। राज्य के स्तर पर भी पर्यावरण विभाग एवं मंत्रालय कार्य करते हैं। साथ ही सरकार ने पर्यावरण के अध्ययन एवं विकास के लिए कई परियोजनाएँ भी चला रखी हैं। प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल ही विभिन्न उद्योगों को अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी करता है, तब ही कोई उद्योग किसी क्षेत्र में लग सकता है।

यह मंत्रालय जागरूकता लाने के लिए वार्षिक रिर्पोट, पर्यावरण एबस्ट्रेट (Environment Abstract) वन नीतियाँ, जन्तु नीतियाँ आदि का प्रकाशन करता है। इस मंत्रालय द्वारा प्रत्येक 3 माह में एक Enviro News का प्रकाशन भी किया जा रहा है। सरकार द्वारा पर्यावरण के क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों, संस्थाओं, सरकारी कर्मचारी, नोडलों, स्वयं सेवको को इन्दिरा प्रियदर्शिनी वृक्ष मित्र पुरस्कार वार्षिक रूप से 1986 से दिए जा रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय ओजोन दिवस, पृथ्वी दिवस विश्व पर्यावरण दिवस तथा वानिकी दिवस भी मनाया जाता है।

बोध प्रश्न-5

1. भारत सरकार के पर्यावरण एवं मंत्रालय का गठन कब हुआ था?
2. किन्ही दो दिवसों के नाम लिखिए जो पर्यावरण के क्षेत्र में मनाए जाते है।

15.8 सारांश :–

आज समस्त संसार राजनैतिक. धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, विकास के स्तर, भौगोलिकता कई तरह से बंटा हुआ है, परन्तु पर्यावरण की समस्याऐं ऐसी हैं जिसमें किसी प्रकार का भेदभाव, सीमाएँ नहीं हैं, इससे समस्त जन समान रूप से प्रभावित होते हैं और तो और कई प्रभाव भावी पीढ़ियों को स्वत: ही प्राप्त हो जाते हैं। एक देश अगर पर्यावरण को नुकसान पहुंचाता है तो उसका खामियाजा समस्त जन को समान रूप से भुगतना पडता है। आज हम ग्लोबल वार्मिग, ओजोन परत के नष्ट होने, नष्ट होती प्रजातियों, जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता का क्षय होना आदि नुकसान को ही ले तो पता चलता है कि इससे पूरा विश्व प्रभावित है। जैसे–जैसे जनसंख्या एवं औद्योगिकरण बढ़ रहा है, यह सब समस्याएँ तीव्र गति से बढ़ रही हैं। इन सबका निदान गैर सरकारी संस्थान, सरकारी संस्थान एवं कई अन्तर्राष्ट्रीय संगठन मिलकर कर रहे हैं और अब तो इनके योगदान के परिणाम भी सामने आने लगे हैं।

15.9 स्व मूल्यांकन प्रश्न :–

1. संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम पर विस्तृत लेख लिखिए।
   Write a detail note on role of United Nation Environment Programme.
2. भारत में कार्य कर रहे किन्ही तीन गैर सरकारी संस्थानों के गठन एवं कार्य पर लेख लिखिए।
   Write a note on organization and function of any three NGO's working in India.
3. भारत में सरकार द्वारा पर्यावरण के क्षेत्र में किए जा रहे प्रयासों पर निबन्ध लिखिए।
   Write an essay on efforts of Indian government in the field of environment.

15.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Ecology and Environment - 2005, P.D.Sharma, Rastogi Publications, Meerut

2. Environment Science - 2004, S.C.Santra, New Central Book Agency (P) Ltd., Kolkata
3. परिस्थितिकी एवं पादप भूगोल – 2006, निरंजन शर्मा, पी.सी.त्रिवेदी, आर.एस.धनकर, रमेश बुक डिपो, जयपुर
4. www.moef.in
5. www.unep.org
6. http://www.cpcb.nic.in
7. http://www.tarumitra.org
8. http://www.panda.org

इकाई–16

The Need for Global Outlook to solve Environmental Problems

पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने हेतु विश्वस्तरीय प्रयासों की आवश्यकता

इकाई की रूपरेखा :

16.1 उद्देश्य

16.2 प्रस्तावना

16.3 पर्यावरण प्रदूषण क्या है

16.4 विश्वस्तरीय पर्यावरणीय समस्यायें

16.5 भूमण्डलीय ऊष्णता एवं हरित गृह प्रभाव

16.6 अम्ल वर्षा

16.7 ओजोन परत क्षरण

16.8 नाभिकीय प्रदूषण

बोध प्रश्न– 1

16.9 पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने की दिशा में किये गये विश्वस्तरीय प्रयास

16.10 सारांश

16.11 स्व मूल्यांकन प्रश्न

16.12 सन्दर्भ ग्रंथी सूची

16.1 उद्देश्य::–

पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने की विश्वस्तरीय आवश्यकता इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- पर्यावरण का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
- पर्यावरण प्रदूषण क्या है, समझ सकेंगे एवं परिभाषित कर सकेंगे।
- पर्यावरण प्रदूषण के कारणों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- विश्वस्तरीय पर्यावरण प्रदूषणों के प्रकारों का अवबोध कर सकेंगे।
- विश्वस्तरीय पर्यावरण प्रदूषणों के कारणों, को समझ कर उनकी तुलना कर सकेंगे।
- विश्वस्तरीय पर्यावरण प्रदूषणों के दुष्परिणाम एवं रोकने की दिशा अवबोध कर सकेंगे एवं दैनिक जीवन में ज्ञान का उपयोग कर सकेंगे।
- विश्वस्तरीय पर्यावरणीय प्रदूषणों के आपस में अर्न्तसम्बन्धों को समझते हुये उनकी तुलना कर सकेंगे।
- पर्यावरण प्रदूषणों की समस्या हेतु विश्वस्तर प्रयासों का ज्ञान प्राप्त कर उसका अवबोध कर सकेंगे।

16.2 प्रस्तावना :–

'पर्यावरण' शब्द का निर्माण दो शब्दों – परि + आवरण से हुआ है। इसका शाब्दिक अर्थ "बाह्य आवरण" अर्थात हमारे चारों ओर जो प्राकृतिक, भौतिक व सामाजिक आवरण है वही पर्यावरण कहलाता है।

भिन्न–भिन्न पर्यावरण विदों ने इसे परिभाषित किया है उनमें से कुछ निम्न है –

टॅन्सले के अनुसार– "प्रभावकारी दशाओं का वह सम्पूर्ण योग जिसमें जीव रहते हैं वातावरण कहलाता है।"

एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली के अनुसार -"व्यक्ति के पर्यावरण के अन्र्तगत वे समस्त प्राकृतिक व सामाजिक घटक आते हैं, जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से उसके जीवन और व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

फिटिगॅ के अनुसार - "जीवों के परिस्थितिकी कारकों का योग पर्यावरण है"

उक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है, कि मानव और प्रकृति एक दूसरे के पूरक हैं। पर्यावरण और सृष्टि एक दूसरे के अभिन्न अंग है, सृष्टि निर्माण के साथ ही ऐसे पर्यावरण का निर्माण हुआ, जो सृष्टि के सभी सजीव और वनस्पति के व्यक्तित्व को बनाये रखने के लिये आवश्यक है। प्रकृति निश्चित नियमों के अन्र्तगत कार्य करती है, उसके नियमों में किसी भी प्रकार का विघ्न पर्यावरण को बिगाड़ता है, और इसी बिगड़े सन्तुलन को पर्यावरण प्रदूषण कहा जाता है।

आईये, अब जानें की पर्यावरण प्रदूषण क्या है?

16.3 पर्यावरण प्रदूषण क्या है?

अमरीकी राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी के अनुसार : 'प्रदूषण जल, वायु या भूमि के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में होने वाला कोई भी अवांछनीय परिवर्तन है, जिसमें मनुष्य, अन्य जीवों, औद्योगिक प्रक्रियाओं या सांस्कृतिक तत्व तथा प्राकृतिक संसाधनो की हानि हो या होने की संभावना हो। प्रदूषण में वृद्धि का कारण मनुष्य द्वारा वस्तुओं के प्रयोग करने के बाद फैंक देने की प्रवृति और मनुष्य की बढ़ती जनसंख्या के कारण आवश्यकताओं में वृद्धि है।"

एम.वाल्टर के अनुसार : "प्रदूषण पर्यावरण में पायी जाने वाली अवांछित अपद्रव्यताएँ होती हैं। तात्पर्य है, कि प्रदूषण प्राकृतिक तत्तवों एवं क्रियाओं में व्यक्ति या मानव के हस्तक्षेप का परिणाम है।

भूमण्डलीकरण के दौर में बढ़ती उपभोक्तावाद संस्कृति ने स्वर्ग समान पृथ्वी को नरकमय बना दिया है। वैश्वीकरण के दौर में आज पर्यावरण प्रदूषण भी किसी एक देश की सीमा से बँधा हुआ नहीं है। उदाहरणार्थ किसी एक देश की भौगोलिक सीमा में प्रवाहित हो रही नदी का स्त्रोत यदि पडौसी देश में है, तो उस स्त्रोत पर होने वाले प्रदूषण से दूसरा देश कैसे अप्रभावित रह सकता है।

16.4 विश्वस्तरीय पर्यावरणीय समस्यायें :–

किसी विकसित देश की सीमा पर लगा कोई आणविक स्त्रोत अपने प्रदूषण से पड़ौसी देश के पर्यावरण को प्रभावित करेंगे। अत: आज पर्यावरण प्रदूषण व्यक्ति विशेष, राज्य विशेष, देश से जुड़ी समस्या नहीं है, वरन् सम्पूर्ण विश्व की समस्या है, जिसका समाधान भी विश्वस्तरीय आयश्यकता एवं दृष्टिकोण को रखते हुये होना चाहिये।

पर्यावरण प्रदूषण के वैश्विक एवं दीर्घकालिक प्रभाव है जिनमें से मुख्य प्रभाव निम्न है -

(1) भूमण्डलीय ऊष्णता एवं हरित गृह प्रभाव

(2) अम्ल वर्षा

(3) ओजोन परत का विघटन

(4) नाभिकीय प्रदूषण

अब हम पर्यावरण प्रदूषण की इन विश्वस्तरीय समस्या का विस्तृत बिन्दुवार अध्ययन करेंगे : –

16.5 भूमण्डलीय उष्णता एवं हरित गृह प्रभाव :–

आक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार - "वायुमण्डल में मानव जनित कार्बन डाईआसाइड के आवरण प्रभाव (Blanketting effect) के कारण पृथ्वी की सतह की प्रगामी तापन (Progressive warming) को "हरित गृह प्रभाव" कहते हैं।" वायुमण्डल में हरित गृह प्रभाव के बढ़ने के साथ–साथ पृथ्वी का तापमान भी बढ़ा है जिससे भूमण्डलीय उष्णता भी बढी है।

हरित गृह प्रभाव क्या है?

पर्यावरण प्रदूषण के बढ़ने के कारण वायुमण्डल में कार्बनडाईआक्साइड (CO_2) की भी वृद्धि हुई है। वायुमण्डल में अधिकतम मात्रा में कार्बन ऑक्साइड घरेलू तापन हेतु जीवाश्म ईधन के उपयोग से, शक्ति संयंत्रों से, उद्योगों आदि से निकलती है, क्योंकि वायुमण्डल के क्षोभमंडल में CO_2 की मात्रा निश्चित है, अत: इसकी उच्च सान्द्रता गंभीर प्रदूषक की तरह कार्य करती है। कार्बनडाईआक्साइड की उच्च सान्द्रता के कारण इस गैस की परत मोटी हो जाती है, जिसके फलस्वरूप धरती की सतह से परावर्तित किरणों द्वारा उत्सर्जित होने वाली तापीय ऊर्जा का उत्सर्जन नहीं हो पाता इसी को हरित गृह प्रभाव (Green House effect) कहते हैं। इस प्रकार अधिकतम ऊष्मा, CO_2 परत और जल वाष्पों द्वारा वायुमण्डल में अवशोषित हो जाती है, जो उस ऊष्मा में, जो पहले से उपस्थित है जुड़ती है जिसका दुष्परिणाम होता है, तापमान में वृद्धि। वायुमण्डल में लगभग 100 वर्ष पूर्व CO_2 का स्तर 275 PPM है और वैज्ञानिको के अनुसार वर्ष 2035 से 2040 के मध्य इसका स्तर 450 PPM तक पहुँचने की सम्भावना है। वर्तमान को दृष्टिगत रखते हुये कल्पना की जा सकती है की आने वाले वर्षो में पृथ्वी का तापमान कितना अधिक् बढ़ चुका होगा।

हरित गृह प्रभाव (Green House effect) को सर्वप्रथम फ्रांसीसी गणितज्ञ ए. फोरिएट ने 1827 में पहचाना, तत्पश्चात् सन् 1951 में वैज्ञानिक आर.आर. रवेल ने पुन: स्थापित किया।

वायु मण्डल में हरित गृह प्रभाव (Green House effect) बढ़ने के साथ साथ तापमान बढ़ने के कारण पारिस्थितिक तन्त्र पर दुष्प्रभाव पडता है, जिसके कारण मानव सहित जन्तुओं एवं पौधों के लिये अतिसंकटमय परिस्थिति उत्पन्न होगी और उनका अस्तित्व संकट में पड जायेगा।

भूमण्डलीय उष्णता एवं हरित गृह प्रभाव :–

- वैज्ञानिक आकलन के अनुसार CO_2 19वीं शताब्दी के मध्य तक 25 प्रतिशत बढ़ी है तथा 2030 ईसवी तक दुगुनी होने की संभावना है।

- वैज्ञानिकों के विश्लेषण के अनुसार वर्ष 2050 तक पृथ्वी का तापमान 1.5 से 4.5^0C तक बढ़ेगा। तापमान में वृद्धि के कारण ग्रीनलैण्ड, नार्वे, स्वीडन, फिनलैण्ड, साइबेरिया, अलास्का जैसे प्रदेशों में बर्फ गलेगी। ध्रुवीय बर्फ छत्रक भी गलेगा।
- तापमान में वृद्धि समुद्रीय जल स्तर को बढ़ायेगी।
- अमेरिकन वैज्ञानिक जार्ज गुडबिलक के अनुसार भारत में मानसून वर्षा कम हो सकती है।
- महासागरों की जल सतह में 200 फीट जल की अधिकता के कारण बैंकाक, वेनिस जैसे शहरों के डूब जाने की संभावना है। भारत में इसका प्रभाव पश्चिमी बंगाल जैसे प्रदेशों पर पड़ेगा।
- नाइट्रोजन के आक्साइड प्रकाश रासायनिक क्रिया द्वारा सौर रासायनिक घूम कोहरा (Smoog) बनाते हैं, जो मानव स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है।
- हरित गृह प्रभाव (Green House effect) के कारण चक्रवात और पूर्व हिम गलन की संभावना अधिक है।
- पृथ्वी की सतह पर पराबैंगनी किरणों की अधिकता के कारण मानव स्वास्थ्य को खतरे बढ़ेगें। पृथ्वी की जैव विविधता पर संकट की छाया बढ़ जायेगी। कई पादप व जन्तु जातियाँ लुप्त हो जायेंगी
- जिसके कारण पारिस्थितिकी चक्र प्रभावित होगा।
- ठंडे स्थानों पर पाये जाने वाले पादपों व जन्तुओं का अस्तित्व खतरे में आ जायेगा।
- जन्तु व पादपों के सामान्य लक्षणों में परिवर्तन आ जायेगा। अप्रत्याक्षित अनूकूलन पैदा हो जायेंगे।

अब तक आप समझ चुके होंगे कि हरित गृह प्रभाव के प्रमुख प्रभाव क्या है और भूमंडलीय उष्णता एवं हरित ग्रह प्रभाव के क्या संभावित दुष्परिणाम हो सकते हैं।

16.6 अम्ल वर्षा :–

आइये, अब हम विश्वस्तरीय पर्यावरण प्रदूषण की एक और प्रमुख समस्या का अध्ययन करते हैं, जो कि अम्लीय वर्षा (Acid Rain) कहलाती है।

चलिये, सबसे पहले समझते हैं अम्लीय वर्षा क्या है?

अम्ल वर्षा : अम्ल वर्षा, वायु प्रदूषण व वाहनों के धुएँ से होने वाले प्रदूषण का ही एक प्रभाव है। सामान्य वर्षा जल की पी.एच. (P^H) उदासीन अर्थात 7 होती है। इससे अधिक पी.एच. होने पर जल क्षारीय व कम होने पर अम्लीय जल कहलाता है।

कोयले व पेट्रोलियम ईधन, के दहन के फलस्वरूप वायुमण्डलीय असंतुलन पैदा होता है और सल्फर डाईऑक्साइड (SO_2) नाइट्रिक ऑक्साइड (NO) तथा नाइट्रोजन आक्साइड (NO_2), की मात्रा अप्रत्याक्षित रूप से बढ़ जाती है और वायुप्रदूषण उत्पन्न होता है, सल्फर डाई आक्साइड वायुमण्डलीय गैस से क्रिया कर सल्फर ट्राईआक्साइड का निर्माण करती है जो की वाष्प कणों से मिल कर सल्फ़्यूरिक अम्ल या गंधक का अम्ल (H_2SO_4) का निर्माण करता है जबकि नाइट्रोजन डाई आक्साइड जल वाष्प से मिलकर नाइट्रिक अम्ल या शोरे का अम्ल (HNO_3) बनाता है। यह अम्ल, वर्षा के जल के साथ जब पृथ्वी पर पहुँचते है तो अम्ल वर्षा (Acid Rain) कहलाता है। राबर्ट एंगस स्मिथ (1872) ने सर्वप्रथम अपनी पुस्तक ''एयर एण्ड रेन : दि बिगिनिंग्स आफ ए

केमिकल क्लाइमेटोलाजी'' में Acid Rain का नामकरण किया था। यह समस्या सर्वप्रथम 1958 में यूरोप के कुछ भागों में देखी गई थी। सन् 1962 में जर्मनी के कुछ भागों में अम्लीय वर्षा हुई थी।

अब तक आप समझ चुके होंगे कि अम्ल वर्षा (Acid Rain) क्या है?

आइये, अब उन कारणों को समझने का प्रयास करते हैं जिनके कारण अम्ल वर्षा (Acid Rain) होती है।

अम्ल वर्षा के कारण :–

- विकसित एवं विकासशील देशों में बढ़ती वाहनो की संख्या इसका प्रमुख कारण है।
- बढते औद्योगिकीकरण के फलस्वरूप कारखानों से निकलने वाला औद्योगिक धुआँ वायुमण्डल SO_2, NO_2 आदि गैसों के स्तर को बढ़ाता है।
- भूमि पर घटते वन भी अम्लीय वर्षा का कारण है।
- बढ़ती जनसंख्य कारण जीवाश्मीय ईधन का अंधाधुंध उपयोग भी अम्लीय वर्षा के लिये उत्तरदायी गैसों के स्तर को बढ़ाता है।

आईये, अब अम्लीय वर्षा (Acid Rain) के दुष्प्रभावों को भी जान लेते हैं।

- अम्लीय वर्षा से मृदा में उपस्थित नाइट्रोजन अपघटनकारी जीवाणु नष्ट हो जाते हैं, जिसके फलस्वरूप वायुमण्डलीय नाइट्रोजन की कमी हो जाती है।
- मृदा उर्वरता में कमी आ जाती है।
- मृदा उर्वरता में कमी आने के कारण सकल अनाज उत्पादकता में कमी आती है।
- पादपों की प्रकाश सश्लेषण सक्रियता घट जाती है।
- अम्लीय वर्षा की निरन्तरता के कारण जलीय स्त्रोतों में जल की p^H अत्यधिक गिर जाती है, इसे अम्ल सदमा (Acid Shock) कहते हैं।
- अम्लीय जल के सेवन से हड्डीयाँ कमजोर हो जाती है, गुर्दे व मस्तिष्क से सम्बन्धित रोगो की संभावना बढ़ जाती है।
- अम्ल वर्षा के कारण नार्वे व स्वीडन की अधिकांश झीलें जैविक दृष्टि से ''मृत झील'' हो गई है।
- जलीय व स्थलीय परिस्थितिकी तन्त्रों में असंतुलन पैदा हो जाता है।
- प्राचीन इमारतों का क्षरण होता है जो "स्टोन कैन्सर'' कहलाता है।
- मानव के विभिन्न अंगो में केन्सर होने की संभावना बढ़ जाती है।

अब तक आप जान चुके होगे कि अम्ल वर्षा मानव व पादपों के लिये कितनी हानिकारक है। विश्व स्तर पर 'अम्ल वर्षा' पर्यावरण प्रदूषण की एक प्रमुख समस्या है। आइये, अब जानते है इस विश्वव्यापी पर्यावरण प्रदूषण समस्या के समाधान हेतु संभावित उपाय :–

- दैनिक जीवन में जीवाश्मीय ईधन के उपयोग को न्यूनतम करना चाहिये।
- अधिक से अधिक वृक्षारोपण करना चाहिये।
- जनसंख्या नियंत्रण किया जाना चाहिये।
- अम्लीय झीलों में क्षारीय पदार्थ प्रवाहित करके जल की अम्लीयता कम की जा सकती है।
- कल–कारखानों की चिमनी में फिल्टर लगाये जाने चाहिये।
- वातावरणीय प्रदूषण पर नियंत्रण किया जाना चाहिये।

अब तक आप पर्यावरण प्रदूषण दो प्रमुख समस्यायें हरित गृह प्रभाव और अम्ल वर्षा को जान और समझ चुके हैं, आने वाले बिन्दु में हम ओजोन परत क्षरण समस्या को समझेंगे।

16.7 ओजोन परत क्षरण :–

''ओजोन'' शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा से है जिसका अर्थ है सूँघना। वायुमण्डल के समताप मण्डल में 15 से 25 किमी. की ऊँचाई पर पाई जाने वाली हल्के नीले रंग की गैसीय परत है। इस परत को सुरक्षा छतरी या ओजोन परत कहते हैं। युह सुरक्षा छतरी वायुमंडल में प्रवेश करने वाली पैराबैगनी किरणो को अवशोषित कर उन्हें पृथ्वी तक आने से रोकती है। 'ओजोन (O_3) की खोज जी.एम.वी. डाब्सन नामक वैज्ञानिक ने की, और उन्हीं के नाम पर इसकी माप इकाई को "डाब्सन" युनिट कहा गया। पैराबैंगनी किरणों के अवशोषण के साथ ओजोन परत ऊष्मा प्रदान करने वाली अरक्त किरणों को भी पृथ्वी तक पहुँचने से रोकती है और पृथ्वी का ताप संतुलित रहता है।

ओजोन परत क्षरण के कारण :–

- ओजोन परत क्षरण का मुख्य कारण क्लोरो–पलोरो कार्बन (CFC) गैस है। CFC का एक अणु ओजोन के कई हजार अणुओं को नष्ट करता है।
- जैट वायुयानों में जलने वाले इंधन से निकलने वाली नाइट्रिक आक्साइड गैस भी ओजोन परत क्षरण के लिये उत्तरदायी है।
- उर्वरक कारखानें विशेष रूप से नाइट्रोजन उर्वरक निर्माण कारखाने भी ओजोन परत क्षरण का कारण है।
- मानव के अधिक सुविधायोगी क्रियाकलाप जैसे प्लास्टिक उत्पाद, रेफ्रीजरेटर, वातानूकुलित उपकरण जो कि CFC गैस अत्यधिक छोड़ने के उपयोग के कारण।
- ध्रुवीय चक्रवात भी ओजोन परत क्षरण का कारण है।
- परमाणु केन्द्रों से निकलने वाले रेडियोधर्मी विकिरण भी ओजोन परत क्षरण का प्रमुख कारण है।
- वायुमण्डल में कार्बन ट्रेटा क्लोराइड, मिथाइल क्लोरोफार्म ब्रोमोपलोरो कार्बन की सान्द्रता बढ़ना।

ओजोन परत क्षरण के दुष्प्रभाव :–

- ओजोन परत के क्षरण के कारण पराबैगनी किरणें पृथ्वी पर पहुँचती है और मनुष्य में त्वचा केंसर की संभावना को बढ़ाती है।
- ओजोन जन्तुओं और पादपों की उपापचयी क्रियाओं पर प्रभाव डालती है, जिससे इनके अस्तित्व को खतरा महसूस होने लगा है।
- ओजोन की मात्रा पादपों की प्रकाशसश्लेषी क्रियाओं पर प्रभाव डालती हे जिससे फसल उत्पादन क्षमता प्रभावित होती है।
- सम्पूर्ण पारिस्थितिकी तन्त्र पर ओजोन परत क्षरण का दुष्प्रभाव पड रहा है।
- अति सूक्ष्म जीवों के नष्ट होने के कारण जैव विघटन से जो प्रदूषण नष्ट होता है वह नहीं हो पाता है।
- पराबैगनी किरणों की अधिक मात्रा पादप उत्परिवर्तन उत्पन्न करती है।

- ओजोन परत क्षरण से प्रकाश रासायनिक कोहरा तथा अम्ल वर्षा (Acid Rain) होने की संभावना बढ़ जाती है।

ओजोन परत क्षरण रोकने के संभावित उपाय : –

- वृक्षारोपण अधिक से अधिक किया जाये।
- क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) के विकल्प को खोजा जाये।
- सीसा रहित पेट्रोल के उपयोग का प्रचार किया जाये।
- ऐसे उपकरण जिनमें (CFC) का उपयोग किया जाता है, उनके प्रयोग को हतोत्साहित किया जाये।
- "मोंट्रियल प्रोटोकोल". का सख्ती से पालन किया जाये।
- कपडों की ड्राईक्लीनिंग को प्रोत्साहन नहीं दिया जाये।
- फोम के गद्दे तकियों के स्थान पर रुई के गद्दे तकियों को काम में लिया जाना चाहिये।
- "ओजोन सुरक्षा दिवसं" (5 अक्टूबर) व अन्तर्राष्ट्रीय ओजोन दिवस (16 सितम्बर) के माध्यम से भी ओजोन परत क्षरण के प्रति जन जन तक जागृति उत्पन्न की जानी चाहिये।

16.8 नाभिकीय प्रदूषण :–

सबसे पहले जानते हैं कि नाभिकीय प्रदूषण क्या है?

नाभिकीय प्रदूषण :–

एच.पी. जेमर ने इसे परिभाषित करते हुए लिखा है "पर्यावरण में प्राकृतिक विकिरण के बढ़ने को रेडिओधर्मी प्रदूषण कहते हैं"।

एक अन्य परिभाषा के अनुसार "नाभिकीय पदार्थो की क्रियाशीलता द्वारा हुये प्रदूषण को रेडिओधर्मी प्रदूषण कहते हैं"।

रेडियोधर्मी या नाभिकीय प्रदूषण अन्य सभी प्रकारों के प्रदूषणों से सर्वाधिक हानिकारक होता है। रेडियोधर्मिता की मात्रा गत चार दशकों में सर्वाधिक बढ़ी है। इसका दुष्प्रभाव सर्वप्रथम जापान के हिरोशिमा और नागासाकी शहर में द्वितिय विश्वयुद्ध के दौरान डाले गये परमाणु बम के दौरान देखा गया। इसके विध्वंसात्मक कार्यो का तात्कालिक प्रभाव तो विनाशकारी था, किन्तु दीर्घकालिक प्रभाव तो अत्यधिक भयावह रहे, आज भी इनके विकिरणों के फलस्वरूप, नई संततियाँ अपंग, अपूर्ण व विकृत उत्पन्न हो रही है, साथ ही अन्य बिमारियाँ भी पैदा हुई है।

विकिरण के स्त्रोत प्रकृति में भी उपस्थित है। निश्चित सीमा तक विकिरण मानव सहन कर सकता है, सीमा से अधिक विकिरण प्रदूषण का कारण बनता है। प्रकृति में भूगर्भीय चट्टानों में अनेक रेडियोएक्टिव तत्व जैसे यूरेनियम, थोरियम आदि रेडियोधर्मी प्रदूषण के स्त्रोत हैं। मानवीय स्त्रोत में परमाणु बम, नाभिकीय रिएक्टर, नाभिकीय संलयन, एक्स–रे आदि इसके स्त्रोत हैं।

अब तक आप समझ चुके होंगे कि –

रेडियोधर्मी या नाभिकीय प्रदूषण क्या है? इन प्रदूषण का स्त्रोत क्या है?

चलिये, अब यह जानने और समझने का प्रयास करते हैं कि रेडियोधर्मी या नाभिकीय प्रदूषण का कारण क्या है :–

नाभिकीय प्रदूषण के कारण :–

- परमाणु अस्त्रों के परीक्षण के पश्चात् वायुमण्डल में जो रेडियोएक्टिव धूल हो कर पृथ्वी पर गिरती है उसे ''रेडियो एक्टिव फाल आउट'' कहते हैं, जो अन्य पास के वातावरण में नाभिकीय प्रदूषण उत्पन्न करती है।
- परमाणु ऊर्जा उत्पादन में भी नाभिकीय प्रदूषण फैलने की संभावना होती है।
- कई देशों में खनन कार्य, नहरों को खोदने के लिये परमाणु ऊर्जा का उपयोग भी नाभिकीय प्रदूषण का कारण होता है।
- रेडियो एक्टिव अपशिष्ट पदार्थो का उचित निस्तारण नहीं होना भी नाभिकीय प्रदूषण का प्रमुख कारण है।

आइये, अब जानें कि नाभिकीय प्रदूषण के संभावित दुष्परिणाम क्या हो सकते हैं –

- जन्तुओं और पादपों में अवांछनीय उत्परिवर्तन होते हैं, जिनके दीर्घकालीन हानिकारक प्रभाव होते हैं।
- मानव में कैन्सर व अन्य आनुवांशिक रोग उत्पन्न हो सकते हैं।
- परमाणु बिजलीघरों में संयंत्रों को ठण्डा करने के लिये अधिक पानी की आवश्यकता होती है जल प्रदूषण का कारण बनती है।
- नाभिकीय प्रदूषण से पृथ्वी के तापमान में वृद्धि होती है।
- नाभिकीय प्रदूषण के कारण वन, फसलों, प्राकृतिक ईधन के संग्रह केन्द्र नष्ट हो सकते हैं।
- शिशु विकलांगता का एक प्रमुख कारण है।

ऊपर लिखे बिन्दुओं से स्पष्ट हो चुका होगा की नाभिकीय प्रदूषण के संभावित दुष्परिणाम क्या हैं?

आइये, अब ये जानने और समझने का प्रयास करते हैं कि नाभिकीय प्रदूषण रोकने के उपाय क्या हैं:–

नाभिकीय प्रदूषण को रोकने के उपाय : –

- विश्व शांति प्रयासों को बढ़ाते हुये अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर परमाणु बमों के निर्माण एवं उपयोग का रोकने की दिशा में उचित प्रयास किये जाने चाहिये।
- किसी भी प्रकार के जल स्त्रोतों नदी, समुद्र में परमाणु परीक्षणों पर रोक लगाने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किया जाना चाहिये।
- नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों का रखरखाव उचित ढंग से किया जाना चाहिये।
- नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों से निकलने वाले रेडियोधर्मी अपशिष्ट पदार्थ के निस्तारण की उचित व्यवस्था होनी चाहिये।
- चिकित्सा क्षेत्र में ऐसी अनावश्यक जाँचों को कम कराया जाना चाहिये जिनमें रेडियोएक्टिव तत्व कम काम में लिये जाते हैं जैसे एक्स–रे, सोनोग्राफी आदि।
- गर्भवती महिलाओं और शिशुओं को यथा सम्भव ऐसे स्त्रोतों से दूर रखा जाना चाहिये।
- नाभिकीय संयंत्रों में कार्य करने वाले व्यक्तिओं की सुरक्षा हेतु आवश्यक उपाय जैसे विशेष मास्क, सूट, बूट, दस्तानों आदि की व्यवस्था की जानी चाहिये।
- नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र आबादी से दूर स्थित होने चाहिये तथा आस पास रहने वाले व्यक्तिओं को आपातस्थिति के लिये प्रशिक्षित किया जाना चाहिये।
- नाभिकीय पदार्थो के खनन हेतु गीली विधि काम में ली जानी चाहिये।

- रेडियोएक्टिव पदार्थो का संग्रहण, उपयोग व स्थानान्तरण प्रशिक्षित व्यक्तिओं द्वारा किया जाना चाहिये।

बोध प्रश्न-1

1. पर्यावरण प्रदूषण से अभिप्राय है?

   ……

2. हरित गृह प्रभाव लतममद भ्वनेम मोमेवज किसे कहते हैं?

   ……..

3. अम्ल वर्षा (Acid Rain) का प्रमुख कारण क्या है?

   ……

4. ओजोन परत क्षरण के दो प्रमुख कारण लिखिये।

   ……

5. नाभिकीय प्रदूषण रोकने के दो मुख्य उपाय लिखें।

   ……

16.9 पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने की दिशा में किये गये विश्वस्तरीय प्रयास : –

आगे के बिन्दुओं में हम इस भूमंडलीय समस्या के समाधान हेतु विश्वस्तरीय प्रयासों का अध्ययन करेंगे।

पर्यावरण प्रदूषण एक बडी समस्या है, इन प्रदूषणीय समस्याओं की भयावता और इनके विश्वस्तरीय प्रभावों को देखते हुये विश्व स्तर पर इन समस्याओं का समाधान करने की दिशा में किये गये कुछ प्रयास निम्न है :–

(1) टोरेन्टो विश्व सम्मेलन : सन् 1988 में हरित गृह गैसों के प्रभाव के बारे में अध्ययन हेतु कनाडा में टोरेन्टो वर्ल्ड कान्फरेन्स का आयोजन किया गया इसके अर्न्तगत 2005 ई. तक CO_2, के उत्सर्जन में 20 प्रतिशत कटौती के लिये आग्रह किया गया ताकि हरित गृह गैसों के प्रभाव को कम करने की दिशा में प्रयास किया जा सके, किन्तु इसके निर्णयों और सुझावों के क्रियान्वयन में कुछ व्यवहारिक कठिनाईयाँ है।

(2) क्योटो नवाचार : हरित गृह गैसों के दुष्प्रभाव से बचने के लिये एवं विश्वस्तरीय प्रयासों के अन्तर्गत 1977 में जापान के क्योटो शहर में सम्मेलन आयोजित किया गया इसका मुख्य बिन्दु विकासशील देशों के लिये आब(कर उत्सर्जन लक्ष्य निर्धारित करना था।

(3) स्टाक होम सम्मेलन : विश्व स्तर का पर्यावरण शिखर सम्मेलन सन् 1972 में स्वीडन के स्टाक होम शहर में हुआ यह पर्यावरण प्रदूषण की समस्या समाधान की दिशा में पहला कदम था। इसमें 119 देश सम्मिलित हुये और इसके घोषणा पत्र में 26 सिद्धान्त सम्मिलित किये गये। इसमें जैव मण्डल की सुरक्षा विभिन्न प्रतिबन्ध, दोहन एवं विकास के नियम निर्धारित किये गये। इसी के आधार पर 5 जून को पर्यावरण दिवस मनाया जाता है। स्टाक होम सम्मेलन में पारित घोषणा पत्र को ''पर्यावरण का मैग्नाकाकार्टा.'' कहा जाता है।

(4) दिल्ली सम्मेलन : सन् 2002 में पर्यावरण संरक्षण पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन जोहान्सबर्ग में आयोजित किया गया। यह सम्मेलन मुख्य रूप से पोषणीय विकास के सम्बन्ध में विचार विमर्श के उद्देश्य से आयोजित किया गया था, परन्तु विश्व समुदाय के असहयोग के कारण यह विफल घोषित कर दिया गया। तत्पश्चात् संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में नई दिल्ली में आयोजित किया गया जिसमें विश्व के 165 देशों ने भाग लिया इसका मुख्य उद्देश्य ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करने हेतु क्योटो संधि का क्रियान्वयन था।

(5) हेबिटाट सम्मेलन 1976 : संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (United Nations Environment Programme) के अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्र द्वारा इस सम्मेलन का आयोजन किया गया इसके घोषणा पत्र के अनुसार सभी पर्यावरणीय संसाधनों का अनुचित विदोहन समाप्त करने वाले देशों का सम्मिलित रूप से कार्य करना होगा।

(6) नैरोबी सम्मेलन 1982 : इस सम्मेलन का आयोजन स्टाक होम सम्मेलन 1972 के दस वर्ष पश्चात् नैरोबी में 1982 में किया गया। इसमें 105 देशों ने भाग लिया। सम्मेलन में घोषणा को "नैरोबी घोषणा" कहा गया जिसके अन्तर्गत गरीबी दूर करने, विश्व शांति बढ़ाने, प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को रोकने, परम्परागत ग्रामीण प्रणाली को आधुनिक बनाने हेतु एवं पर्यावरण प्रदूषण रोकने हेतु सम्मिलित प्रयासों जैसे बिन्दुओं पर विचार विमर्श किया गया।

(7) वियना सम्मेलन 1985 ओजोन परत क्षय को रोकने एवं ओजोन परत संरक्षण हेतु इस सम्मेलन का आयोजन किया गया।

(8) संयुक्त राष्ट्र जलवायु संरचना अभिसमय 1992. 9 मई 1992 को न्यूयार्क में इस अभिसमय को स्वीकार किया गया। इसका प्रमुख उद्देश्य CO_2 एवं मानव निर्मित गैसों के उत्सर्जन को सीमित करना था विशेष रूप से उन गैसों को जो हरित गृह प्रभाव (Green House effect) को बढ़ाते हैं। वर्तमान में यह अन्तर्राष्ट्रीय विधि का एक भाग है।

(9) ओजोन परत संरक्षण वियना अभिसमय ।।, 1985 : इस अभिसमय का प्रमुख उद्देश्य ओजोन परत संरक्षण की दिशा में विश्वस्तरीय प्रयास करने की दिशा में कदम बढ़ाना था।

(10) इन्टरनेशनल बायोलोजिकल प्रोग्राम (आई.बी.पी). यह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संचालित कार्यक्रम है जिसका प्रमुख कार्य उत्पादकता के जीवीय आधार पर मानव कल्याण से सम्बन्धित शोध कार्य को बढ़ावा देना है।

(11) मैन एण्ड बायोस्फीयर प्रोग्राम (एम.ए.बी.) : यह कार्यक्रम यूनेस्को द्वारा सन् 1970 में प्रारम्भ किया गया इसका प्रमुख उद्देश्य मनुष्य की क्रियाओं तथा पर्यावरण के मध्य होने वाली अन्तर्क्रियाओं के कारण उत्पन्न समस्याओं के समाधान व प्रबन्धन की दिशा में कार्य करना है।

(12) इंटरनेशनल यूनियन ऑफ कंजरवेशन ऑफ नेचर एण्ड नेचुरल रिसोर्स (I.U.C.N.) इस संस्था का प्रमुख कार्य पर्यावरण संरक्षण की वैज्ञानिक तकनीकों एवं समाधानों का

अन्तराष्ट्रीय स्तर पर प्रदर्शन कर आर्थिक सहायता देना एवं जानकारी का विभिन्न देशों के मध्य आदान प्रदान करना है।

(13) साइन्टिफिक कमेटी ऑन प्रोबलम्स ऑफ इनवायरनमेन्ट सन् 1969 में ICSU द्वारा इसका गठन किया गया इसका प्रमुख उद्देश्य मानवीय क्रियाओं के फलस्वरूप पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों, विकिरणों की जानकारी देना है।

(14) रियो सम्मेलन 1992 : सन् 1992 में ब्राजील के रियो के रियो डी जैनीरो शहर में सयुंक्त राष्ट्र द्वारा पर्यावरण एवं विकास सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसको पृथ्वी सम्मेलन (Earth Summit) भी कहते हैं। इसमें 17 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें हरित गृह प्रभाव, ओजोन परत क्षय, बढ़ती जनसंख्या, प्रदूषण से रोकथाम जैसे विषयों पर विचार विमर्श हुआ। इसके अर्न्तगत "पर्यावरण कोष" की स्थापना की गई जिसके अर्न्तगत विकसित देशों को अपनी आय का 0.7 प्रतिशत जमा कराने की व्यवस्था की गई।

16.10 सारांश :–

भूमण्डलीकरण के दौर में बढ़ती उपभोक्तावाद संस्कृति ने स्वर्ग समान पृथ्वी को नरकमय बना दिया है। वैश्वीकरण के दौर में आज पर्यावरण प्रदूषण भी किसी एक देश की सीमा से बँधा हुआ नहीं है। उदाहरणार्थ किसी एक देश की भौगोलिक सीमा में प्रवाहित हो रही नदी का स्त्रोत यदि पड़ौसी देश में है, तो उस स्त्रोत पर होने वाले प्रदूषण से दूसरा देश कैसे अप्रभावित रह सकता है।

किसी विकसित देश की सीमा पर लगा कोई आणविक स्त्रोत अपने प्रदूषण से पडौसी देश के पर्यावरण को प्रभावित करेंगे। अत: आज पर्यावरण प्रदूषण व्यक्ति विशेष, राज्य विशेष, देश से जुडी समस्या नहीं है, वरन सम्पूर्ण विश्व की समस्या है, जिसका समाधान भी विश्वस्तरीय आवश्यकता एवं दृष्टिकोण को रखते हुये होना चाहिये।

16.11 स्व मूल्यांकन प्रश्न

1. टोरेन्टो विश्व सम्मेलन किस पर्यावरणीय समस्या हेतु हुआ था?

……

2. दिल्ली सम्मेलन का प्रमुख उद्देश्य क्या था?

……

3. ओजोन परत संरक्षण हेतु कब और कहाँ सम्मेलन का आयोजन किया गया?

……

4. रियो सम्मेलन की प्रमुख उपलब्धि क्या थी?

……

16.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

- Conner, David, (1994) : Managing the Environment with Rapid Industrialisation. OECD, Paris

- Khanna, Gopesh Nath (1990) : Environment Problems & United Nations, Ashish Publishing House, New Delhi.
- Kothari, Ashish (1997) Understanding Biodiversity, New Delhi; Orient Longman
- Patras, J., and Veltemeyer. H. (2001): Globalisation Unmarked, Madhyam Books.
- Purohit and Agarwal, (2005) : Ecology & Environmental Biology. Agro Bios Publication, Jodhpur

ISBN - 13/978-85-8496-336-6